

[४२] दशवैकालिक-सूत्रम्

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरुभ्यो नमः

“दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं चूर्णिः

[मूलं + भद्रबाहुस्वामी कृत् निर्युक्तिः + भाष्यगाथाः + जिनदासगणि रचिता चूर्णिः]

[आद्य संपादकः - पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म. सा.]

(किञ्चित् वैशिष्ट्यं समर्पितेन सह)

पुनः संकलनकर्ता → मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि)

01/02/2017, बुधवार, २०७३ महा शुक्ल ५

jain_e_library's Net Publications

मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनभद्रगणि-रचिता चूर्णिः

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः , निर्युक्तिः [-], भाष्यं[-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः प्रसिद्धया श्रीजिनदासगणिमहत्तररचिता श्रीदशवैकालिकचूर्णिः श्रुतकेवलिभगवच्छस्यंभवसूरिसूत्रितसूत्रा श्रुतकेवलिश्रीमद्भद्रबाहुस्वामिसंहस्रनिर्युक्तिका प्रकाशयित्री— मालवदेशान्तर्गततरत्नपुरी (रतलाम)य- श्री ऋषभदेवजी केशरीमलजीनाम्नी श्वेताम्बरसंस्था, श्रीजामनगरीयश्रीहरजी जैनशालाकार्यवाहकैर्वितीर्णेन द्रव्यसाहाय्येन । इन्दौरनगरे श्री जैनबन्धुपुद्गणालये—श्रेष्ठी जुहारमल मिश्रीलाल पालरेचा द्वारा मुद्रापयित्वा । वीर संवत् २४५९. विक्रम सं० १९८९. सर्वेऽधिकाराः पुनर्मुद्रणादौ आयत्ताः, काष्ठ १९३३. पृष्ठं ४-०-०, प्रतयः ५००
	दशवैकालिक-चूर्णः मूल “टाइटल पेज”

आगम (४२)	दशवैकालिक-चूर्णः उपक्रमः
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदशवैकालिकचूर्णरूपक्रमः भगवद्भिः श्रुतकेवलिभिः श्रीमद्भिः शय्यम्भवस्त्रिभिः पूर्वगतश्रुतेभ्य आदेशान्तरेण द्वादशाङ्गाद् गणिपिटकादुद्धृतं, प्रयोजनं तद्वारेऽस्य स्वतनूजस्य मनकारव्यस्याष्टवर्षीयस्य षण्मासिकायुक्स्यागधनासिध्यर्थं, सहि भगवतां प्रव्रज्याकाले गर्भ-स्थोऽभूत्, प्रभुषु प्रव्रजत्स्वाक्रन्दमानेषु स्वजनेषु गर्भोदन्तं पृच्छत्सु च मात्राऽलक्ष्यमाणगर्भत्वात् मनागिति निरदेशि, जाते च तस्मिन् जननीजल्पानुसारात् कृतं मनकेति नाम, जाताष्टवर्षमानश्चावगम्य मातुर्मुखादवगतः पितुः प्रव्रज्याया उदन्तः, अनेक दुर्वचनोदितैरवगताऽस्या अरुचिः श्रामण्ये, अनापृच्छयैव तां नष्ट्वा राजगृहाच्चम्पामागत्याचार्यसकाशे प्रवव्राज, कौटुम्बिकैः स्वामित्वस्याव्युत्सुष्टत्वाच्चातः शैश्वनिष्फेदिकाप्रवृत्तिः प्रवचनधरैरुद्गीर्णा, षण्मासीमवगत्यायुस्तस्य हितायोद्धृतं भगवद्भिः संजिही-र्षुभिः, परं श्रीयशौभद्रादिना श्रमणसंघेनोपरुद्धैर्न सहतं भगवद्भिः, भगवद्भिर्भद्रबाहुस्त्रामिर्भिर्निर्युक्त्याऽलंकृतमेतत्, श्रीमद्भिर्जिन-दासगणिभिः सनिर्युक्तिकस्यास्य विहिता चूर्णिः, सैवैषौन्मुग्रमाणा, यद्यपि पूर्वधरासन्नकालजातैः श्रीहरिभद्रस्त्रिभिः सूत्रिताऽस्य वृत्तिरनया, मुद्रिताचागमोदयसमितिसंस्थाप्रयासेन श्रेष्ठिदैवचन्द्रपुस्तकोद्धारसंस्थया सा, सूत्रगाथाकारादेविषयाणां च क्रमस्त-त्समानः प्राय इति नायास एतद्विषये, उन्मुद्रणे चास्या वितीर्णं साहाय्यं श्री जामनगरीयश्रीहरजीजैनशालाकार्यवाहकैरिति नै विस्मर्तुमहं, अवगम्यैनां सभावार्था चूर्णिं मोक्षमार्गरेतयो भवन्तु भव्या इत्याशास्महे । आनन्दसागराः १९८९ फाल्गुन शुक्ल तृतीया ।
	दशवैकालिक-चूर्णः पूज्यपाद आनंदसागरसूरीश्वरजी लिखित उपक्रमः

आगम (४२)	मूल संपादकेन लिखितः अध्ययन-अनुक्रमः					
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः					
	अध्ययनानामनुक्रमः					
	नाम	पृष्ठं यावत्	नाम	पृष्ठं यावत्	नाम	पृष्ठं यावत्
	१ दुमपुष्पिका	७१	५ पिण्डैषण (उद्देशद्वयं)	२०६	९ त्रिनयसमाधिः [उद्देशचतुष्कं]	३२८
	२ भ्रातृपुत्रपूर्वकं	९२	६ धर्मार्थकामाध्ययनं	२३४	१० सन्निरुद्धाध्ययनं	३३९
	३ क्षुल्लकाचारकथा	११७	७ वाक्यशुद्ध्यध्ययनं	२६५	१ रतिवाक्यचूला	३६७
	४ पद्मजीवतिकायः	१६४	८ आचारप्रणिधिः	२९४	२ विविक्तचर्याचूला	३८०
	दशवैकालिक-चूर्णः मूल संपादकेन लिखितः अध्ययन-अनुक्रमः					

[“दशवैकालिक-चूर्णिः” इस प्रकाशन की विकास-गाथा]

यह प्रत सबसे पहले “दशवैकालिक-चूर्णि” के नामसे सन १९३३ (विक्रम संवत् १९८९) में रुषभदेवजी केशरमलजी श्वेताम्बर संस्था द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब ।

वृत्ति की तरह चूर्णी के भी दुसरे प्रकाशनों की बात सुनी है, जिसमें ऑफसेट-प्रिंट और स्वतंत्र प्रकाशन दोनों की बात सामने आयी है, मगर मैंने अभी तक कोई प्रत देखी नहीं है ।

❖ - हमारा ये प्रयास क्यों? - ❖ आगम की सेवा करने के हमें तो बहुत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोंमें १२५०० से ज्यादा पृष्ठोंमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगों की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरूप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने उन सभी प्रतों को स्कैन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसके बीचमें पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमें आगम का नाम, फिर श्रुतस्कंध-अध्ययन-उद्देशक-मूलसूत्र-निर्युक्ति आदि के नंबर लिख दिए, ताकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा अध्ययन, उद्देशक आदि चल रहे है उसका सरलतासे ज्ञान हो सके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ ‘दीप अनुक्रम’ भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर सके। हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढ़ते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है।

इस आगम चूर्णि के प्रकाशनोमें भी हमने उपरोक्त प्रकाशनवाली पद्धति ही स्वीकार करने का विचार किया था, परंतु चूर्णि और वृत्ति की संकलन पद्धति एक-समान नहीं है, चूर्णिमें मुख्यतया सूत्रों या गाथाओं के अपूर्ण अंश दे कर ही सूत्रों या गाथाओं को सूचित कर के पूरी चूर्णि तैयार हुई है, कई निर्युक्तियां और भाष्य दिखाई नहीं देते, कोई-कोई निर्युक्ति या भाष्य के शब्दों के उल्लेख है, उनकी चूर्णि भी है पर उस निर्युक्ति या भाष्य स्पष्टरूप से अलग दिखाई नहि देते । इसीलिए हमें यहाँ सम्पादन पद्धति बदलनी पड़ी है । हमने यहाँ उद्देशक आदि के सूत्रों या गाथाओं का क्रम, [१-१४, १५-२४] इस तरह साथमें दिया है, निर्युक्ति तथा भाष्यों के क्रम भी इसी तरह साथमें दिये है और बायीं तरफ़ उपर आगम-क्रम और नीचे इस चूर्णि के सूत्रक्रम और दीप-अनुक्रम दिए है, जिससे आप हमारे आगम प्रकाशनोंमें प्रवेश कर सकते है।

अभी तो ये jain_e_library.org का ‘इंटरनेट पब्लिकेशन’ है, क्योंकि विश्वभरमें अनेक लोगों तक पहुँचने का यहीं सरल, सस्ता और आधुनिक रास्ता है, आगे जाकर इसी को मुद्रण करवाने की हमारी मनीषा है।

.....मुनि दीपरत्नसागर.

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः ॥ ॥, निर्युक्तिः [२/१-७], भाष्यं[-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ १ ॥ अथ दशवैकालिकचूर्णिः नमो जिनागमाय । नमो अरहंताणं नमो सिद्धाणं नमो आचरियाणं, मंगलादीणि सत्थाणि मंगलमज्झाणि मंगलावसाणाणि य, मंगलपरिगृहीता य सिस्सा सत्थाणं अवग्रहेहावायधारणसमत्था भवन्ति, ताणि य सत्थाणि लोमे विरायन्ति वित्थारं च गच्छन्ति । आह-मंगलमिति किमर्थमुपादीयते?, उच्यते, विघ्नविनायकाद्युपशमनार्थमुपादीयते, आह-यद्येतन्मंगलत्रयेण किं प्रयोजनं?, उच्यते, आदि-मंगलग्रहणेन शिष्यस्तच्छास्त्रं क्षिप्रं गृह्णाति, मध्यमंगलग्रहणेन तस्य शास्त्रस्य शिष्यो निर्विघ्नेन पारं गच्छति, अवसानमङ्गलग्रहणेन तच्छास्त्रं शिष्यप्रशिष्येभ्यो अज्झवच्छित्तिकरं भविष्यति, अनेन प्रयोजनेन मंगलत्रयमुपादीयते, आह-यदेतन्मंगलत्रयापांतरालद्वयं तन्नामामंगलिकं प्राप्नोति, उच्यते, तत्र अंतरालस्याभावाद्दण्डवच्च सर्वमेव शास्त्रं मंगलं निर्जरात्मकत्वात्तपोवत्, एवं तर्हि शास्त्रस्या-मंगलत्वं प्राप्नोति, कस्माद्?, अन्येन मंगलेन मंगलीक्रियमाणत्वात्, यदि तावच्छास्त्रं मंगलं किमस्यान्यन्मंगलमुपादीयते?, अथामंगलं किमेनारब्धेन?, उच्यते, शास्त्रं हि स्वयमेव मंगलं अन्येषां च मंगलं भवति, स्वपरानुभावात्मकसामर्थ्ययुक्तत्वाद् गुडलवणाभिप्रदी-पवत्, एवं तर्ह्यनवस्था प्राप्नोति-यदि मंगलस्यापि मंगलमुपादीयते तस्याप्यन्यत् तस्याप्यन्यद्, एवं मंगल उपादीयमाने भारमाशीर्माला प्रसज्यते, सत्यमेतत्, किं तर्हि ?, शिष्यस्य मंगलबुद्ध्युत्पादनार्थमिदमुच्यते साधुवत् ॥ मंगलमिति कः शब्दार्थः ?, रक्ख णक्ख वक्ख मक्ख अग्नि वग्नि मग्गीति धातुमवस्थाप्य अस्य धातोः ‘इदितो नुम् धातो’ (पा०७।१।५८) रिति नुमागमः, परस्य अवर्ण- मंगलत्रयं ॥ १ ॥
	*** मंगलम् एवं सूत्र-प्रस्तावना *** यहां निर्युक्ति आदि सभी स्थानोमे जहां जहां “२/१-३” इस तरह क्रमांक लिखे हैं वे सभी स्थानोमे पहले क्रमांक इस चूर्णि कि प्रत का समझना और (1) ‘ओब्लिक’ के बाद दिया हुआ क्रम वृत्तिकार का बताया हुआ ‘निर्युक्ति’ आदि का क्रमांक समझना ।

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथा:], निर्युक्तिः [८/८-१०], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ ४ ॥ दुविहं-आदिद्वं अणादिद्वं च, आदिद्वं च पज्जवोत्ति वा भेदोत्ति वा गुणोत्ति वा एगद्धा, तत्थ अणादिद्वं जहा दसगालियं आदिद्वं दुमपुप्फियं सामण्णपुव्वयं एवमादि, भावेकगं आदिद्वं अणादिद्वं च, अणादिद्वं भावो, आदिद्वं उदइओ उवसमिओ खइओ खओवसमिओ पारिणामिओ, तत्थ उदइयभावेकगं दुविहं-अणादिद्वं उदइओ भावो, आदिद्वं पसत्थमप्पसत्थं च, तत्थ पसत्थेकगं तित्थगरनामगोत्तस्स कम्मस्स उदओ एवमादी, अप्पसत्थेकगं कोहोदओ एवमादि, इयाणि उवसमियखइयखओवसमिया, ते तिण्णावि भावेकगाणि, ते य छण(समण)स्स पसत्था चेव, एतेसि अपसत्थो पडिवक्खो णत्थि, कम्हा?, जम्हा मिच्छदिट्ठीणं केई कम्मंसा खीणा केई उवसंता, खओवसमेण य कल्लणं बुद्धीपाडवादिणो गुणा संतावि तेसि विचरीयगाहित्तणेण उम्मत्तवयणमिव अप्पमाणं चेव, तम्हा उवसमियखवियखओवसमिया भावा सम्मदिट्ठिणो चेव लब्भंति, परिणामियभावे एकगं दुविहं-आदिद्वं च अणादिद्वं च, पारिणामिअभावे आइद्वं दुविहं-सादिअपरिणामिएकगं अणाइपरिणामिएकगं च, तत्थ साइअपरिणामिएकगं जहा कसायपरिणओ एवमादि, अणाइपरिणामिएकगं जहा जीवो जीवभावेण निच्चमेव परिणओ। एत्थ कतरेण इक्केण अहिगारो?, भइय्यायरित्तोवदेसेण जम्हा दस एते पज्जायअज्झयणा संगहेक्केण संगहिया तम्हा संगहेक्केण एत्थ अहिगारो, दत्तिलायरिओवएसेण जम्हा सुयणाणं खओवसमिए भावे वहइ तम्हा भावेक्केण अधिगारो, दोन्निवि एते आदेसा अवरूद्धा, भावेक्केण अधीगारो ॥ इयाणि दुगतिगजाव नव एते दारे मोत्तूण दस भण्णंति, किं कारणं?, दससु परूविएसु दुगादीणि परूवियाणि भविस्संतित्तिकाउं, तम्हा दसगस्स छव्विहो निक्खेवो तं०-नामदस ठवणदस दव्वदस खेत्तदस कालदस भावदस इति, नामठवणाओ गवाओ, इयाणि दव्वदस दस दव्वा सच्चित्ताचित्तमीसगा, तत्थ सच्चित्तदव्वा जहा दस मणूसा, अचित्ता जहा दस काहावणा, मीसगा जहा दस अलंकियविभूसिया एक- निक्षेपाः ॥ ४ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथाः], निर्युक्तिः [११-३३/११-३४], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ५ ॥ मणूसा, खेत्तदसा दस आगासपएसा, कालदसा 'बाला मंदा किड्डा' जहा तंदुलवेयालिए, भावदसा एते चेव दस अज्झयणा ॥ इदाणि कालेत्ति दारं, तत्थ गाहा— दब्बे अट्ठअहाउय, उवक्कमे देसकाल काले य । तहय पमाणे वण्णे भावे पण्यं तु भावेणं ॥११-९५०॥ एसा गाहा जहा सामाइयनिज्जुत्तीए तहा परूवेतव्वा, एत्थ दिवसपमाणकालेण अधिमारो, तत्थवि ततियपोरुसीए ठविज्जइत्तिकाउं तेण अधिमारो, आट्ठो य णिज्जुहिउं अवरण्हकाले, तस्स पडिसेहो कज्जइ, विगतः कालो विकालः, अथवा विकालः कालः, असकलः खंडश्चत्यनय्यातरं, विकालवेलायां परिसमाप्तं वैकालिकं, अथवा (एतत्) विकाले पठ्यत इति वैकालिकं, अथवा दशैतानि अध्ययनानि व्यवगते दिने कृतानीति दशवैकालिकं ॥ दशवैकालिकमिति कः शब्दार्थो?, विकालेन निर्वृत्तं संकाशादिपाठाच्चातु- रर्थिको ठक्, 'तद्धिते ह्यचामादि' रित्यादिवृद्धिः वैकालिकं ॥ इदाणि सुत्तं, तं चउविहं-णामसुत्तं ठवणसुत्तं दव्वसुत्तं भावसुत्तं, जहा अणुयोगदारे। एवं खंधस्सवि चउक्कओ निक्खेवओ, तहेव अज्झयणस्स, तहेव णामठवणाओ दव्वभावा भाणिउणं जहा अणुयोगदारे, णवरं भावज्झयणस्स इमाओ निरुत्तिगाहाओ चउरो 'अज्झप्पस्साणयणं' (२९ ॥ ५०१६) गाहा, अधिगम्मन्ति य अत्था (३० ॥ ५० १६) गाहा 'जह् दीवा दीवसयं' गाथा (३१ ॥ ५० १६) 'अट्ठविहं कम्मरयं' गाथा (॥३३॥ पा०१६) चउरोवि कंठाओ, एवं उद्देशगस्सवि चउक्कओ निक्खेवओ तहेव ॥ इदाणि 'जेणव जं च पडुच्च' गाथा, जेण निज्जुहं सो भाणितव्वो, जं वा पडुच्च निज्जुहं जइ वा णिज्जुहाणि जाए वा परिवाडिए (जह वा) अज्झयणाणि ठवियाणि पचं कारणाणि भाणियव्वाणि, 'जेणं' ति जेण एताणि दस अज्झयणाणि णिज्जुहाणि काल- निक्षेपादि ॥ ५ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथा:], निर्युक्तिः [११-३३/११-३४], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ ६ ॥ सो भाणियव्वो, वद्धमाणसामिस्स उप्पत्तिं वण्णेत्ता जहा सामाहयणिज्जुत्तीए गणधरा य एकारस सुधम्मस्स जंबुनामो गणधरो जंबुनामस्स पभवो गणधरो, अन्नदा कदाइ पुव्वरत्तावरत्तंसि चिन्ता समुप्पण्णा-को मे गणधरो होज्जत्ति, अप्पणो गणे य संघे य सव्वतो उवओगो कओ, ण दीसइ अव्वोच्छित्तिकरो, ताहे गारत्थेसु उवउत्तो, उवओगे कए रायगिहे सेज्जंभवं जण्णं जयमाणं पासइ, ताहे रायगिहं नगरं आगंतूण संघाडगं वावारेइ-जण्णवाडं गंतुं भिक्खुवा धम्मलाभेध, तत्थ तुम्हे अतिच्छाविज्जिहिह, ताहे तुम्हे भणेज्जाह--‘अहो कष्टं तत्त्वं न ज्ञायते’ तओ गया साहू अतिच्छाविया य, तेहिं भणियं-अहो कष्टं तत्त्वं न विज्ञायते, तेण तथा सिज्जंभवेण दारमूलट्टिएण तं वयणं सुयं, ताहे सो चित्तेति-एते उवसंता तवस्सिणो असच्चं ण वदंतित्तिकाउं अज्झाव-गसगासं गंतुं भणइ-किं तत्त्वं?, सो भणइ-वेदाः, ताहे सो असिं कट्ठिऊणं भणइ-सीसं ते छिदामि जइ मे तत्तं न कहेसि, उवज्झाओ भणइ-पुण्णो मम समयो, भणितमेतं वेदत्थे-परं सीसच्छेदे कहियव्वति, संपयं कहयामि जं एत्थं तत्तं, एतस्स जुयस्स हेट्ठा सव्वर-यणामयी पडिमा, अरहंतस्स सा बुच्चइ, आरहओ धम्मो तत्त्वं, ताहे सो तस्स पाएसु पडिओ, सो य जण्णवाडउवक्खेवो तस्स चैव दिण्णो, ताहे सो गंतूणं ते साहू गवेसमाणो गओ आयरियसगासं, आयरियं वंदित्ता साहूणो य भणइ-मम धम्मं कहेह, ताहे आयरिया उवउत्ता जहा इमो सोत्ति, ताहे आयरिएहिं साहुधम्मो कहिओ, पव्वइओ, चोइसपुव्वी जाओ॥ जदा य सो पव्वइओ तदा तस्स गुव्विणी महिला होत्था, तंमि य पव्वइते लोगो गियल्लओ तंतमस्सइ जहा तरुणाए भत्ता पव्वइओ अपुत्ता य, अत्रि अत्थि तव किंचि पोइंति पुच्छंति, सा भणइ-उवलक्खेमि मणायं, समए तेण दारओ जाओ, ताहे णिव्वत्तबारसाहस्स नियल्लगेहिं जम्हा पुच्छिज्जंतीय भायाए से भणियं मणगत्ति तम्हा मणओ से नामं कयं, जदा सो अट्ठवरिसो जाओ ताहे मायरं शय्यंभव- वृत्तं ॥ ६ ॥
	*** दशवैकालिकसूत्रस्य रचयिता शय्यंभवसूरेः कथानकं

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [-], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथाः], निर्युक्तिः [११-३३/११-३४], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ८ ॥ भुंजमाणस्त असुहकम्मबंधा ण भणंति, एतेण अभिसंबंधेण कम्मप्पवायपुव्वाउ, सच्चप्पवायपुव्वाउ वकसुद्धी, अवसेसा अज्झयणा पच्च- क्खाणपुव्वस्स तइयवत्थूओ णिज्जूढा, वितियाएसेण दुवालसंगाओ गणिपिडगाओ णिज्जूढा। जत्तोत्ति दारं गतं। इदाणि जत्तिस्सि दारं कथयते, कति एताणि अज्झयणाणि?, आयरिओ आह-दुमपुप्फियाईणि सभिक्खुपज्जवसाणाणि रतिवक्का विविचचरिया चूलिया य एताउ दो चूलाओ, जत्तिस्सि दारं गयं। जहा ते ठवियत्ति दारं भणिज्जइ, एत्थ पंच गाहाओ ‘पढमे धम्मपसंसा वितिए धिति’ गाहा (२० ॥ प. १३) ‘ तइए आचारकहा’ गाहा- (२१॥ पा १३) ‘ भिक्खविसोही’ गाहा (२२। पा. १३) ‘वयणविभत्ती गाहा (२३ ॥ प १३) ‘ दो अज्झयणा’ गाहा (२४ ॥ प. १५) ॥ पढमज्झयणे धम्मो पसंसिज्जइ, सो य इमम्हि चेव जिनशासने, नान्यत्र, मा भूदभिनवप्रव्रजितस्य संमोहः ततो द्वितीयाध्ययनमपादिश्यते-धर्मस्थितस्य धृतिः स्यात्, प्ररूपणं तदर्थमिति, ‘ जस्स धिति तस्स तवो जस्स तवो तस्स सोग्गई सुलभा। जे अधितिमंत पुरिसा तवोवि खलु दुल्लहो तेसिं ॥१॥ तृतीये सा धृतिः कस्मिन् कार्येति?, आचारे, अनेनाभिसंबंधेनाप्याचाराध्ययनमपादिश्यते, स चाचारः पदसु जीवनिकायेषु भवतीत्यनेन संबंधेन पड्जीवनिकायाध्ययनमपादिश्यते, पंचमे आहारादिकमृते शरीरस्थितिर्न भवति, अशरीरस्य च धर्मो न भवतीत्यनेनाभिसंबंधेन पिडैपणाध्ययनमपादिश्यते, षष्ठे साधुं भिक्षागोचरप्रविष्टं केचिदाहुः—कीदृशो युष्माकं आचारः?, तेनाभिहिताः-आचार्यसकासमागच्छथ, ततस्ते आचार्यसकासमागता ब्रुवन्ति-कथयस्व कथयस्वेत्यनेन संबंधेन धर्मार्थका- माध्ययनमपादिश्यते, सप्तमे तेषामाचार्येण सावद्यवचनदोषविधिसंज्ञेन निरवधेन कथयितव्यमित्यनेनाभिसंबंधेन वाक्यशुद्ध्याध्यय- नमपादिश्यते, अष्टमे ते धर्मं श्रुत्वा संसारभयोद्विग्नमनसो ब्रुवन्ति-वयमपि प्रव्रजामः, ततस्ते आचार्य आह-प्रव्रजितेनाचारप्रणिधानं उद्धार- स्थानानि अधि- काराश्च ॥ ८ ॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथा:], निर्युक्तिः [३४/३४-३७], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
	श्रीदश- वैकालिक चूर्णां १ अध्ययने ॥ १२ ॥ रिसेत्ति वा वणत्ति वा अक्खेत्ति वा उसुत्ति वा गोलेत्ति वा पुत्तेत्ति वा उदएत्ति वा एतेहिं उवम्मं कीरइत्तिकारं ताणि भण्णन्ति नामाणि तस्स अज्झयणस्स, दुमपुप्फियत्ति जहा भमरो दुमपुप्फेहिंतो अकयमकारियं पुप्फं अकिलामेन्तो आहारेत्ति, एवं अकयमकारियं निरुवधं गिहत्याणं अपीलयां आहारं गेण्हइ । आहारएसणात्ति एग्गहणे तज्जातीयग्गहणं उग्गमादिसुद्धं अरत्तहुट्टेण आहारे- यव्वं, गोयरेत्ति जहा सो वच्छओ तंमि सेट्टिकुले ताए बहुगाए सव्वालंकारविभूसियाए उ चरिं दिज्जमाणं पलोएइ, सदादीसु न रत्ते दुट्ठो वा, एवं भिक्षुणा हिडंतणं सदादीसु इट्ठाणिट्ठविसएसु न रज्जियव्वं न य दुस्सियव्वंति। तदेत्ति जहा चत्तारि घुष्पा पण्णत्ता, तंजहा-तयक्खाए छल्लिक्खाए कट्ठक्खाए सारक्खाए, तयक्खाए नामेगे णो सारक्खायी १ सारक्खाइ णामेगे णो तया- खायी २ एगे तयक्खायीवि सारक्खायीवि ३ एगे णो तयक्खायी णो सारक्खायी ४, तयक्खायीसमाणस्स णं भिक्खुस्स सारक्खायी समाणे तवे भवइ, एवं जहा ठाणे तहेव । उंछेत्ति दारं, तं चउच्चिहं, णामठवणाउ तहेव, दव्वुलं जहा केइ तावसादी उंछंति, भावे अण्णायपिंडो । मेसुत्तिदारं, जहा मेसो अणायुगाणितो पिबेत्ति एवं साहुणावि भिक्षापविट्टेण बीयक्कमणादि ण तथा हल्लफ- लयं कायव्वं जहा भिक्खाए दाया मूढो भवइ, सो वा तेण वारेयव्वो जेण परिहरइ । जत्तूगा, एत्थ चेव समोयारेयव्वो, भणियं च न दशंस्तीक्ष्णनिपातैर्बन्धमायाति चात्मनः । जल्कापि तदेवार्थं, मार्दवेनोपसर्पति ॥ १ ॥ एवमणेसणाए, ण जहा मसओ दुक्खं उप्पाइच्चा रुधिरं पिबति, एवं णिवारेइ जहा तस्स दायगस्स मणो दुहं न भवति, जलोगा व निवारणीयं पसण्णमणसेणं । सप्पोत्ति जहा सप्पो सरत्ति बिले पविसत्ति तथा साहुणावि अणासादत्तेण हणुयं असंसरंतेण आहारेयव्वं, अहवा जहा सप्पो एगदिट्ठी तथा णिग्गंथे पवयणे एगदिट्ठिणा होयव्वं । वणोत्ति जहा वणस्स मा फुट्ठिहित तो से मक्खणं दिज्जइ, एवं इमस्सवि अध्ययनै- कार्थाः शब्दाः ॥ १२ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / [गाथाः], निर्युक्तिः [३४/३४-३७], भाष्यं [-]
प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ १४ ॥ मूलं य असंमोहो भवइ । इदाणि अणुगमो, सो दुविहो-सुत्ताणुगमो य निज्जुत्तीअणुगमो य, निज्जुत्तीअणुगमो तिविहो. दसवेतालियनिज्जुत्तीअणुगमो १ उवग्घायनिज्जुत्तीअणुगमो २ सुत्तफासियनिज्जुत्ती ३, दसवेतालियनिज्जुत्तीअणुगमो जो एस हेट्ठा वणिणओ, उवग्घायनिज्जुत्तीअणुगमो ‘उद्देशे निद्देशे य’ गाहा (आव. १४०) तित्थयरस्स उवग्घायं काऊणं जहा आवस्सए पच्छा अज्जसुधम्मस्स ततो जंघुणामप्पभवाणं उवग्घायं काउं तओ अज्जप्पभवस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले चिता समुप्पणा, तं सच्चं अक्खणयं हेट्ठा समक्खायं जं तं भाणितव्वं जाव मणगोत्ति ॥ उवग्घायनिज्जुत्ती गया, इदाणि सुत्तफासियनिज्जुत्ती भण्णइ-सुत्तेण चैव सह सा भाण्हिति, सा यइमा--‘णामं ठवणा धम्मो’ गाहा-(३९-२१)एवमादियाउ गाहाओ सुत्तफासियनिज्जुत्ती भण्णइ । इदाणि सुत्ताणुगमे सुत्तमुच्चारयेव्वं अक्खलियं अमिलियं अविच्चाभेलियं जहा अणुओगदारे जाव दसवैकालिकपदं वा नोदशवैकालिकपदं वा, तत्थ ‘संहिता च पदं चैव, पदार्थः पदविग्रहः । चालना प्रत्यवस्थानं, व्याख्या तंत्रस्य पदविधा ॥१॥’ तत्र संहितेय-धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमे तवो । देवावि तं नमंस्संति, जस्स धम्मो सया मणो ॥१॥ संहिताऽतिक्रान्ता, इदानि पदं-‘धृञ् धारणे’ अस्य धातोः सन्प्रत्ययान्तस्येदं रूपं धर्म इति, मंगेति धर्मस्याख्या, ‘ला आदाने’ अस्य धातोर्मगपूर्वस्य कप्रत्ययान्तस्येदं रूपं मंगलंति, ‘कृष विलेखने’ अस्य धातोरुत्पूर्वस्य निष्ठाप्रत्ययान्तस्येदं रूपं उत्कृष्टमिति, ‘तृहि हिसि हिंसायां’ अस्य धातोरिदितो लुम्, लुभि कृते अधिकारे अप्रत्ययान्तस्य नञ्पूर्वस्येदं रूपं अहिंसेति, ‘यसू उपरमे’ अस्य धातोः संपूर्वस्य अप्रत्ययान्तस्येदं रूपं संयम इति, ‘तप धूष संतापे’ अस्य धातोः सन्प्रत्ययान्तस्येदं रूपं तप इति, ‘दिबु क्रीडाविजिगीषा-व्यवहारद्युतिस्तुतिक्रान्तिगतिषु’ अस्य धातोरप्रत्ययान्तस्येदं रूपं देवा इति, ‘तदि’ति सर्वनाम, अस्य नपुंसकविवक्षायां रूपं उपोद्घात- ध्रुवस्य शिखे सत्रातु- गमश्च संहितापदे ॥ १४ ॥
	*** अथ सूत्रं आरभ्यते *** ‘धर्म’ आदि पदस्य अर्थः निर्दिश्यते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो १ अध्ययने ॥ १५ ॥ तदिति भवति, ‘णमग्रहत्वे शब्दे’ अस्य धातोरस्यप्रत्ययान्तस्येदं रूपं नम इति, यदिति सर्वनाम, अस्य स्वकृतलक्षणां पट्टीमुत्पादयित्वा तस्येदं रूपं यस्येति, धर्मः पूर्वविहित एव, धर्म इति, सर्वस्मिन् काले ‘सर्वैकान्यकियत्तदः काले दा’ (पा. ५-३-१५) प्रत्ययो भवति, सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि (पा. ५-३-६) स आदेः, तस्येदं रूपं सदा यदा इति, ‘मन ज्ञाने’ अस्य धातोरस्यप्रत्ययान्तस्य चेदं रूपं मन इति, पदमतिक्रान्तं। इदानीं पदार्थः-यस्मात् जीवं नरकतिर्यग्योनिकुमानुषदेवत्वेषु प्रपतंतं धारयतीति धर्मः, उक्तञ्च-‘दुर्गति-प्रसृतान् जीवान्, यस्माद् धारयते ततः। धत्ते चैतान् शुभे स्थाने, तस्माद्धर्म इति स्थितः ॥१॥ मंगं नारकादिषु पवडंतं सो लाति मंगलं, लाति भेण्हइत्ति वुत्ते भवति, उक्किट्ठं णाम अणुत्तरं, ण तओ अण्णं उक्किट्ठयरंति, अहिंसा नाम पाणातिवायविरती, संजमो नाम उवरमो, रागदोसविरहियस्स एभिभावे भवइत्ति, तवो णाम तावयति अट्ठविहं कम्ममंठि, नासेतित्ति वुत्तं भवइ, देवा णाम दीवं आगासं तंमि आगासे जे वसंति ते देवा, अविणाम संभावणा, अहिंसातवसंजमलक्खणे धम्मो ठिओ तस्स देवा पणिवायवंधुरसिरा भवंति, माणुस्सेसु पुण का सण्णत्ति एसा संभावणा, तमिति जो पुच्चभीणओ अहिंसातवसंजमलक्खणे धम्मो ठिओ तस्स एस णिहेसोत्ति, जस्सत्ति अविसेस, यस्य साधुस्स निहेसो, धम्मो पुच्चभीणओ, सदा णाम निच्चकालं, जस्स धम्मो मणो बुद्धी णाम एताणि अज्झवसाणं। इदानीं पदविग्गहो-सो य दोण्हं पदानं भवइ जेसिं परोप्परं अत्थसंबंधो जुज्जइ, एत्थ पुण पिहप्पिहाणि चैव पदाणि तेण गओ ॥ चालणपसिद्धीओ उवरिं भणिहंति ॥ ‘कत्थइ पुच्छति सीसो’ (३८-२१) सीसो कम्भिहि संदेहे समुप्पण्णे पुच्छइ, आयरिओ य तं तस्स सीसस्स हियट्ठाए तत्तो पुच्छातो विउणतरागं परिकहेइ, कत्थइ पुण आयरिओ अपुच्छिओ चैव सीसस्स बुद्धिवित्थारणनिमित्तं परिकहेइ सयमेव ॥ इदानीं सुत्तफासियनिज्जुत्ती वित्थारिज्जइ, एयं पि अपुच्छिओ चैव आयरिओ पदार्थादि ॥ १५ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ २३ ॥ भवइ, इदाणि एताओ पंचवि ओमोदरियाओ वित्तारेण मणइ, तत्थ अप्पाहारोमोदरिया नाम पमाणोमोदरियाए तिभासो, ते अट्टकवला, अट्टविधा य अप्पाहारोमोयरिया भवइ, तंजहा-अप्पाहारोमोदरियाए अट्टकवला, एगूणकवला अप्पाहारोमोदरिया जाता सत्त, विऊण कवल अप्पाहारोमोदरिया जाता छ, तिचउरोपंचूणकवलअप्पाहारोमोदरिया जाता पंच चउरो तिण्णि, छहि ऊणकवल-अप्पाहारोमोदरिया जाता दोण्णि, सत्तूणकवलअप्पाहारोमोदरिया जाता एमो अप्पाहारोमोदरिया, जाता सत्तवि ऊणकवल, अप्पाहारोमोयरियाए एककवलाहारोमोदरिया जहण्णा अट्टकवलोमोयरिया उक्कोसा सेसा अज. इदाणि अवट्ठाहारोमोयरिया बारसकवला मण्णत्ति, सा य चउव्विहा, तंजहा-बारसकवल अवट्ठाहारोमोयरिया, एगक. इकारस, बिहूणकवल अवट्ठाहारोमोयरिया जाया दस, तिहिऊण कवलअवट्ठाहारोमोयरिया जाता नव, अवट्ठाहारोमोयरिया जहण्णिया नव कवला उक्कोसेण बारस, सेसा अजहण्णमणुक्कोसा। इदाणि दुभागोमोयरिया सोलसकवला, सा चउव्विहा, तंजहा-सोलकवलदुभागोमोयरिया, एगूणकवल दोभागोमोदरिया जाता पण्णरस, दोहिऊण दुभागकवलहारोमोदरिया जाता चोदस, तिहिऊण दुभागकवलहारोमोयरिया तेरस, दुभागकवलहारोमोदरियाए जहण्णा तेरस उक्कोसा सोलस, सेसा अजहण्णमणुक्कोसा। इदाणि पमाणजुत्ताहारोमोदरिया एगू(अट्ट)णकवलजुत्ताहारोमोदरिया चउव्वीसं कवला भवत्ति, सा य अट्टविहा, तंजहा-चउव्वीसकवलजुत्ताहारोमोयरिया एगूणकवलजुत्ताहारोमोदरिया जाता तेवीसं एवं दोहिऊण जाया बावीसं, तिहिऊण जाया इक्कीसं, चउहिं ऊणा जाता वीसं, पंचहिं ऊणा जाता एगूणवीसं, छहि ऊणा जाता अट्टारस, सत्तहिं ऊणा जाता सत्तरस, पमाणजुत्ताहारोमोयरिया जहण्णेण सत्तरस उक्कोसेण चउवीसं कवला, सेसा अजहण्णमणुक्कोसेण। इदाणि किंचूणाहारोमोयरिया, सा य एकतीसं कवला, सत्तविहा पुण मणइ, तंजहा-एकतीसं कवला किंचूणाहारोमोय. चाहेऽवमो- दरिका ॥ २३ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ २४ ॥ रिया, एगूणकवला किंचूणाहारोमोयरिया जाता तीसं, एवं दोहिं ऊणा जाया एकूणतीसं, तिहिं ऊणा जाया अट्टावीसं, चउहिं ऊणा जाया सत्तावीसं, पंचूणा जाता छव्वीसं, छहिं ऊणा जाया पंचवीसं, किंचूणाहारोमोयरिया सव्वजहण्णा पणवीसं सव्वुकोसा एकतीसं, अवसेसा अजहण्णमणुकोसा, एवं एसा पुरिसस्स ओमोदरिया । इदाणि इत्थियाए, सावि एवं चेव, णवरं अट्टावीसं कवला संपुण्णाहारो, तदणुसारेणं एवं सेसं भाणियव्वं । दव्वोमोदरिया गता, इदाणि भावोमोदरिया-कोहादीणं चउण्हं कसायाणं उदंताणं निरोहो उदयपत्ताणं विफलीकरणं कायव्वंति, ओमोदरिया गता । इदाणि भिक्खायरिया-सा अणेगप्पगारा, तंजहा-दव्वाभिग्गहचरिया, जहा कोइ साहू अभिग्गहं गिण्हज्जा-जइ मे भिक्खं हिंडमाणस्स अमुगं दव्वं लब्भइ तो गिण्हस्सामि, इतरहा न गेण्हामि, एवमादी भिक्ख्वायरियाए अभिग्गहा भाणितव्वा, अहवा इमा चउव्विहा भिक्खायरिया, तं पेला अट्ठपेला गोमुत्तिया संवुक्कावट्ठत्ति । इदाणि रसपरिच्चागो, खीरदधिनवणीयादीणं रसविगतीणं विवज्जणं । कायकिलेसो नाम वीरासणउक्कुडुगासण-भूमीसेज्जाकट्ठसेज्जालोयमादियाउ भाणियव्वाउ, पश्चात्कर्म पुराकर्म, ईर्यापथपरिग्रहो । दोषा ह्येते परित्यक्ताः, केश-लोचं प्रकुर्व्वता ॥ १ ॥ कायक्लेशश्च पूर्वोक्तो, वैरुण्यं तु सुसंयतम् । आप्तागमः क्षमा चैव, सूत्रोक्ता कर्मनिर्जरा ॥ २ ॥ लोचः । इदाणि संलीणया, सा चउव्विहा भवइ, तंजहा-इंदियसंलीणया कसायसंलीणया जोगसंलीणया विविच्चरिया, तत्थ इंदिय-संलीणया पंचविहा भण्णइ, तंजहा-सोइंदियसंलीणया चक्खिंदियसंलीणया घाणिंदियसंलीणया जिह्मिंदियसंलीणया फासिंदिय-संलीणया, तत्थ सोइंदियसंलीणया णाम-सहेसु य भइगपावएसु सोयविमयमुवगएसु । तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया ण भवि-यव्वं ॥ १ ॥ एवं मेसमुवि इंदियमुवि एसा चैव गाहा चरियव्वा । इदाणि कसायसंलीणया, सा चउव्विहा, तंजहा कोहोदय- वाह्येभिक्षा- चर्याकाय- क्लेश संलीनताः ॥ २४ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णिं १ अध्ययने ॥ २७ ॥ भिरगहो-सो आगच्छंतस्स चैव परमादरेण णाम अभिमुहमागतूण वग्महत्थेहिं भण्णइ-एत्थ ओविसाहित्ति, आसणपद्दाणं णाम ठाणाओ ठाणं संचरंतस्स आसणं गेण्हऊण इच्छिए ठाणे ठवेइ, सेसाणि अब्भुट्ठाणकिइकम्मादीणि प्रागडाणित्ति काऊण न भणि- याणि । इदार्णि अणासादणाविणओ, सो पण्णरसविहो, तंजहा-अरहंतस्स अणासादणाए अरहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अणासा- दणाए आयरियाणं अणासायणाए उवज्झायारणं अणासातणाए थेराणं अणासातणाए कुलस्स अणासादणाए मणस्स अणासादणाए संघस्स अणासादणाए किरियाए अणासादणाए, किरिया णाम अत्थिवादो भण्णइ, तंजहा-अत्थि माया अत्थि पिया अत्थि जीवा एवमादि, जो एवं ण सदहइ विवरीयं वा पण्णवेइ तेण किरिया आसादिता भवइ, आभिणिबोहियणाणस्स अणासादणाए जाव केवलनाणस्स अणासादणाए, एतेसिं पण्णरसण्हं कारणारणं एक्केकं तिविहं भवइत्ति, तंजहा-अरहंताणं भत्ती अरहंताणं बहुमाणो अरहंताणं वण्णसंजलणया, एवं जाव केवलणाणस्सवि तिविहं भाणियव्वं, सव्वेवि एते भेदा पंचचत्तालीसं भवंति, दंसणविणओ गओ । इदार्णि चरित्तविणओ कहिज्जइ, सो पंचविधो भवइ, तंजहा-सामाइयचरित्तविणओ छेदोवट्ठावणियचरित्तविणयो परिहारविसुद्धियचरित्तविणओ सुहुमसंपरागचरित्तविणओ अहक्खायचरित्तविणओत्ति, एतेसिं पंचण्ह चरित्तानं को विणओ ?, भण्णत्ति, पंचविहस्स जा सदहणा वा सदहियस्स जा काएण फासणया भव्वाणं च पुरओ परूवणया, चरित्तविणओ वण्णओ । इदार्णि मणविणओ, आयरियाईण उवरिं अकुसलो मणो निरूभिमुक्खो कुसलमणउदीरणं च कायव्वं, एवं वायाविणओवि । तत्थ कायविणओ नाम तेसिं चैव आयरियादीण अट्ठाणपरिस्संताण वा सीसाउ आरब्भ जाव पादतला ताव परमादरेण विस्सामणं । इदार्णि उवयारियविणओ सत्तविधो, णिच्चमेव आयरियस्स अब्भासे अच्छणं छंदाणुवत्तणं कारियनिमित्तकरणं अभ्यन्तरे विनयः ॥ २७ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि १ अध्ययनं ॥ २८ ॥ कथपडिकइया दुक्खत्तस्स गवेसणं देसकालणुया सव्वत्थेसु अणुलोयमत्ति, तत्थ अब्भासे अच्छणं नाम आयरियाण सीसो निज्जरुट्ठाए इंगिएण अभिप्पायं नाऊण जहिच्छियं उववायइस्सामिच्चि काऊण आयरियस्स अब्भासे अच्छइ, तत्थ छंदाणुवत्तणं नाम आयरियाण सीसेग कालं तुलेऊणं आहारउवहिउवस्समाणं उववायणं कायं, कारियनिमित्तकरणं नाम पसण्णा हु आयरिया सविसेसं सुत्तत्थतदुभयाणि दाहिंतिच्चिकाऊणं तारिसाणि अणुकूलाणि करेइ जेण तेसि आयरियाण चित्तप्पसाओ जायइ, कथपडिकइया णाम जइवि निज्जरत्थं करेइ ततोवि मम एस कारेहिच्चि काउं विणयं करेइ, सेसाणि दुक्खत्तस्स गवेसणाईणि पसिद्धाणि चैव काऊण नो भणियाणि, अहवा एसो सव्वो चैव विणओ नाणदंसणचरित्ताणं अव्वतिरित्तोत्तिकाऊण तिविहो चैव भाणियव्वो, तं०—नाणविणओ दंसणविणओ चरित्तविणओ ॥ विणओ गओ ॥ इदाणि वेयावच्चं, तं च इमेहिं कारणेहिं कज्जइ, तं०- अण्णपाणवत्थपत्तपडिस्सयपीढफलगसंथारप्पगादीहिं धम्मस्स साहणेहिं, तं च कस्स कज्जइ १, इमेसि दसण्हं, तं० आयरियउवज्झाया थेर तवस्स गिलाण सिक्खग साहम्मिय कुलगणसंघेसु, तत्थ आयरिओ पंचविहो, तं०-पव्वावणायरिओ सुत्तस्स उदिस्सणायरिओ समुद्दिस्स० अणुण्णा० वायणायरिओत्ति, उवज्झाओ पसिद्धो चैव, थेरो नाम जो गच्छस्स संथिति करेइ, जो तिसु त परियागाइसु वा थेरो, तवस्सिणाम जो उग्गतवचरणरतो, गिलाणो णाम रोगाभिभूओ, सिक्खगो नाम जो अहुणा पव्वइयओ, साहम्मिओ नाम एगो पवयणओ ण लिंगतो, एगो लिंगओ न पवयणओ, कुलगणसंघा पसिद्धा चैव। इदाणि सज्झाओ, सो पंचविधो, तं०-वायणा पुच्छणा परियट्ठणा अणुप्पहा धम्मकहा, वायणा णाम सिस्सस्स अज्झावणं, पुच्छणा सुत्तस्स अत्थस्स वा भवति, परियट्ठणं णाम परियट्ठणंति वा अब्भसणंति वा गुणणंति वा एगट्ठा, अभ्यन्तरे वेयावृत्त्य- स्वाध्यायौ ॥ २८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो १ अध्ययने ॥ ३० ॥ जोगो संपओगो तेण अप्पिएण समंततो संपउत्तो तस्स विप्पयोगाभिकंखी सतिसमण्णागते यावि भवइ, सतिसमण्णागते णाम चित्तनिरोहो काऊं ज्ञायइ, जहा कह णाम मम एतेसु अणिट्ठेसु विसएसु सह संजोगो न होज्जत्ति, तेसु अणिट्ठेसु विसयादिसु पओसं समावण्णो अप्पत्तेसु इट्ठेसु परमगिद्धिमावण्णो रागदोसवसगओ नियमा उदयकिलिन्नव पावकम्मरयं उवचिणाइत्ति अट्ठस्स पढमो भेदो गतो १। मणुण्णसंपयोगसंपउत्तो तस्स अविप्पयोगाभिकंखी सहसमन्नागए यावि भवइ, सदाइसु विसएसु परमपमोद-मावओ अणिट्ठेसु पदोसमावण्णो तप्पच्चइयस्स रागदोसं० अजाणमाणो गओ इव सलिलउल्लियंगो पावकम्मरयमलं उवचिणोत्ति अट्ठस्स वितिओ भेदो गओ २। आयंकसंपयोगसंपउत्तो तस्स विप्पयोगाभिकंखी सतिसमन्नागते, तत्थ आतंको णाम आसुकारी, तं जरो अतीसारो सू(सा)सं सज्जहूओ एवमादि, आतंकगहणेण रोगोवि सइओ चेव, सो य दीहकालिओ भवइ, तं गंडी अदुवा कोटी एवमादि, तत्थ वेदणानिमित्तं आयंकरोगेसु पदोसमावण्णो आरुग्गभिकंखी रागदोसवसगओ णेहाणुगओ निवसंतो असुभ-कम्मरयमलं उवचिणोत्ति, अट्ठज्झाणस्स तइओ भेदो गओ ३। परिज्झयकामभोगसंपउत्ते तस्स अविप्पजोगाभिकंखी सतिसमण्णा-गए यावि भवइ, तत्थ परिज्झति वा पत्थणंति वा गिद्धिंति वा अभिलासोत्ति वा लेप्पत्ति वा कंखंति वा एगट्ठा, तत्थ काम-ग्गहणेण सद्धूवा व गहिया, भोगग्गहणेण मंधरसफरिसा गहिया, एतेसिं कामभोगाणं जा पत्थणा सा परिज्झा. परिज्झउ नाम अणुगओ, जहा लोगे अब्भेहिं अणुगतओ अब्भंतओ भण्णइ एवं सोवि कामभोगापिवासाए परिब्भज्झाणगतो परिज्झितो भण्णइ, ततो सो रागदोसोवगओ नियमा असुहकम्मबंधउत्ति भवइ, एवं चउव्विधंपि अट्ठ भणियं, एयं पुण अट्ठज्झाणं को ज्ञायइ?, अविरयदेसविरय पमचसंजया य ज्ञायंति, सीसो आह--कहमेतं नज्जइ? जह एस अट्ठं ज्ञायइत्ति न वा ज्ञायति ?, आयरिओ भणइ- अभ्यन्तरे तपसि ध्यानम् ॥ ३० ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि १ अध्ययने ॥ ३१ ॥ अट्टस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि लक्खणा पणत्ता, तं०-कंदणया सोयणया तिप्पणया विलवणया, तत्थ कंदणयानाम हिरण्णसुवण्णादी- हिं अवहिण्हिं वा कंदइ हा मात ! हा पित ! हा भागे ! हा पुत्ते ! त्ति एवमादी, सोयणया नाम जो नीसढं दीणमणसो अंतग्ग- तेण सोग्गिगणा अभिताविज्जमाणो चिट्ठइ सा सोयणता, तिप्पणया नाम तीहिंवि मणवयणकाइएहिं जोगेहिं जम्हा तप्पत्ति तेण तिप्पणया, विलवणया नाम अतिसोगाभिभूयत्तणेण विचित्तेतसो णाथधिट्ठाणि विविधाणि विलवइ विलवणया, (अहवा कूज- णया कक्करणया तिप्पणया विलवणया तं०) कूजणया णाम मात्तिपित्तिभातिभग्गिणीपुत्तदुहिच्चमरणादीवि (सु) महइमहंतेण सदेण रोवहीत्त कूजणया, कक्करणया णाम जो घडीजंतगं व वाहिज्जमाणं करगरेइ सा कक्करणया, तिप्पणयाविलवणयाउ पुव्ववणिगाउ, अट्टज्झाणं गतं । इदाणि रोइज्झाणं-तं० चउव्विहं, तं०-हिंसाणुबंधी मोसाणुबंधी तेणाणुबंधी सारक्खणाणुबंधी, तत्थ हिंसाणुबंधी नाम जो णिच्चकालमेव वधपरिणओ अकरेमाणोवि पाणववरोवणं मज्जारो विव तग्गयमाणसो चिट्ठइ एस हिंसाणु- बंधी१, मोसाणुबंधी णाम जो कम्मभारिययाए निच्चमेव असंतअसंभूतेहिं अभिरमइ, अदिट्ठाणि य भणइ दिट्ठाणि मए, एवमादि मोसाणुबंधी २, तेणाणुबंधी णाम जो अहो य राइ य परदव्वहरणपसत्तो जीवघाती य एस तेणाणुबंधी ३, सारक्खणाणुबंधी णाम जो अत्थसरीरादीणं सारक्खणानिमित्तं णिच्चमेव आहम्मिएसु कारणेसु पवत्तइ अचोरं चोरमितिकाउण घाएइ, असंकणिज्जे य संकइ, एस सारक्खणाणुबंधी, रोइ चउव्विहंपि गतं । इदाणि एतस्सेव लक्खणाणि भणंति, ताणि इमाणि चत्तारि, तं०-ओसण्णदोसे बहुदोसे अण्णाणदोसे आमरणंतदोसे, तत्थ ओसण्णदोसे णाम जो एवं ताणेव हिंसाणुबंधादीणं चउण्हं रुइकारणाणं एगंतरंमि कारणे अभिणिदिट्ठो पुणो २ तं चेव समायरइ वाहिओविव अप्पत्थमोइत्तणेणं रोगं वड्डइ एवं सोऽवि पावकम्मरोगं वड्डइ एस अभ्यन्तरे तपसि ध्यानम् ॥ ३१ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ ३६ ॥ वातिं, तं च सेलेसिं पडिवण्णयस्स भवइ, समुच्छिण्णकिरियाणाम जस्स मूलाओ चेव किरिया समुच्छिण्णा, अजोमिचिवुत्तं भवइ, अहवा इमा समुच्छिण्णकिरिया जस्स मूलाउ चेव छिण्णा किरिया, अबंधउत्तिवुत्तं भवति, अपडिवाई णाम जो जोयनिरोधेण अप्प- डिएणं चेव केवली कंमाइ तडतडस्स छिदिऊण परमणावाधत्तं गच्छइ, एवं समुच्छिण्णकिरियमपडिवातिच्च भण्णइ, सुक्क- ज्झाणस्स चउरो मूलमेया वण्णिआ । इदाणि एतेसिं चेव जो जस्स विसयो सो भण्णइ- तत्थ आदिछाणि दोणि चोइसपुच्चिस्स उत्तमसंघयणस्स उवसंतखीणकसायाणं च भवइ, तत्थ निदरिसणं- ‘पढमं वितियं च ज्ञायंति, पुच्चाणं जे उ जाणमा । उवसंतेहिं कसाएहिं, खीणेहिं च महासुणी ॥ १ ॥ उवरिछाणि पुण केवलस्स भवति, एत्थ निदरिसणं, उवरिछाणि ज्ञाणाणि, तातिणो गुणसिद्धिओ । खीणमोहा ज्ञियायंति, केवली दोणि उत्तमे ॥ १ ॥ जदाज्यं परिणामविसेसेण विइयज्झाणं बोलीणो तइयं पुण न ताव पावइ ज्ञाणंतरे चेव वड्डइत्ति, एयंमि अंतरे केवलणाणं उप्पज्जति, एतेसिं निदरिसणं- ‘वितियस्स तइयस्स य, अंतरंमि उ केवलं । उप्पज्जइ अणंतं तु, खीणमोहस्स ताचिणो ॥ १ ॥’ इदाणि जोगं पडुच्च भण्णइ, तत्थ पढमिछगं एकंमि वा जोगे तिसु वा जोगेसु वड्डमाणस्स भवइ, वितियं पुण णियमा तिण्हं जोगाणं अण्तरे भवइ, तइयं कायजोगिणो भवइ, चउत्थं अजोगिणो भवइ, एत्थ निदरिसणं- ‘जोगे जोगेसु वा पढमं, वितियं जोगंमि कम्हिवि । तियं च काइए जोगे, चउत्थं च अजोगिणो ॥ १ ॥’ इदाणि लेस्साओ पडुच्च भण्णइ, पढमविद्याइं सुक्कलेसाए वड्डमाणस्स भवन्ति, तइयं परमसुक्कलेसाए वड्डमाणस्स भवति, चउत्थं अलेसस्स भवइ, भणियं च- ‘पढमवितियाए सुक्कं, ततियं परसुक्कं । लेस्सातीतं तु उवरिछं, होइ ज्ञाणं विद्याहियं ॥१॥ इदाणि कालं पडुच्च भण्णइ-पढमवितियाइं जइ कहंचि कालं करइ तओ अणुत्तरेसु उववज्जइ, उवरिछाणि दोणि सिद्धिसाहणाणि, अभ्यन्तरे तपसि ध्यानम् ॥ ३६ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ३८ ॥ संजमतवज्जुत्तो सो भम्मो मंगलमुक्कट्टं भवइ, एवं च ठाविए पक्खे सीसो आह- जो एस भणिओ भम्मो मंगलमुक्कट्टं अहिसा संजमो तवोत्ति एस किं आणाए गेण्हेतव्वो, एत्थ उदाहरणं वा किंचि ?, आयरिओ आह- उभयथाऽपि, आणाए गि- ण्हियव्वो उदाहरणमवि अत्थि चेव, एत्थ गाथा ‘जिणक्खणं सिद्धमेव’ गाथा (४९-३३) जिणाणं वयणं २, जिणा चउव्विहा वण्णेतन्वा जहा हेट्ठा वणिण्या, एत्थ भावजिणेहिं अहिसारो, तेसिं भावजिणाणं वयणं सव्वन्नुत्तणेण आकप्पं गिक्खयणिज्जं पुव्वं सिद्धमेव भवति, भणितं च-“वीतरागो हि सव्वणू, मिच्छं गेव पभासइ। जम्हा तम्हा वई तस्स, भूतत्था तच्चदरिसणी॥१॥” तहावि सीसस्स पच्चयणिमित्तं उदाहरणं भणिज्जइ, जहा उदाहरणं तहा सोतारं पडुच्च हेऊवि भण्णइ, ण केवलं उदाहरण- हेऊण चेव एक्कं भण्णति, किन्तु ‘कत्थवि पंचावयव’ (५०-३३) गाथा, कत्थय सीसस्स पच्चयनिमित्तं महवित्थारण- निमित्तं च पंचावयवोव्वेतेण वयणेण वक्खमाणं भण्णइ, कत्थइ पुण दसावयवोव्वेतेणति, सीसो आह- किं कारणं पुण सव्वकाल- मेव पंचावयवोव्वेतेण दसावयवोव्वेतेण वा वयणेण वक्खमाणं ण भण्णइ ?, आयरिओ आह- ‘हंदि सवियारमक्खायं’ हंदि ससो उप्पदरिसयइ-एयंमि वा पगारे अण्णंमि वा वक्खणिज्जमाणे सोयारमासज्ज कत्थइ आगममेत्तमेव कहिज्जइ कयाइ दिट्ठतो कयाइ हेऊ कयाइ आगमहेउदिट्ठता तिण्णिंवि, कदाइ आगमहेउदिट्ठतोवसंथारणिगमणावसाणेण पंचावयवेण कहिज्जइ, कदायि पुण दसा- वयवेण, तत्थ पुंवि ताव एतेसि पंचण्हं अवयवाणं लक्खणं वणिज्जइ, तत्थ साहणियस्स अत्थस्स जो निहेसो एस पतिण्णा, जहा जिणपवयणं पंचत्थिकायो लोगो भण्णइ, एवमादी, कुत्तिथियाणवि जो जस्स समए चेव पइण्णाए साहणत्थं दिज्जइ, इदाणि दिट्ठतो-यत्र लौकिकानां परीक्षकाणां च बुद्धिसाम्यं स दृष्टान्तः, तत्थ लोहयगहणेण गोवालादी तत्तवाहिरो जणो गहिओ, दृष्टान्तः पंचावयवाः ॥ ३८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि १ अध्ययने ॥ ४१ ॥ मायाए वीधीए पट्टविया जहा मच्छे अणेहि जा भाउगाणं ते सिज्झति, ताए य समावर्त्तीए सो चैव मच्छो आणिओ, चेडीए काले- तीए नउलओ दिट्ठो, चेडीए चिन्तियं-एस नउलो सम चैव भविस्सइत्ति उच्छंगे कओ, थविज्जंतो य थेरीए दिट्ठो, माऊय तीए भणितं-किमेतं तुमे उच्छंगे कयं ? सावि लोभं गया न साहइ, ताओ दोअवि परोप्परं पहनाओ, मा थेरी ताए चेडीए तारिसे मम्मपदेमे आहता जेण तक्खणमेव जीवियाओ ववरोविया, तेहिं तु दारएहिं सो कलहवइयो नाओ, सो नउलओ दिट्ठो, थेरिगा य पाणविमुक्का निसट्ठं धरणिंयले पडिया दिट्ठो, इमो सो अणत्थो अत्थोत्तिकारुणं तं दारियं एगस्स गोहस्स दाउं तस्स अवातेण दोवि भायरो पव्वइया, तेहिं दारएहिं तन्निमित्तं अवातो कओ, थेरियाए न कओ, एवमत्थजायस्स कारणगाइयस्स अवातो करणीओ, एतदेव विनाशकारणं भवइ इह परलोए य, एरिस्सं दव्वओ आहरणं भवइ । इट्ठाणिं खेत्तावायो, खेत्तावायो नाम जो जतो अवायंति काऊण मच्छइ जहा दसारा महुराओ जरासिधुरायभयात् चारवइ गया, एवं साहुणावि असिवादीहिं कारणेहिं खेत्ता- वाओ कायव्वो, तो नित्थरेहिंति, जहा दसारा णित्थिण्णा । कालावायो नाम जो जस्स कालस्स अवायं करेइ, जहा दीवायण- परिक्खायओ दारवइ मा विणासेहामित्ति तेण अवातेण पट्ठितो उत्तरापहं गतो, एवं साहुणावि दुब्बिक्खस्स अवातो असिवाणं च कायव्वो, ण उ अपुण्णे आगंतव्वं मूढत्ताए । भावावाए उदाहरणं खमओ, एको खमओ चेह्णएण समं भिक्खायरियं गओ, तेण तत्थ मंडुकलिया मारिया, चेह्णएण भणियं-मंडुकलिया ते मारिया, अरे दुट्ठसेह ! चिरमइया चैव सा, ते गया, पच्छा रत्तिं आवस्सए आलोएताण खमएण सा मंडुकलिया णालोइया, ततो चेह्णएण भणियं- खमगा ! तं मंडुकालियं आलोएहि, खमओ रुद्धओ तस्स चेह्णस्स खेह्णमयं धेत्तुण उद्दाइओ, असिआलयस्संमे आवडिओ वेगेण एतो, मओ जोतिसिएसु उववण्णो, तओ चइत्ता दिट्ठीविसाणं क्षेत्रकाल- भावापायाः ॥ ४१ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ ४६ ॥ अणुवलम्बेमाणो सुहृदुक्खइच्छाओ सपुरिसकारादीहिं कारणेहिं साहिज्जइ, भत्थित्ति पच्चक्खं दीसए, लोए विज्जमाणो देवदत्तो दव्वओ अस्सपट्टातो हत्थिखंधं दुरुहइ खित्तओ गामाओ नगरं गच्छइ कालओ सरदकालाओ हेमंतकालं संकमइ भावे कोहाओ माणं संकमइ, एवं मायाई, जीवोऽवि माणुस्ससरीरं विप्पजहाय देवसरीरं उवचिणाइ, एस दव्वओ, खित्तओवि मणुस्सभवे तस्स अण्णाओ ओगाहणाओ अण्णाओ देवभवे, कालओवि स एव मणुस्सभवे परिमितवरिसायू भवित्ता देवभवे पल्लिओवमट्ठिइओ जायइ, भावओवि अट्ठज्झाणी भवित्ता धम्मज्झाणी भवइ, एवमादीहिं किंचि पच्चक्खओ अणुवलम्बमाणोऽवि जीवो लक्खणयो गेण्हियव्वो, यो उवयोगलक्खणेत्ति भण्णइ, एत्थ दिट्ठंतो घडो, जहा अजीवदव्वस्स घ स्स वट्ठमाणअतीतानागताए काले उवओगो नत्थि, ण य सो जीवो इच्छिज्जइ, कम्हा ?, उवयोगलक्खणाभावो, जीवस्स य उवयोगो लक्खणं फुडं दसिइ, तम्हा ओ उवयोगलक्खणो अत्थो सो जीवोत्ति, भणियं च—“उवयोगजोगइच्छाविलक्खणाणवलचेट्ठियगुणेहिं । अणुमाणा णायव्वो अग्गिज्जो इंदियगुणेहिं ॥१॥ जो चिट्ठइ कायगतो जो सुहृदुक्खस्स वेदणा णिच्चं । विसयसुहजाणओविय सो अप्पा होइ णायव्वो ॥ २ ॥” एत्थ सीसो आह—जइ उवयोगो जीवलक्खणं तेण एग्गिदियाणं अजीवत्तं भवइ, कंहं ?, जम्हा तेसि उवयोगस्स अभावो, एत्थ दिट्ठंतो घडओ, जहा तीयाणागएसु कालेसु न कदावि (तस्स) उवयोगो विज्जइ तहा एग्गिदियाण जीवाण उवयोगो न विज्जइ, तम्हा उवयोगस्स अभावे एग्गिदियाणं ते अजीवया आवण्णा, आयरिओ आह—अहो ! ताव समयत्ताहिराणि वयणाणि मन्नयसि, णणु सव्वण्णुपणीए मग्गे परूवियं, जहा ‘सव्वजीवाणंपि य णं अक्खरस्स अणंतभागो णिच्चुग्घाडिओ’ अत्थऽक्खरं णाम चेयण्णंति वा उवयोगोत्ति वा अक्खरत्ति वा एगट्ठा । तत्थ सुयणाणं आभिणिबोहियणाणं च पडुच्चं भण्णति-सव्वसुद्धो आहरणे स्थापना- कर्म ॥ ४६ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ४७ ॥ उवयोगो अणुत्तरोववाह्याणं, तओ उवरिमगेवेज्जाणं असंखेज्जगुणपरिहाणी, एवं अमंखेज्जगुणपरिहाणीए सेढीए जाव पुढविकाइया- ताव भाणियव्वो, तम्हा एगिंदियाण उवयोगस्स अणंतभागो निच्चुग्घाडिओ, तओ सो चेव अणंतभागो तेसिं मइणाणं सुयणाणं च भण्णइ, तम्हा जं भणसि जहा तेसिं उवयोगो चेव नत्थि, उवयोगअभावेण य तेसिं अजीवत्तं भवत्ति तं मिच्छा, उवाउत्ति- दारं गतं । इदाणिं ठवणाकम्मिस्सि दारं भण्णत्ति, तं च कंचि अत्थं तारिसं परूवेऊणं अत्तरुइयस्स अत्थस्स परूवणं करेइ एवं. जहा पुंडरीयज्जयणे पुंडरीयं परूवेऊणं अण्णाणि मयाणि दूसियाणि, निव्वयणं च सव्वनयविसुद्धं पवयणमुवदिट्ठं, एवमादि ठवणाकम्मं भण्णइ, अहवा ठवणाकम्मं उदाहरणं--जहा एगंमि नगरे एगो मालागारो सण्णाइओ पुप्फे घेत्तूण वीहीए एइ, सो अतीव वच्चइओ, ताहे सो सिग्घं वोसिरिऊण सा पुप्फचितिया तस्सेव उवरि पच्छत्थिया, ताहे लोगो पुच्छइ किमेयं जेणेत्यं पुप्फाणि छहेसि?, ताहे सो भणइ अहं ओलोडिओ, एत्थं हिंसुसिवो णाम, एयं तं वाणमंतरं, हिंसुसिवं नाम वाणमंतरं, एवं जइ किंचि उड्ढाहं पावणियं कयं होज्जा केणइ पमायेणं ताहे तहा पच्छादेतव्वं जहा पज्जन्ते पवयणुग्घभावणा भवति, एवं जइ किंचिदेव जीवत्तिताएवि परप्पवायी निग्गहट्ठाणं भणेज्जा तारिसं किंचि भासमाणस्स फलं होज्जा, तत्थ साहुणा तं तस्स वयं भासिज्जमाणमेवअहं कायव्वं णयदिट्ठीए जेण परप्पवादी निप्पट्ठपसिणवागरणो भवति, ठवणाकम्मिस्सि दारं गतं । इदाणिं पडुप्पण्णाविणासी णाम, जहा एगो वाणियओ तस्स बहुगाओ भणिणीओ भाणिणेज्जा भाउज्जायाओ य, तस्स घरसमीवे राउलगा गंधव्विया संगीतं करेत्ति दिवसस्स तिण्णि वारे, ततो वाणियगमहिलाओ तेण गीतसहेण तेसु गंधव्विएसु अज्झोववण्णाओ किंचि कम्मादाणं न करेत्ति, पच्छा तेण वाणियएण विचित्ति- जहा विणट्ठा एयाउत्ति, को उवाओ होज्ज जह ण विणस्संत्तित्ति काउं आहरणे प्रत्युत्पन्न- विनाशी ॥ ४७ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि १ अध्ययने ॥ ४८ ॥ मिसस्स कहियं, तेण भणियं- अत्तणो घरसमीवे वाणमंतरं कारावेहि, तेण कथं, ताहे पाडहियाण रूवगा दाउं वावारेइ. जाहे गंधविया संगीययं आढवेंति ताहे ते पाडहिया पडहे देंति, एवं सो दिणे दिणे फुसेंति गायंति य, ताहे तेसं गंधवियाणं विग्घो जाओ, पडह-सहेण न सुव्वइ गंधव्वो सद्दो, तओ ते राउले उवड्डिया, वाणियओ सद्दविओ, किं विग्घं करेसित्ति?, भणइ-मम घरे देवो तस्साहं तिन्नि वेले पडहे दवावेमि, ताहे ते रण्णा भणिया-जहा अन्नत्थ गायह, किं देवस्स दिणे दिणे अंतराइयं कज्जइ?, एवं आयरिएणावि सीसेसु आगारीसु अज्झोववज्जमाणेसु तारिसो उवाओ कायव्वो जहा तेसि तस्स दोसस्स निवारणा भवइ, एवं जीवचिंताएवि नाहियवाइयाणं अदूरसामंते ठिच्चा जीवस्स अत्थिभावो पणविज्जमाणो जइ केइरत्तपडा भणेज्जा-सव्वे भावा चेव नत्थि, किं पुण जीवोऽवि, तत्थ भणेंति- जं एतं ते वयणं जहा सव्वभावा नत्थि एयं वयणं नत्थि?, एसवि भावो, जति भणइ-अत्थि तो जं भणइ सव्वभावा नत्थिचि न जुज्जइ, अह एतं नत्थि तो अम्हं सिद्धो चेव पक्खो, केणऽम्हं पक्खो वूसिउत्ति, एवं सो एवमाहं हि हेऊहिं तहा कायव्वो जेण पहाय पहं न एइ, पडुप्पण्णाविणासित्तिदारं गयं। समत्तं च आहरणात्ति दारं। इदाणि आहरणे तदे-सत्ति दारं, से चउव्विहे, तं-अणुसिद्धि उवालंभे पुच्छा णिस्सावयणे, अणुसद्धीए सुभहा उदाहरणं, चेपाए णगरीए जिणदत्तस्स साव-गस्स सुभहा नाम धूया, सा अतीव रूववती, सा य केणइ उवासएण दिट्ठा, सो ताए अज्झोववण्णो तं मग्गइ, सावओ भणइ-णाहं मिच्छादिट्ठिस्स धूयं देमि, पच्छा सो साहूणं सगासं गओ, धम्मो यऽणेण पुच्छिओ, कहिओ साहूहिं, ताहे कवडसावयधम्मं पगहिओ, तत्थ से सव्वभावेण चेव उवगतो धम्मो, ताहे तेण साहूणं सव्वभावो कहिओ, जह मए दारियाकए णं (कयं), णायं जहा कवडेण कज्जिहिइ, अण्णाणि मे देह अणुव्वयाणि, लोए पगासो सावओ जाओ, तओ काले गए वरगा मालया पट्टवेन्ति, ताहे तेण जिणदत्तेण आहरण- देशेऽनुष्ठितः शास्तिः ॥ ४८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ५१ ॥ वादी उक्तालभितव्यो. जं एयं कुसत्थं देवाणुप्पिएण जीवस्स अत्थिभावपडिसेहं उच्चारियं तं जीवस्सेव पभावेण, कम्हा?, जम्हा अचेयणा षडादया भावा जीवभावपडिसेहगाणि सत्थाणि न तरंति उच्चारिउं, तम्हा जीवस्सेव तं सामत्थं, जं तुमं एयं कुसत्थं जीवभावपडिसेहं उच्चारिसिन्धि, भणियं च-“जस्सेव पभावुम्मिहियाइं तं चेव हयकयग्वाइं । कुमुदाइं अप्पसंभाविंयाइं चंद उवह- संति ॥१॥” उक्तालंभेत्ति दारं गतं । इदार्णि पुच्छा, जहा कोणिएण रणणा सामी पुच्छिओ-चक्कवट्ठिओ अपरिचत्तभोगा काल- मासे कालं किच्चा कहिं उववज्जंति?, सामिणा भणियं-अहं सत्तमाते उववज्जंति, ताहे भणइ-अहं सत्तमीए न किं उववज्जिस्सामि? सामिणा भणियं-तुमं छट्ठपुढवीए, सो भणइ-अहं सत्तमीए किं ण उववज्जिस्सामि?, सामिणा भणियं-सत्तमीए चक्ककट्ठी उववज्जंति, सो भणइ-अहं किं ण होमि चक्ककट्ठी? ममवि चउरासीइं रहाइण सयसहस्साणि, सामिणा भणियं-तव रयणाणि नत्थि, ताहे सो कित्ति- माइं रयणाइं करेत्ता ओयवेउमारट्ठो, तिमिसगुहाए पविसिउं पवत्तो, कयमालिएण वारिओ, भणिओ य-वोलीणा चक्ककट्ठिओ बारसवि, णस्सिहिंसि तुमं, वारिज्जंतो न ठाइ य, पच्छा कयमालिएण आहओ, मओ य छट्ठिं पुढवि गओ, एवं बहुस्सुता वज्झा- गमा आयरिया अट्ठाणि हेऊणि पुच्छियव्वा, पुच्छित्ता य सक्कणिज्जाणि समारियव्वाणि, असक्कणिज्जाणि परिहरियव्वाणि, भणियं च-“पुच्छह पुच्छावेह य पंडिए साहवो चरणजुत्ते । मा मयलेवविलित्ता पारत्तहियं ण याणिहिह ॥१॥” तद्वा जीवचित्ताए- वि णाहियवादिया मण्णंति-केण हेतुणा देवाणुप्पिया ! एवं भणइ जहा नत्थि जीवादिया भावा, सो य णं भणेज्ज-अपचक्कस्सत्तणेणं, जइ पचक्कस्समेव करयल इव आमलगं दीसेज्जा तो नव्वीर अहं सद्देज्जा, एवं भणंतो सो वादी वडिभण्णइ-जदि जं तुम्हारिसेहिं चक्खुदंसीहिं णोवलम्भइ तं नत्थि एवं हिमवंतस्स पच्चयस्स पलपरिमाणेण गणिज्जमाणस्स पलण्णपरिमाणं वक्वते न लम्भइ; पुच्छायां कोणिकः ॥ ५१ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ५२ ॥ किं तस्स पलग्गपरिमाणस्स अभावो भवउ ? , तम्हा जं भणसि-जं इहं पच्चक्खं नोवलम्भइ तं नत्थिचि तं मिच्छा, पुच्छत्ति दारं गतं । इदाणिं निस्सावयणे गागलियादओ जह पच्चइया तावसा य एवं जहा वइस्सामिउप्पसीए आवस्सए तहा वण्णेत्ता गोतमसामिस्स य अद्धिती, तत्थ भगवता भणितं-चिरसंसिद्धो सि य गोतमा !, अण्णे य तण्णिस्साए अणुसासिया दुमपत्तए अज्झयणे, एवं जे असहणा ते अण्णमहवसंपण्णणिस्साए अणुसासियव्वा । तहा जीवचिन्ताएवि जस्स एस पक्खो जहा नत्थि सच्चभावा ते अण्णावदसेणं पण्णविज्जंति, इयरहा रागदोसयत्तिकारुणं पदूसेज्जा, तेण इमाए परिवाडीए पण्णविज्जंति, जस्स वादिणो सच्चभावा सुण्णा तस्स दसादीणं गुणाणं णत्थि फलं, एवमाईहिं कारणेहिं अण्णं चेव निस्साए पण्णविज्जइ, आहरण-देसोत्ति दारं गतं । इदाणिं, आहरणतद्दोसेत्ति दारं, से य चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा-अहम्मजुत्ते पडिलोमो अत्तोवण्णासे दुरुवणीए । तत्थ अहम्मजुत्ते उदाहरणं-चाणक्केण नंदे उत्थाविते चंदउत्ते य रायणे पट्टविए एवं सच्चं वण्णेत्ता जहा सिक्खाए, तत्थ नंदसंतेहिं मणुस्सेहिं सह सो चोरग्गाहो मिलिओ नगरं मुसइ, चाणक्केवि अण्णं चोरग्गाहं ठविउकामो तिदंडं गाहेऊण परिवाय-गवेसेण णगरं पविट्ठो, गओ नलदामकोलियसगासं, उव्विट्ठो करणसालाए अच्छइ, तस्स य दारओ मक्काडएण खइओ, तेण कोलिएण विले खणित्ता दट्ठं, ताहे चाणक्केण तं भण्णइ-एते किं डहासि ? , कालिओ भणइ-जइ एते समूलजाता न उच्छातिज्जंति तो पुणोवि खाइस्सति, ताहे चाणक्केण चितियं-एस मए लद्धो चोरग्गाहो, एस (चोर) नंदत्तणे य समुद्धरिस्सइ, चोरग्गाहो कओ, तेण खंडिया विस्संभिया, अम्हे संमिलिया मुसामोत्ति, तेण अण्णेवि अक्खाया जे जत्थ मुसगा, बहुगा सुहतरायं मुसीहामोत्ति, ताहे ते तेण चोरग्गाहेण मेलिऊण सच्चेवि मारिया, एवमधम्मजुत्तं न भणितव्वं न कात्तव्वंति, तहा जीवचिन्ताएवि कयाइ तारिसं निश्रावचने गोतमः आहरणत- द्दोषे अधर्म- युक्ते नलदामः ॥ ५२ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो १ अध्ययने ॥ ५३ ॥ पावयणियं कज्जं णाऊण तहारूवं सावज्जं पि कज्जेज्जा जहा उलुगेण सो परिव्याहो मोरीनउलीवाराहि एवमाइआहिं विज्जाहिं सो विलकूखीकओ, एवमादि, अधम्मजुत्तेत्ति दारं गतं । इदाणिं पडिलोमेत्ति दारं, तत्थ अभयपज्जोया उदाहरणं, एकेण हिओ अवरेण पडिहिओ, एयं अक्खणायं जहां जोगसंगहेसु सिक्खाए तहा चेव भाणियच्चं, एवं विज्जाएवि, जइ कोऽपि परप्पवादी भणेज्जा-मम दो रासी, तत्थ भणितच्चं-ण याणसि, तिण्णि रासी, ततियं रासिं ठावित्ता पच्छा वत्तच्चं-दो चेव रासिणो, मया एयस्स बुद्धिं परिभूय भाणियं जहा तिण्णि रासी एवमादी, पडिलोमेत्ति दारं । इदाणिं अत्तुवन्नासे, जहा एगस्स रण्णो तलायं सच्चर-ज्जस्स आहारभूयं, तं च तलायं वरिसे २ भरियं भिज्जइ, ताहे राया भणइ-को सो उवाओ होज्जा ? जेणऽयं न भिज्जेज्जा, तत्थ एगो कविलिओ मणूसो भणइ-जइ नवरं महाराय ! एत्थ पिंगलो कविलियातो से दाढिया से सिस्से कविलयं, से जीवंतओ चेव जंमि ठाणे भिज्जइ तंमि ठाणे निक्खिप्पइ तो नवरं न भिज्जइ, पच्छा कुमारा मच्चेण भाणियं-महाराय ! एसो चेव एरिसो जारिसं भणइ, एरिसो नत्थि अण्णो, पच्छा सो तत्थेव निक्खिओ मारित्ता, एवं एरिसं न भणितच्चं जं अप्पवधाए भवइ । तहा जीव-चित्ताएवि ण तारिसं साहुणा भणियच्चं जेण दुस्साहिओ वेयालो इव अप्पणो चेव वहाए भवइ, एत्थ निदरिसणं जहा कोऽवि भणेज्जा-एगिदिया सजीवा, कम्हा ? जेण तेसिं फुडो उस्सासनिस्सासो दीसइ, दिट्ठतो घडो, जहा घडस्स निज्जीवत्तणेण उस्सासनिस्सासो नत्थि, ताण उस्सासनिस्सासो फुडो दीसइ, तम्हा एते सज्जीवा, एवमादीहिं विरुद्धं न भासितच्चं, अत्तु-वण्णासो नाम दारं गयं । इदाणिं दुरुवणीत्तत्ति दारं, तत्थ उदाहरणं-तच्चणिओ मच्छे मारंतो रण्णा दिट्ठो, ताहे रण्णा भणिओ-किं मच्छे मारेसि?, तच्चणिओ भणइ-अवीलकं न सक्केमि पातुं, अरे तुमं मज्जं पियसि?, भणइ-महिलाए अत्थिओ न लहामि प्रतिलोमा- त्सोपन्यास दुरुवणीताः ॥ ५३ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ १ अध्ययने ॥ ५४ ॥ (ठाउं), महिलावि ते?, भणइ-जायपुत्तमंडं कइं छुइमि?, पुत्तावि ते?, भणइ-किं खु खचाइं खणाति?, खत्तखाणओवि से, अण्णं किं खोडिपुत्ताणं कम्मं ?, खोडिपुत्ताओवि से, किहइं कुलपुत्तओ बुद्धसासणे पव्वयइ?, एरिसं न भणियव्वं जेण अप्पाणतो भंडाविज्जइ पवयणं च उब्भामिज्जइ। तहा जीवच्चिताए वादिणा तहा भणितव्वं वादे जेण न जिव्वइ परवाइणा, दुरुवणीतंति दारं गयं, आहारणतहोसेत्ति दारं सम्मत्तं। इदाणि उवण्णासोवणयणेत्ति दारं, से य चउव्विहे पणत्ते, तव्वत्थु अन्नवत्थु पडिणिभे हेऊ, तत्थ तव्वत्थुए उदाहरणं-एगंमि देवकुले कप्पडिया मिलिया, भणंति-केण भे भमंतेहिं अच्छरियं किंचि दिट्ठं ?, तत्थ एको कप्पडिओ भणइ-मए दिट्ठंति, जइ पुण एत्थ समणोवासओ नत्थि तो साहामि, तओ सेसएहिं भाणियं-नत्थि समणोवासओ, पच्छा सो भणइ-मए हिंढंतेण पुव्ववेतालीए समुद्दस्स तडे रुक्खो महइमहंतो दिट्ठो, तस्सेगा साहा समुद्दे पइट्ठिया, एगा थले, तत्थ जाणि पत्ताणि जले पडंति ताणि जलचराणि भवंति, जाणि थले ताणि थलचराणि भवंति, ते कप्पडिया भणंति-अहो अच्छेरयं देवेण भट्टारएण निम्मिंतंति, तत्थेगो सावओ कप्पडिओ सो भणइ-जाणि मज्झे पडंति ताणि कि भवंति ?, ताहे सो खुद्धो भणइ-मया पुव्वं चेव भणियं-जइ सावगो नत्थि तो कहेमि, एवं कुस्सुइसु आघविज्जंतीसु तत्तो चेव ताओ चेव वत्थूओ किंचि वत्तव्वं जेण तुण्हिका भवंति। तहा जीवच्चिताएवि जाहे नाम कोवि वइसेसिगायो भणेज्जा-जहा एगंतेणेव निच्चो जीवो, कम्हा ?, जम्हा अरूवी जीवो, एत्थ दिट्ठतो आगासं, जहा आगासं अरूवी तं च निच्चं दंसइ तहा जीवोवि अरूवि सोवि निच्चो भविस्सइ, तम्हा निच्चो जीवोत्ति, एत्थं सो भणइ-जं अरूवि तं निच्चं भवइ तं कइ उक्कोचणआउंटणपसारणगमणादीणि कम्माणि, ताणिवि अरूवीणि अह अपुव्वाणि, तम्हा अणेगंतिगो एम हेउत्ति काऊण विरज्जइ, तव्वत्थुएत्ति दारं गतं। इदाणि तदणवत्थुएत्ति उपन्यासो- पनयने तद्वस्तु- तदन्य- वस्तु च ॥ ५४ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ५७ ॥ संभारियं, उवाचद्वा य, एवं सीसोवि केई पयस्थे असदहंतो विज्जादीहिं देवयं आकंपयित्ता सहहावेतव्वो, तथा वादीवि कुत्तियाव- णादीहिं णिज्जिणियव्वो जहा सिरिगुत्तग लल्लकयो, गओ यावकः। इदाणिं थावकः, स्थापकस्य का रूपसिद्धिः, छा गतिनिवृत्तौ धातुः, ‘धात्वादेः षः स’ (पा. ६-१-६४) इति सकारादेशः, निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः ठकारस्य थकारः स्था, भूवादयो धातव (पा. १-३ १) इति धातुसंज्ञा, अस्य विग्रहः तिष्ठति कश्चित् तिष्ठतमन्योऽनुप्रयुक्ते तिष्ठ तिष्ठेत्येव विग्रह्य हेतुमति चे- (पा. ३-१-३६) ति णिच् प्रत्ययः, अनुबंधलोपे कृते ‘अर्त्तिहील्लीरीकनूयीक्ष्म्याद्यातां पुग् णा’ (पा. ७-३-३६) विति पुक्, अनुबंध- लोपे ‘युवोरमाकाविति’ (पा. ७-१-१) अकादेशः, णरनिटी (पा. ६-४-५१) ति लोपः, परगमनं, स्थापकः। इदाणिं प्रातिपदिकार्थः, लिंगपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा सु उकारलोपः स्त्वं विसर्जनीय स्थापकः, जहा एगो परिवाययो भण्णइ, अहं लोगमज्झं जाणामि, तत्थेगेण सावगेणं भण्णइ-कयं लोगमज्झं, ताहे सो परिवायओ एगमि भूभीपएमे खीलं निखणित्ता भण्णइ-एयं लोगमज्झं, पुणो अण्णत्थ पुच्छिओ, तत्थवि खीलं निहणित्ता भण्णइ-एयं लोगमज्झं, पुणो अण्णत्थ पुच्छिओ, तत्थवि खीलं निहणित्ता भण्णइ- इमं लोगमज्झं, एवं सो सावगो तेण समं अण्णाए लेस्साए वच्चइ, सोविच चउसुवि दिसासु खीलं निहणिऊणं भण्णइ-एयं लोग- मज्झं, जत्थ जत्थ कोई पुच्छइ तहिं तीहिं सो खीलं निहणिऊण भण्णइ-एयं लोगमज्झं, ततो सावण भणिओ-जइ पुव्वाए पडिदि- साए लोगमज्झं तो अवराए दिसाए ण जुज्जइ, एवं पुव्वावरविरुद्धमासियत्तणेण फुडो सुसावादो भवइत्ति, सो तेण सावण निरुत्तरो कओ। एवं जीवत्तिताएवि साहुणा तारिसं भाणियव्वं तारिसो गेण्हिऊण णयव्वो जस्स पुरो उत्तरं चेव दाउं नं तरइ जेण पुव्वावरविरुद्धदोसो य न भवइ, एवं स्थावकः ॥ इदाणिं वंसगो-व्वंसकस्य का रूपसिद्धिः, ‘असि समाधाने’ धातुः कुरादौ स्थापक- व्वंसक- लूपाः ॥ ५७ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ५८ ॥ पठितव्यः, इदितोऽनुबंधीतोरिड् (नुम्) विपूर्वस्य विअंस एवं स्थिते ‘भूवादयो धातव’ इति धातुसंज्ञा स्वार्थिको णिच् अनुबंध- लोपः परगमनं व्यंसि, सनाद्यन्ता (पा. ३-१-३२) इति धातुसंज्ञा, प्रत्ययाधिकारे ण्वुल्प्रत्यया (पा. ३-१-१३३) वि- ति ण्वुल् प्रत्ययः, अनुबंधलोपः, युवोरनाका’ (पा. ७-१-१) विति अकादेशः, णेरनिटीति (पा. ६-४-५१) णिलोपः, परगमणं, व्यंसयतीति व्यंसकः, जहा एगो गामेच्छओ सगडं कड्डाण भरेऊण नगरं पविट्ठो, गच्छंतेणं अंतराले एगा तित्तिरी मइया दिट्ठा, तं मेण्हिऊण सगडस्स उवरिं पक्खिविऊण नगरं पविट्ठो, सो एगेण नगरधुत्तेण पुच्छिओ-कहं सगडतित्तिरी लब्भइ १, तेण गामिच्छएण भण्णइ-तप्पणादुगालियाए लब्भइ, ततो तेण सक्खिणो आहयित्ता सगडं सतित्तिरीयं गहियं, ततो सो गामिच्छओ दीणमणसो अच्छइ, तत्थ य एगो मूलदेवसरिसो दिट्ठो, पुच्छिओ-किं सीयसि? अरे देवाणुप्पिया!, तेण भणियं-अहमेगेण गोहेण इमेण परारेण छलिओ, तेण भणियं-मा बीहेहि, तस्स तप्पणादुगालियं तुमं सोवयारं मग्ग, माइट्ठाणं सिक्खाविओ, एवं भवउत्ति भणिऊण तस्स सगासे गओ, भणियं चणेण-मम तइ सगडं हितं तो मे इदाणिं तप्पणादुगालियं सोवयारं दवावेहि, एवं होउत्ति घरं नीओ, महिला संदिट्ठा-अलंकियविभूसिया परमेण विणएण एतस्स तप्पणादुगालियं देहि, सा वयणसमं उवट्ठिया, ततो सो सागडिओ भणइ-ममं गुलीं छिण्णो, हमो-चारेण वेदितो, न सक्केमि आदुयालेउं, तुमं आदुयालेउं देहि, आदुयालिया तेण हत्थेणं गहिया, गामिच्छओ तेण समं संपट्ठिओ, लोगस्स य कहइ-जहा मए एसा सतित्तिरीरेण सगडेण गहिया, ताहे तेण धुत्तेण सगडं विसज्जियं, तं च पसादेऊण भज्जा नियत्तिया। तहा जीवचित्ताएवि कोऽवि कुप्पावयणिओ चोइज्जा जहा जिणप्प- णीते मग्गे अत्थि जीवो अत्थि घडो, अत्थिचं जीवेऽवि घडेऽवि, दोसुवि अविसेसेण वट्ठत्ता अत्थिसहतुल्लत्तणेण दीवघडाणं एगत्तं स्थापक- व्यंसक- लूपकाः ॥ ५८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ६० ॥ जितो सागडितो, ताहे धुत्तेण मोदगं मग्गिज्जइ, अच्चइओ सागडिओ, जतिकरा ओलग्गिता, ते तुट्ठा पुच्छंति, तेसि जहावत्ते सव्वं कहइ, एवं कहिए तेहिं उत्तरं सिक्खाविओ जहा तुमं खुड्डलगं मोयगं नगरदारे ठावेत्ता भण-एस मोदगो न नीति नगरदारेण गिण्हत्ति, जितो धुत्तो। एवं जीवचित्ताएवि पुव्वं समयमेव सव्वभिचारं हेउं उच्चारेउण परविस्मंभणानिमत्ते सहसा वा भणिओ होज्जा, पच्छा तमेव हेतुं अण्णेण निरुत्तवयणेणं ठावइ, एवं तूषकहेउ समत्तो॥ इदाणि जो एतेहि पक्खहेउदिट्ठंतउवणयणनिगम-णेहिं अत्थो सहिज्जइ सो भणइ-तत्थ पढमे अज्जयणे धम्मपसेसा, सा च धम्मपसेसा पंचावयवोववेतेण वा दसावयवोववेतेण वा वयणेण भणइ, तत्थ पढमे पंचावयवोववेतेण भणइ-तवेदं प्रमाणमपादिश्यते-अहिंसासंजमान्मको धम्मो मङ्गलमुत्कृष्टं, कस्माइ?, देवादिपूजज्ज्वादहदादिवत्, यथा अहंन पूज्यो मङ्गलमुत्कृष्टं च, तथा धम्मो पूज्यः, तस्मात्पूज्यत्वान्मङ्गलमुत्कृष्टं, इमे सुत्तफासि-यनिज्जुत्तीए अवयवा भणंति, ‘धम्मो गुणा अहिंसाइया उ’ गाथा (५०-६६) पुव्वद्धं, धम्मो नाम अहिंसाइया गुणा भवंति, आदिग्रहणेण संजमतवावि गहिया, अहिंसासंजमतवोववेतो जो धम्मो सो मंगलमुक्किट्ठं भवइ, एस पइण्णा ॥ इदाणि को हेउ धम्मो मंगलमुक्किट्ठं भवइ?, तत्थ सुत्तेणव पढमे हेउं भणइ-‘देवावि तं नमंसेति, जस्स धम्मं सया मणो’ देवपुज्जत्तणं हेउ. किं कारणं?, जे अधम्मिया ते देवेहिं न पूज्जंति । इदाणि सुत्तफासियनिज्जुत्तीगाहापच्छेद्वेण हेउ. चेव भणइ-‘देवावि लोणपुज्ज्या पणमति सुधम्ममिति हेउ, देवावि देवलोके युक्ता, तदेव लोणे पुज्जावि होउण जो अहिंसाइगुणोववेते धम्मं ठिओ तम्म पणमति. एत्थ चोदओ भणइ-जहा को सो धम्मं ठिओ?, आयरिओ आह-जस्म धम्मं सया मणो, अहिंसादिगुणजुत्ते जस्म मया-अविगहियं जावज्जीवं ‘मणो’ मणो चेतणो भणइ, एस हेउ मओ। इदाणि दिट्ठंतो ‘दिट्ठंतो अरहंता अणगारा वइवे य पञ्चा- तयवाः ॥ ६० ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१], निर्युक्तिः [३८...९४/३८-९५], भाष्यं [१-४]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१॥ दीप अनुक्रम [१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ६२ ॥ चेव ताव जिणाणं सासणे ठिया साधवो धम्ममणुपालयंति एसा पइण्णा गता, इदार्णि पइण्णाविमुद्धी-जहा इहं ताव जिणाणं सासणे ठिया विमुद्धं धम्मं अणुपालेति न एवं परतित्थियसमएसु विमुद्धो अणुपालणोवायो अत्थि, एत्थ सीसो चोएइ- सव्वे पवादिया अप्पणच्चियं धम्मं पसंसंति, धम्मसदो य तेसु तेसुवि उवलम्भइ, आयरिओ आह-नणु हेट्ठा वणिओ ‘सावज्जो उ कुतित्थियधम्मो जिणेहिं उ अपसत्थो’ जोवि तेसिं सासणे धम्मसदो सोवि उवचारितो, निच्छय्यो पुण अहिंसासंजमतवलक्खणो जो सो धम्मत्ति भण्णइ, जहा सिंहसदो सिंहे पाहण्णेण वट्ठइ, उवचारितो पुण अणुसुवि भवइ, एसा पइण्णाविमुद्धी गया ॥ तत्थ को स हेउत्ति ?, अहिंसादिगुणजुत्तर्ण हेऊ भण्णइ, तत्थ इमं गाहापच्छदं ‘हेऊ जम्हा सा भाविएसु अहिंसाइसु जयंति’ जम्हा ते साहवो अहिंसाइएसु पंचसु महव्वएसु सम्भावेण जयंति, कहं नाम अम्ह अक्खलियचारिच्चाणं मरणं भविज्जत्ति, एस हेऊ ॥ इदार्णि हेतुविमुद्धी भण्णइ ‘जं भत्तपाणउवगरण’ अद्दगाथा, जेण कारणेण साहवो अहिंसादीणे पंचण्हं महव्वयाणं विमुद्धिनिमित्तं भत्तपाणउवगरणवसहिसयणाइसु संजमोवकरणेसु जतन्ति, किं भणियं होइ जयंति ?, आयरिओ आह- एत्थ इमं गाहापच्छदं, फासुयं अकयं अकारियं अणुमोइयं अणुदिट्ठाणि गेण्हऊण परिभुजंति, अण्णे पुण रत्तपडादिणो कुतित्थिया ‘ण फासुअकयकारित’ गाहा, (भा. ३-६४) एसा गाहा पढियसिद्धा, एसा हेउविमुद्धी समत्ता, इदार्णि दिट्ठंतो, सो इमो जहा दुमस्स पुप्फेसु भमरो आवियती रसं’ यथेति येन प्रकारेण, ‘प्रकारवचने थाळ’ (पा. ५-३-२३) लकारलोपः, यथा दुमपुष्पयोः पूर्ववत्, भ्रमर इति ‘भ्रम अनवस्थाने’ धातुः, अस्य धातोः, प्रत्ययाधिकारे ‘क्वच्छेर (उ. पाद ३) इति ‘अर्तिकमित्रमिचमिदेविवासिभ्यश्चिद्’ इति (उ. पाद ३) अरप्रत्ययः, परगमनं, भ्रमरः, भ्राम्यति च रौति च भ्रमरः, पा दृष्टान्त- तद्धि- शुद्धि ॥ ६२ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)					
	अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [३], निर्युक्तिः [११७-१२५/११७-१२४], भाष्यं [४...]					
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः					
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ३ दीप अनुक्रम [३]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ६६ ॥	उपसंहार- तद्विशुद्धी मुक्ता नाम ‘मुञ्च मोक्षणे’ धातुः, अस्य धातोः ‘भूवादयो धात्वः’ (पा. १-३-१) इति धातुसंज्ञा , प्रत्ययाधिकारे क्तप्रत्ययः अनुबन्धलोपः कृत्वं परगमनं मुक्ताः, बाहिरम्भतेरेहि गंधेहि मुक्ताः सन्ति जे ते अविसेसियाणं ग्रहणं, लोगेति मणुस्सलोगस्स ग्रहणं, शांतिः ‘शम्भ उपशमे’ धातुः अस्य धातोः ‘भूवादयो धात्वः’ (पा. १-३-१) इति धातुसंज्ञा, प्रत्ययाधिकारे द्विधा कितप् (पा. ३-३-९४) अनुबन्धलोपः ‘अनुनासिकस्य लोः क्लिति चे’ (पा. ६-४-१५) ति आकारः, परसवर्णः परगमने शान्तिः, शान्तिनाम ज्ञानदर्शनचारित्र्याण्यभिधीयन्ते, ‘साध राध संसिद्धौ’ साध अस्य धातोः ‘कृवापाजिमिस्वदिसाधश्म्य उष्’ प्रत्ययः, अनुबन्धलोपः परगमनं साधुः, तामेव गुणविशिष्टां शान्तिं साधयन्तीति साधवः, अहवा सति अकुतोभये भण्डइ, तं चैव साहुणो अप्पमतत्तणं जीवानां शांतिं भणति, अहवा शान्तिग्रहणेण वेसिं साधूणं अत्थित्वं घेष्पति, एत्थ सीसो आह नणु एमेते समणा सुत्तत्ति एतेणेव नज्जंति जहा ते अत्थ तो पुणेवि संतिग्रहणेन पुनरुत्तं कुच्चहा, आयरिओ भणइ परिचायवयणेण सो चैव अत्थो दारिसिओ, एतेण कारणेण दोसो ण भवति, अण्णेवि णिण्हयाइ भणति जहा अम्हेवि बाहिरम्भतेरेहि मुक्ता साहुणो, शांतिग्रहणेण पुब्बो कज्जामाणेण भावसाधुणो गहिता, ते दग्घसाधुणो न गहिता, जम्हा ते अणुदएसेण सछंदा हया इव उदामा गया इव निरंकुशा हिंडंति तम्हा शांतिग्रहणं करेइ, साधव एव जोगे साहेति तम्हा साहुणो । ‘विहंगमा’ ‘गम्मल्ल सृप्त गतौ’ धातुः अस्य धातोर्विहपूर्वेस्य विहमाकाशं उच्यते, ‘भूवादयो धात्वः’ (पा. १-३-१) धातुसंज्ञा ‘गमश्चे’ ति (पा. ३-२-४७) खड् प्रत्ययः अनुबन्धलोपः, ‘खिस्सन-व्ययस्ये’ ति (मा. १-३-१) लुमागमः, पूर्वपदस्य परगमनं, विहे गच्छंतीति विहंगमाः, भमर इवामिहितं भवति, विहगमेहि तुल्ला नाम जहा विहंगमा सयं विगसितेसु पुण्णेषु अप्पाणं पीणयंति एवं साहवोवि मेहीणं सअट्टाप निठिएसु अण्ण-				॥ ६६ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+भाष्य चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [३], निर्युक्तिः [११७-१२५/११७-१२४], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥३॥ दीप अनुक्रम [३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ६७ ॥ पाणादिस्तु अष्णाणयं पीर्णेति, दाणग्रहणेन दत्तं गेहन्ति नो अदत्तं, भक्षग्रहणेन कासुयं नाम आहाकम्माद्दोसविज्जियं गेहन्ति, एसणाग्रहणेन दसएसणादोसपरिसुद्धं गेहन्ति, ते य इमे-तं० ‘संक्खिमस्सियनिस्सत्तपिहियसाहरियदायगुम्मीसे । अपरिणयलित्तच्छ्रिय एसणदोसा दस हवंति ॥१॥ एतेसि वक्खाणं जहा णिळ्मिञ्जुसीए । रता ‘रम क्रीढायी’ धातुः, अस्य धातोः क्तप्रत्ययः अनुबंधलोपः ‘अनुदात्तोपदेशेति’ (पा ६-४-३७) अनुनासिकलोपः, परगमनं, रता नाम संजमाधिकारेषु जागेसु रति कुर्वन्ति, न अरति । एवं दाणभक्षसणे रया, भग्गणंति वा एमट्टा, एस उवसंहारो गतो ॥ इदाणि उवसंहारविमुद्धी पुब्बं ताव सुत्तफासियनिज्जुत्तीए भण्णइ-तत्थिमा गाहा-अवि भम्मरमधुकरगणा अव्विट्ठिणं आदियंति कुसुमरसं । समणा पुण भगवंतो णादिणं भोत्तुमिच्छन्ति । (१२५ ७२) इदाणि उवसंहारे विमुद्धी मुत्तेणेव भण्णइ, तीसे उवसंहारमुद्धीए संबधनिमित्तं आयरिओ सथमेव चोदेइ, जम्हा ते दाणभक्षसणे रया तम्हा तेसि भिहत्यि तवस्सिणो साहुणो भिव्ववत्तिणोत्तिककाऊणं अणुकंपाए आहाकम्मादी करेति, तं च आहाकम्मादी अष्णाणयो गेहमाणो सत्तोवघाए वट्ठंति, एत्थं भण्णइ-‘वयं च वित्ति लब्भामो ण य कोइ उवहम्मइ’ वयं अस्मद् प्रथमा बहुवचनं जस् ‘युयवयौ जयी’ ति (पा.७-२-९३) वयआदेशः छेप्रथमयोरिति (पा.७-१-२८) जस् अस्, परगमनं च, कृपापक्षा वयं च आहाकम्मादीणि परिहरंता वयं च तथा वित्ति व लब्भामो जहा तथा न य कोवि सत्तो उवहंमिहि, तं च इमेण कारणेण णोवहम्मइ, ‘वृन् वर्त्तने’ धातुः ‘स्त्रियां क्तिन्’ (पा.३-३-९६) वृत्तिः, ‘ङ्लभश्चाप्तौ’ धातुः अस्य धातोः लङ्प्रत्ययः, अनुबंधलोपः, लस्य तिवादेश प्राप्ते उत्तमपुरुषबहुवचनं मस् ‘स्यतासी लृलुटो’ रिति (पा.३-१-३३) स्यप्रत्ययः अनुबंधलोपः ‘अलोऽन्त्यस्ये’ (पा.१-१-५२) ति भकारस्य ‘खरि चे’ति (पा.८-४-५५) पत्वं ‘अतो दीर्घो यवीति’ (पा. ७-३-१०१) उपसंहार- तद्विशुद्धी ॥ ६७ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [४], निर्युक्तिः[२५.../१२४...], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥४॥ दीप अनुक्रम [४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययनं मूलं दीर्घः, परगमनं लप्स्यामः, जहा ‘अहाकडेसु रीयंते पुप्फेहिं भमरो जहा’ रीङ् धातुः अस्य धातोः ‘भूवादयो धातवः’ (पा.१-७-१) धातुसंज्ञा लट् प्रत्ययः, लस्य आत्मनेपदविधक्षायां सटरेत्वं अनुबंधलोपः ‘दिवादिभ्यः इयन्’ (पा.३-१-६) परगमनं रीयंते, जहासहावं पुष्फिणहिं भमरा अप्पाणं पीणंति, एवं साहुणोवि गिहत्थाण अहागडेसु भिक्खं गेण्हंति अप्पाणं पीणंति । एवं ते मधुकारसमा बुद्धा जे भवंति अणिस्सिया’(सू.५-७२) मधु ‘मन ज्ञाने’ धातुः अस्य धातोः ‘भूवादयो धातवः’ (पा.१ ३-१) फलिपाटिनमिसनिजनां गुक्पनाकिधतश्चे’ ति (उ१पादे) उप्रत्ययः, यः वक्षो देशः (अलोऽन्त्यादेशः) परगमनं मधुं कुर्वतीति मधुकराः, मधुकरेहिं तुल्ला मधुकरसमा, बुद्धाः ‘बुध अवगमने’ धातुः अस्य धातोः क्तप्रत्यय, अनुबंधलोपः, ‘झलां जशोऽन्ते’ इति (पा. ८-२-३९) दत्त्वं परगमनं, बुद्धा नाम जाणगा, अणिस्सिया नाम अपडिबद्धा, एत्थ सीसो चोदेइ-असंजएहिं भमरोहिं होइ समा साहुणो? भमरा अस्सणी अस्संजया य ते साहवोऽवि असण्णिणो असंजता य भवंतु, एत्थ आयरिओ भणइ, बुद्धग्गहणण ताव असण्णिणो साहवो न भवंति, अणिस्सियग्गहणेण य असंजतदोसो परिहरिओ भवइ । इदाणि उत्तरं एतस्स सुत्तफासि-यनिज्जुत्तीए भण्णति-जहा ‘उचमा खल्लु एस कया’ (१२७-७२) गाहा, एस उवमा एगदेसेणं द्रष्टव्या, यथा चन्द्रमुखी देवदत्ता, चंदस्स जं परिमंडलं सोमता य ताणि गहिथ्याणि, एवं अणिययवित्तिनिमित्तं अहिंसाणुपालणद्धाए य एसा उवमा, किं च-जहा दुमग्गणा उ तह नगरजणवया पयणपायणसहावा (१२८-७३) जहा बहुविहा दुमा सहावओ चव पुप्फेति तहा नगर-जणवया चव पयणपायणसहावत्ति, जहा य भमरा तहा य मुण्णिणोवि, णवरं पुण अदिण्णं न गिण्हंति, एत्थ सीसो चोएइ-किं भणियं होइ?, जहा भमरा तहा मुण्णिणोऽवि?, आयरिओ- ‘कुसुमे सहान्पुप्फे’ गाहा, जहा सहाव- उपसंहार- तद्विशुद्धी ॥ ६८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [५], निर्युक्तिः [१२७-१५२/१२५-१५१], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ५ दीप अनुक्रम [५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १ अध्ययने ॥ ६९ ॥ कुसुमितेसु दुमगहनेसु भमरा आवाहं अकुव्वमाणा रसं आह्वयंति, एवं नगरजनवएहिं सहावेण चेव पयणपयावणएहिं अप्पणो अट्टाए उन्नखडियं समणा सुविहिया उग्गमादिसुद्धं गवेसित्ता आहारेन्ति । इदाणि जो एस हेट्ठा दोसो भणिओ सीसेण जहा जइ मधुमारसमा साहवो तो ते असण्णिणो असंजता य, जइ मधुकरसमा साहुणो तओ असंजता भवति, एयस्स दोसस्स परिहरणनिमित्तं आयरिओ अट्टगाहाए भणइ, सा य इमा उवसंहारो भमरा जह तह समणावि अवहजीवास्ति (१३०-७३) जहा ते भमरा कुसुमाण किलामं अणुप्पाएत्ता रसमाविरेयंति तहा साहुणोवि आह्वकम्मादीणि परिहरंता ण कस्सइ पीलं उप्पायेति, किंच-भमराणं साधूण य महंतो चेव विसेसो, जहा ‘णाणापिंडरया दंता’ ‘पिंडि संघाते’ धातुः, अस्य ‘इदितो नुम्’ (पा. ७-१-५८) नुम्, नंदिग्रहिपचादिभ्यः’ (पा. ३-१-१२४) अच्, अनुबधलोपः, परसवर्णः परगमनं पिंडः, णाणापिंडरया णाम उक्खित्तचरगादी पिंडस्स अभिगगहविसेसेण णाणाविधेसु रता, अहवा अंतपंताईसु नाणाविहेसु भोयणेसु रता, ण तेसु अरइं करंति, भणितं चहे-जं व तं च आसिय जत्थ व तत्थ व सुहोवगतनिदा । जेण व तेण व संतुडु धीर ! मुणिओ तुमे अप्पा ॥१॥’ ते णाणापिंडरता दुविधा भवंति, तंजहा-दव्वओ भावओ य, दव्वओ आसहत्थिमादि, ते णो दंता भावओ, साहवो पुणो) इंदिएसु दंता, इदाणि आयरिओ सयमेव सीसहितट्ठा अपुच्छिओ चेव इट्ठं गाहाए पच्छदं भणइ-दंतित्ति पुण पदंमी नायव्वं वक्कसे- समिणं’ जं एयं दंतित्ति पदं, वक्कसेसं नाम दत्तगहणेण अण्णाणिवि तज्जाइयाणि गहियाणित्ति वुत्तं भवइ, काणि पुण ताणि पदाणि’- जो एत्थेवं’ गाहा (१३२-७३) एयंमि दुमपुण्णियज्झयणे भमरुवादिट्ठंतपाहणेण एसणासिमिइ वण्हिया, तहां हरिया- समियाईणि जाणि पदाणि ताणि गहियाणित्ति, दिक्खियपयारो णाम जं दिक्खिएण आयरियव्वंति वुत्तं भवइ, उवसंहारविसुद्धी उपसंहार- विशु- द्व्याद्याः ॥ ६९ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [५], निर्युक्तिः [१२७-१५२/१२५-१५१], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ५ दीप अनुक्रम [५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि १ अध्ययने ॥ ७० ॥ नाम संमत्ता ॥ इदानीं निगमणं, - ‘तेण वुच्चंति साहुणो’ जेण कारणेण तसथावराण जीवाणं अप्पणो य हियत्थं च भवइ तहा जयंति अतो य ते साहुणो भणंति, निगमणं सम्मत्तं । इदानीं निगमणविसुद्धीए अभिसंबंधनिमित्तं आयरिणो सयमेव चोदेइ, जहा जइ कोई भणेज्जा परिव्वायगरत्तपडादिणो तसथावरभूतहितत्थमप्पहितत्थं च जयंता साहुणो भविस्संति, तं च नेव भवइ, जेण ते सम्भावओ ण जयंति, कहं न जयंति?, तत्थ सकाणं जं उद्दिस्स सत्तोवघातो भवइ ण तत्थ तेसिं कम्मबंधो भवइ, परिव्वायगा नाम जइ किर तेसिं सहाहुणो विसया इंदियगोयरं हव्वमागच्छंति, भणियं तेसिं ‘इंदियविसयपत्ताणं उवथोगो कायव्वो’ एवं ते अण्णाणमहासमुद्दमोगाढा पडुप्पण्णभारिया जीवा ताणि आलंबणाणि काउण तमेव परिकिलेसावहं गिहवासं अवलंबयंति, कहं ते साहवो?, साहवो पुण भगवंतो सम्भावओ जयंति, कहं ते ण ?, ‘कायं वायं च मण’ गाहा (१२६-७४) काएण ताव समाहियपाणिपादा चिहंति गच्छंति वा, वायाएवि अकुसलवइनिरोहं करंति कुसलवइउदीरणं च, मणेणवि अकुसलमणनिरोहं करंति कुसलमणउदीरणं च, इंदियाणि इड्डेसु इंदियविसयसु रागं न करंति. अणिड्डेसु दोसं, अट्टारसविहमबंभं परिवज्जित्ता बंभं धारंति, कसायाणं कोहादीणं उदयनिरोधं करंति, उदिण्णाण विफलीकरणं, ‘जं च तवे’ गाहा (१२७-७४) बारसविहे तवे जहासत्तीए उज्जुत्तत्तणं काउ, एतेण कारणेण तेसिं साहुलक्खणं संपुण्णं भवइ, ण तु सकादीणं णियडिबहुलाणं, तम्हा जिणवयणरया साहुणो भवंति । निगमणसुद्धी समत्ता । समत्ता दसावयवा इमे, तं जहा ‘ते उ पइण्णविसुद्धी’ गाहा (१२८-७५) एवं दुमपुप्फियज्जयणं संखेवेण भणियं, वित्थरओ पुण सव्वक्खरसण्णिवाहणो चोइसपुव्विणो अणगारा कहयति, ‘सेअत्थं एत्थ’ गाहा () ‘दुमपुप्फिय’ गाहा, () इदानीं नयत्ति गाहा-‘णायंमि गिण्हियव्वे अणेण्हियव्वंमि उपसंहार- विशु- द्ध्याद्याः ॥ ७० ॥

आगम (४२)	"दशवैकालिक"- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
	अध्ययनं [१], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [५], निर्युक्तिः [१२७-१५२/१२५-१५९], भाष्यं [४...]
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] "दशवैकालिक" निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ५ दीप अनुक्रम [५]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ७१ ॥ चेवं अथम्मि । जइयब्बमेव इति जो उवदेसो सो नयो णाम् ॥ (१५०-८०) सव्वेसिंपि नयाणं बहुविहवत्तच्चयं निसामेत्या । तं सव्वन्नयविसुद्धं जं चरणगुणट्टिओ साहु (१५२-८०) पढियसिद्धाउ चेव एयाओ गाहाओ । एवं दस्सेवालियाल्लुच्छणीए दुम्भपुप्फियज्झयणञ्चुष्णी समत्ता ॥ → पढमज्झयणे धम्मपसंसा वण्हिया, इदाणि धम्मे ठियस्स धित्तिणिमित्तं बित्तियज्झयणं, एतेण संबधेण आगयस्स अज्झयणस्स चत्वारि अनुयोगदारानि वत्तच्चाणि, जहा आवस्सग्गञ्चुष्णीए तथा, नवरं एत्थ नामीणाक्खणो निकखेवो भण्ड'सामण्या-पुन्वयस्स' गाहा (१५४-८२) तत्थ सावण्णं पुन्वयं च दो पदानि, तत्थ समणभावो सामण्णं, तस्स समणस्स चउव्विहो निकखेवो कायव्वो, पुन्वगयस्स तेरसविहोत्ति, तत्थ समणस्स ताव निकखेवं करेमि, सो य इमो- सम्मणस्स उ निकखेवो' (१५५-८३) अद्वागाहा, तंजहा-णामसमणो ठवणासमणो द्वंसमणो भावसमणो य, नामठवणाउ तहेव, द्वंसमणो इहं गाहापच्छदं 'दव्वे सरूरभावियो भावे उण सेजओ समणो' द्वंसमणो दुविधो आगमओ णों आगमओ य, जहा दुमे तहेव, नवरं 'समणो' ति अभिलावो भाणितत्वो, भावसमणो जो जो सेजओ विरओ अप्रमत्तो भावसमणोत्ति, एत्थ सीसो भण्ड-केण कारणेण समाणा भण्णिति?, आयुरिओ भण्ड-'जह मम ण पिंयं दुक्खं जाणिय एमेव सव्वजीवानं' गाहा (१५६-८३) पढियच्चा, अहवा 'नत्थि य से कोइ वेसो' गाहा (१५७-९३) पढियच्चा, अहवा इमेण कारणेण समणो भवइ 'तो समणो जइ सुमणो भावेण य जइ ण होइ पावमाणो । समणे य जणे य समो समो य माणावमाणेसु ॥ (१५८-८३) अहवा इमेहिं कारणेहिं समो सो समणो होइ, तं उरगगरिजलणसागर'गाहा (१५९-८३) तत्थ पढमे उरगसरिसेण साहुणा भवियच्चं, एत्थ आह उरगो सभावत एव विसमतो श्रमण- स्वरूपम् ॥ ७१ ॥
➡	अध्ययनं -१- परिसमाप्तं अध्ययनं -२- 'श्रामण्यपूर्वकं' आरभ्यते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ अध्ययने ॥ ७२ ॥ रोसणो अणवरद्धवेरिओ य, किमेरिसो साहु भवउ?, भण्णइ-जं तस्स एगंतदिट्ठित्तं परनिलयत्तं च विलं च अहगच्छंतो ओरयं न आसाएइ, एताणि पडुच्च भण्णइ, जहा उरगसमेण होयव्वं, तत्थ एगंतदिट्ठित्तणं धम्मं पडुच्च कायव्वं, परकडपरिणिट्ठियासु वसहीसु वसितव्वं, विलसरिसं भोत्तव्वं, ते विलं नउलयं पविसमाणं न आसादेइ तहा आहारोवि अणासायतेण आहारेयव्वो, किंच- पव्वय-सरिसेण साधुणा होयव्वं, तस्स पुण पव्वयस्स अण्णाणभावं खरभावं च उज्झिऊणं तेजस्सित्तणं परिगिज्झइ, जहा व सो अगणी इंधणादीहि न तिप्पइ, एवं सुत्तेवि अज्झाइअव्वे साहुणा अत्तित्तेण भवितव्वं, जह वा सो अग्गी इंधणादीणि डहमाणे णो कत्थइ विसेसं करेति-इमं डहितव्वं इमं वा अडहणीयं, एवं मणुण्णामणुण्णेसु अण्णपाणादिसु फासुएसणिज्जेसु रागो दोसो वा न कायव्वो, किंच सागरसरिसिण होयव्वं साहुणा, सो य गतीए खारत्तेण अपेयो न एयं घेप्पइ, किं तु जाणि य समुदस्स गंभीरत्तं अगाहत्तणं व ताणि घेप्पंति, कहं ?, साहुणा सागरो इव गंभीरेण होयव्वं, नाणदंसणचरिचेहि य अगाहेण भवितव्वं, कहं ?, माइपिइमाइएसु नातिसंजोएसु वा रागदोसहि आगासमिव निरुवलेवेण भवितव्वं, किंच-तरुसरिसेण भवितव्वं, कहं ?, जहा रुक्खो छिज्जमाणो भइज्जमाणो रागं दोसं न गच्छइ तहा माणवमाणे साहुणा भवितव्वं, किंच-भमरेण व अनियतवत्तिणा भवितव्वं, कहं ?, भमरो जहा एस चेव हेट्ठा उदरं देसं कालं च नाऊण चरइ, एवं साहुणावि गोयरचरियादिसु देसं कालं च नाऊण चरियव्वं, जहा मिगो णिच्चुव्विग्गो तहा णिच्चकालमेव संसारभउव्विग्गेण अप्पमत्तेण भवियव्वं, किंच-धरणी विव सव्वफासविसहेण साहुणा भवितव्वं, किंच-जलरुहसमेण साहुणा भवियव्वं, जहा पउमं पंके जायं जले समिद्धं तेहिं चेव नोवलिप्पइ, एवं साहुणा-वि कामेहिं जाएण भोगेहिं सवद्विएण तहा कायव्वं जहा तेहिं न लिप्पइ, किंच-सरो इव तेयसा जुत्तेण साहुणा भवितव्वं, जहा श्रमण- स्वरूपम् ॥ ७२ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ६-१६ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ अध्ययने ॥ ७८ ॥ जेण वत्तेण उक्खवेण गावइ तं गहसमं भण्णइ, लओ नाम काणएण तंती छिप्पति ताहे नहेण आमज्जइ, तत्थ अण्णारिसो सरो उट्ठइ, तं लयसमं भण्णइ, गीयंति गतं । इदाणि चुण्णपदं भण्णइ जहा वंमचेरतराणि, एतस्स चुण्णपदस्स इमा लक्खणगाहा ‘अत्थबहुलं महत्थं’ गाहा (१७६-८६) अत्थबहुलं नाम जस्स बहु अत्था, महत्थं नाम पहाणं भण्णइ तेण जुत्तं, कारणेण हेउ-जुत्तं भण्णइ, निवायता इमे, तं च वा खलु ण हो एवमादयो अण्णतरो निवातो । इदाणि उवसग्गए, ते य इमे तं परि उत्थुत्तं अव एवमादि, एतेहि निवातावसग्गेहि उववेयं गंभीरं भवइ, बहुपादं नाम जहा सिलो गो, गाहादीणं विरामो अत्थि न तथा तस्स, गमेहि नयेहि च विसुद्धं गमनयविसुद्धं, एवं चुण्णपदं गहियं सम्मत्तं, सम्मत्तं च नोअवराहपदंति, इदाणि अवराहपदं-‘इंदियविसया’ गाहा (१७९-८८) तत्थ इंदियाणि सोतादीणि तेसिं विसया-सदादयो तेसु सदाइसु इट्ठाणिट्ठेसु सोतादीहि इंदियहि रागदोसं गन्तूणं, कसाया कोहाहयो तेसु कया वट्ठतो, परीसहा बावांसं तेसु बावांसाए परीसहेसु उदिण्णेषु वेदणा उव-सग्गा भवंति, अण्णे य मज्जप्पमायादयो तेसु एकेए कारणे सीदंतो नाम पमादयंतोचि वुत्तं भवति. ‘संकप्पस्स वसं गओ’ संकप्पोत्ति वा छंदोत्ति वा कामज्जवसायो तस्स संकप्पस्स वसं गओ, एत्थ उदाहरणं जहा एगो खंतो सपुत्तो पव्वइयो, सो य चेत्तओ तस्स अतीव इट्ठो, सीदमाणो य भणइ-खंत ! न सक्केमि अणुवाहणो हिंडिउं, अणुकंपाए खंतीण दिण्णा उवाहणाओ, ताहे भणइ-उवरितला सीतेण फुटंति, खल्लिया से कयातो, पुणो भणइ-सीसं मे अतीव डज्जइ, ताहे सीसदुवारिया से अणुच्चाया, ताहे भणइ-न सक्केमि हिंडिउं, तो से पडिस्सए ठियस्स आणइ, एवं न तरामि खंता ! भूमिण सुविउं, ताहे संथारो से अणुण्णातो, पुणो भणइ-न तरामि खंतो ! लोयं काउं, तो सुरेण पक्कज्जओ, ताहे भणइ-अण्हाणगं न सक्केमि, तओ से फासुगपाणएण अपराध- पदानि- शुद्धक- दृष्टान्तः ॥ ७८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा [६-१६] दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रद्धा- वैकालिक चूर्णो २ अध्ययने ॥ ८० ॥ करोमि आहारसण्णापडिविरए सोइंदियसंबुडे पुढविकायसमारंभपडिविरए खंतिसंपउत्ते एस पढमो गमओ, इदाणि बिइओ भण्णइ- काएणं न करोमि आहारसण्णापडिविरए सोइंदियसंबुडे पुढविकायसमारंभपडिविरए मुत्तिसंपयुत्ते, एसो वित्तिओ गनओ, इदाणि तहओ, एवं एतेण कमेण जाव दसमो गमओ वंभचरसंपउत्तो, एस दसमो गओ, एते दस गमगा पुढविकायसंजमं अमुंचमाणेण लद्धा, एवं आउक्काएणवि दस चेव, तेउक्काएणवि दस, एवं जाव अजीवकाएण दस, एवमेतं अणूणं सतं गमाणं सोइंदियसंबुडे अमुंचमाणेण लद्धं, एवं चक्खिदिएवि सतं चाणिदिएवि सतं निब्भिदिएवि सयं फासिदिएवि सयं, एवमेयाणि पंच भंगसयाणि आहारसण्णापडिविरयं अमुंचमाणेण लद्धाणि, एवं भयसण्णाए पंच सयाणि मेहुणसण्णाएवि पंच सत्ताणि परिग्गहसण्णाएवि पंच सयाणि; एवमेताइ वीस भंगसयाणि न करोमि अमुंचमाणेण लद्धाणि, एवं न कारवेमिति वीसं सयाणि, करेन्तेवि अण्णे न समणुजाणामि वीसं सयाणि, एवमेताणि छ सहस्साणि कायं अमुंचमाणेण लद्धाणि, एवं वायाए छ सहस्साणि मणेणवि छ सहस्साणि, एवमेताणि अट्टारससीलंगसहस्साणित्ति, जोवि आजीवियाए भण्ण एव्वइओ जणवायभएण वा ण तरइ उप्पव्वइउं सो सयमेव कामरागपडिवद्धचित्तो अच्छइ, सो अपरिचत्तकामभोगो जाणियव्वोत्ति । कहं ? , वत्थगंधमलंकारं, इत्थीओ सयणाणि य । सिलो गो (सू ७-९१) ‘ वस निवासे ’ धातुः अस्य धातोः ‘ भूवादय ’ (पा. १-३.१) इति धातुसंज्ञा, ‘ ष्टन् सर्वधातुभ्य ’ (उणादि पा. ४) परजमनं वस्त्रं, वत्थगहणेण वत्थाणि कंबलरयणपट्ट- चीणसुयादीणि गहियाणि, गंधगहणेण कोट्टपुडाणो गंधा गहिया, ‘ इक्कम् करने ’ धातुः अलंपूर्वस्व घञप्रत्ययः अलंकरणं अलं- कारः, अलंकारग्रहणेण केसाभरणादिअलंकरणादीनि गहियाणि, ‘ स्तयै संघातशब्दयोधातुः ’ अस्य ‘ स्त्रायते ईट् ’ (उणादि पादः ४) श्रीलांग- सहस्साणि. ॥ ८० ॥

आगम	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ अध्ययने ॥ ८१ ॥ अनुबंधलोपः, ‘डिङ्गा’ (पा. ४-१-१५) परगमनं स्त्री, इत्थीगहणेण विरुद्धरूपाणं इत्थीणं गहणं कर्तं, ‘शीङ् स्वप्ने’ अस्य धातोः ल्युट् ‘युवोरनाका’विति (पा. ७-१-१) अनः आद्धेधातुके धातोर्गुणः एकारः अयादेशः परगमनं शयनं, सयणगहणेण णाणा विहा सयणसणप्पगारा गहिया, चकारो निपातः, चकारेण सव्वं चव इट्ठिसयपरिभोगा गहिया, एते वस्त्रादयः परिभोगाः केचिदच्छंदा न भुंजते नासौ परित्र्यागः, ‘छदि अपवारणं’ धातुः णिच् प्रत्ययः पुनः अत् अनुबंधलोपः परगमनं नपूर्वस्य, न त्यजति, यदा णंदो चंदगुत्तेण णिच्छंदा, ततो तस्म दारेण निग्गच्छंतस्स दुहिया चंदगुत्ते दिट्ठिं वेधति, एयं अक्खणयं जहा आवस्सए जाव विदुसारो राया जातो, नंदसंतीओ य सुवंधूनाम अमच्चो. सा चाणक्कस्स पदोसमावण्णो छिङ्गाणि मग्गइ, अण्णया रायाणं विण्णवइ, जहावि तुम्हहिं अम्ह वित्तं न देह तहावि अम्हहिं तुज्झ हियं वत्तव्वं, भणइ-तुम्ह माया चाणक्केण मारिया. रण्णा धाती पुच्छिया, आमाति, कारणं न पुच्छियं, केणवि कारणेण रण्णो य सगासं चाणक्को आगओ जाव दिट्ठिं न देइ, ताहे चाणक्को चित्तेइ-रुद्धो, अहं गयाऊत्ति काउं दव्वं पुत्तपोत्ताणं दाऊणं संभोवित्ता य गंधा संजाइया, पत्तयं च लिहिऊण सोवि जोगो समुग्गे रुद्धो, समुग्गो चउसु मंजूससु रुद्धो, तासु छुभित्ता ततो गंधोव्वरए रुद्धो, तं बहूहिं खीलियाहिं सुघटियं करेत्ता दव्वजायं णाइवग्गं च कम्मे नियोएत्ता अडवीए गोकुले इंगिणिमरणं अब्भुवगओ, रण्णा आपुच्छियं-चाणक्को किं करेइ?, धाती य से सव्वं जहावत्तं परिकेइइ, गहियपरमत्थेण य भणियं-अहो मया असमिक्खियं कयं, सव्वंतेउरओरोहवलसमग्गो खामेउं निग्गओ, दिट्ठो यउणेण करिसि मज्जे ठिओ, खामिओ सव्वहुमाणं, भणियं चणेणं-गरं वच्चाओ, भणइ-मए सव्वपरिच्चाओ कउत्ति, तओ सुवंधुणा राया विण्णविओ-अहं से पूयं करेमि, अण्णयाणह, अण्णयाए धूवं इहिऊण तम्हिं चव एगप्पदेसे करिसस्सो- सुबन्धा- ख्यानकं ॥ ८१ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ६-१६ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ८४ ॥  अच्छह वीसत्था, अहमेतं लोगं उवाएणं निवारेमि, वितिए दिवसे तिण्णि सुवण्णकोडीओ ठवियाओ, उग्घोसाविणं नगरे, जहा अभयो दाणं देइ, लोगो आगओ, भणितं चण्णेण-तस्साइ एताओ तिण्णि कोडिओ देमि जो एताइ तिण्णि परिहरइ-अग्गि पाणियं महिलं, लोगो भणइ-एतेहि विणा किं सुवण्णकोडीहिं ?, अभयो भणइ-ता किं भणइ दमउत्ति पव्वइओ?, जोवि निरत्थओ पव्वइओ तेणावि एयाओ तिण्णि सुवण्णकोडीओ परिचत्ताओ, सच्चं सामी, ठिओ लोगोत्ति-तम्हा अत्थपरिहीणोऽवि संजमे ठिओ तिण्णि उ लोगसाराणि अग्गि उदगं महिलाओ य परिवज्जंतो चाइत्ति लब्भइ। एवं तस्म संजमे ठितस्स कस्सइ कदाइ मणं चंचल-त्तणेण माउग्गामेण सह अभिसंधारणं भवेज्जा तेण कहं कायव्वं ?, भणइ-समाए पेहाए परिचव्वंतो, सिया भणो णोसरइ बहिद्धा (९-९३) सिलोमो, समा णाम परमप्पाणं च समं पासइ, णो विसमं, पेहा णाम चिन्ता भणइ, परिचव्वंतो णाम जो सच्चप्पगारणं संजमाहिगारहिं उज्जमंतो, परिचव्वंतो णाम गामणगरादीणि उवदेसेणं विचरंतोत्ति बुद्धं भवइ तस्स, एवं पसत्थेहिं ज्ञाणठाणेहिं वडुत्तस्स मोहणीयस्स कम्मस्स उदएणं बहिद्धा मणो णोसरज्जा, बहिद्धा नाम संजमाओ बाहिं गच्छइ, कहं ?, पुव्व-रयाणुसरणेणं वा भुत्तभोइणो अभुत्तभोगिणो वा कोऊहलवत्तिवाए, तत्थ उदाहरणं जहा एगो रायपुत्तो बाहिरियाए उवट्ठाण-सालाए अभिरमंतो अच्छइ, दासी य तेण अंतण जलभरियघडेण वोलेइ, तओ तेण दासीए सो घडो गोलीए भिण्णो, तं च अद्वितिं करेतिं दट्ठुण पुणरावचो जाया, चितियं च- जे चेव रक्खणा ते विलोवगा किं त्थ कुविउं रक्का ?। उदगाओ समुज्ज-लिओ कट्टमग्गी विज्झवेतव्वे ॥ १ ॥ तो पुणवि चिक्खल्लगोलीएण तक्खणा चेव लहुहत्थयाए तं घडछिइं टक्केइ, एवं जइ संजतस्स संजमं करेत्तस्स बहिया मणो णिग्गच्छइ तत्थ पसत्थेण परिणामेण तं असुहसंक्कप्पहिइं चरित्तजलरक्खणट्ठाए टक्के- मनोदमनं ॥ ८४ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ८५ ॥ तत्त्वं, कहं ? , ‘ण सा महं णोवि अहंपि तीसे’ तत्थ नगारो पडिसेहे वट्ठइ, सा इति पुव्वभोइणीए ग्रहणं महं, ण य अहमवि तीसेत्ति, तत्थ उदाहरणं-एगो वणियदारओ सेहो जायं उज्झिय पव्वइओ, सो य ओहाणुप्पेही, जया इमं च घोसेइ ‘ण सा महं णो- वि अहंपि तीसे’ चरित्तजलक्खएण अहमपि तीसे सा ममाणुरत्ता, कहमहं तं छड्डहामित्ति काउं गहियायारभंडगणेवत्थो चैव संपट्टितो, गओ तं गामं जत्थ सा, सो य निवाणतडं संपत्तो, तत्थ सा पुव्वजाइया पाणियस्स आगया, सा य साविथा जाया, पव्वइउकामा, एताए सण्णइओ, इतरो तं ण याणइ, तेण सा पुच्छिया-सा अमुगस्स धुया किं मया?, सो चित्तेइ-जइ सासंधरा तो उप्पव्वयामि, इयरहा ण, ताए णायं, जहा एस पव्वज्जं पयहिउक्कामो, तो दोवि संसारे भविस्सामोत्ति, भणियं अणाए-सा अणस्स दिण्णा, ततो सो चित्तिउमारद्धो-सच्चं भगवतेहिं साधूहिं अहं पाठितो ‘ण सा महं णोवि अहंपि तीसे’ परमं संवेग- मावणो, भणियं चाणेण-पडिणियत्तामि, तीए वेरग्गभग्गपडिउत्ति णाऊण अणुसासिओ-‘अणिच्चं जीवियं, कामभोगा इत्तिरिया’ एवं तस्स केवलियत्तं धम्मं कहेइ, अणुसट्ठो, जाणाविओ य, पडिगओ आयरियसगासं, पव्वज्जाए थिरीभूओ, अप्पा साहारेत- व्वो जहा तेणंते, इच्चेवं तत्थ ‘विणएज्ज रागं’ ‘रंज रागे’ धातुः अस्य धातोः भावे घञ् प्रत्ययः “घञि च भावकरणयो” रिति (पा. ६-४-१७) अनुनासिकलोपवृद्धिः, रंजनं रागः एयारिसे चरित्तंतरे समुप्पण्णे विविहेहिं विणएज्ज रागे, दमेज्जत्ति वुत्तं भवइ, जहा विणीए सीसे विणीए अस्सेत्ति, एवं ताव मणसो णिग्गहो भणिओ, सो य न सक्कइ उवाचियसरीरेण णिग्गहेउं, भणियं च-“चउहिं ठाणेहिं मेहुणं समुप्पज्जिज्जा, तं० चियमंससोणियत्ताए मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं, मतीए, तदट्ठोवओ- गेणं’ तम्हा कायबलनिग्गहे इमं सुत्तं भण्णइ— आताप- नादि ॥ ८५ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ८६ ॥ ☀ आयावयाही चय सोगमल्लं, कामे कमाहि कामियं खु दुक्खं । छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागं, एवं सुही होहिसि संपराए (सू. १०-९५) आयावयाहि उड्डवाहु, एगग्गहणे तज्जाइयाण गहणंति न केवलं आयावयाहि, ऊणोदरिय-मवि करेहि, आयरियाइणं कइजे समुप्पण्णे अट्ठाणं गच्छाहि, जो बहुसुओ सो सुत्तथाणि दवाविज्जइ, चय सोगमल्लं-ति चयाहिचि वा छट्ठेहिचि वा जहाहिचि वा एगट्ठा, सुकुमालभावो सोकमल्लं, सुकुमालस्स य कामेहिं इच्छा भवइ, कमणिज्जो य स्त्रीणां भवति सुकुमालः, तम्हा एवं सुकुमारभावं छट्ठेहिचि, कामे कमाहि एतेण आयावयाइणा कायकिलेसेणं अप्पसत्था इच्छा० मयणकामा य कमाहि, कमाहि णाम पिट्ठओ करेहि, अतिककमाहिचि वुत्तं भवति, ते पुण कया कामा अतिककंता भवति१, एत्थ भण्णइ-‘कामियं खु दुक्खं,’ कामियं णाम कामेहिं अतिककंतेहि संसारियं दुक्खं कंतमेव भविस्सइचि, छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागमिति, ते य कामा सहादयो विसया तेसु अणिट्ठेसु दोसो छिंदियव्वो, इट्ठेसु वट्ठतो अस्सो इव अप्पा विणयियव्वो, रागं न गच्छियव्वंति वुत्तं भवति, रागो दोसो य कम्मबंधस्स हेउणो भवति, सव्वपयत्तेण ते वज्जणिज्जति, तओ तेसु विजिण्णु किं भविस्सतिचि, एवं भण्णइ-‘एवं सुही होहिसि संपराए’ एवं तुमं जयंतो संपरातो-संसारो भण्णइ जाव ण परिणव्वाहिसि ताव दुक्खाउले संसारे सुही देवमणुएसु भविस्संति, जुत्तं भण्णइ, जया रागदोसेसु मज्झन्थो भविस्सति तओ(जिय)परीसहसंपराओ सुही भविस्ससिचि, किं च-संजमे विसीदंतं अप्पाणं इमेण आलंघणेण साहारेज्ज, जहा-पक्खंदे जलियं जोइं, धूमकेउं दुरासयं । णेच्छंति वंतयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणा ॥ (सू. ११-९५) ‘स्कंदिर् गतिशोषणयोः’ धातुः, अस्य धातोः अल् प्रत्ययः अनु-बंधलोपः परगमनं स्कंदः, तथा प्रातिपदिकार्थे सप्तम्यधिकरणे डि अनुबंधलोपः ‘आद् गुणः’ (पा. ६-१८-७) सर्वस्य, स्कन्दो, त्यागस्थै- र्यातलंबनं ॥ ८६ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ८७ ॥ अतीव स्कन्दः पक्खंदासि दुत्तं भवइ. जलिओ लोमपसिद्धो चैव, जोतिग्गहणेण अग्गिणो गहणं कयं, जोती अग्गी भण्णइ, धूमो तस्सेव परियायो, केऊ उस्सओ चिंथं वा, सो धूमे केतू जस्स भवइ धूमकेऊ, सीसो आह-जोहगहणे कए जं पुणो जलियगहणं च करेसि तण्णु पुणरुत्तं, आयरिओ आह-जलियगहणं मुम्मुरादिनसेहत्यं, धूमगहणं उक्कादिपडिसेहत्यं, दुरासयो नाम डहणसम- त्यत्तणं, दुक्खं तस्स संजोगो सहिज्जइ दुरासओ तेण, अतो एवंगुणजातीयं किर अग्गि पविसंति अगंधणकुलजातिजा य नागा, न य इच्छंति वंतयं पुणो पडिआइउं, तत्थ नागाणं दो जातीयो-गंधणा य अगंधणा य, तत्थ गंधणा नाम जे डसिऊण गया मंतेहि आगच्छिया तमेव विसं वणमुहट्टिया पुणो आवियंति ते, अगंधणा नाम मरणं ववसंति ण य वंतयं आवियंति, उदाहरणं जहा दुमपुप्फियाए सव्वं तहेव. एत्थ पुण सुत्तट्ठाणमसुण्णं भवतु, जाव तेण सप्पेण आहिडियणीयेण मरणमञ्जुवगतं, णय तं विसं पडिआतीयं, वन्तमितिकाउं, एवं साहुणावि चित्तेयव्वं जइ णावाविरएण होऊग. धम्मं अयाणमाणेण कुलमवलंबेतेण य जीवियं परि- च्चत्तं ण य वन्तमावीतं, किमंगपुण मणुस्सेण जिणवयणं जाणमाणेण जातिकुलमत्तणो अणुगणितेण?, तहा करणीयं जेण सहेण दोसे ण भवइ अधिय-मरणं अज्झवसियव्वं, ण य सीलविराहणं कुज्जा, किं कारणं एवं ववसिय सरीरविणासं करेइ?, पव्वइया पओ(वंते) भोगे पुणो सेविज्जंता अणाईए अणवदग्गे दीहमद्धे संसारकंतारे तासु तासु जाईसु बहूणि जम्मणमरणाणि पावंति, एयंमि अत्थे वि- तियं सवित्थरं उदाहरणं भण्णइ, जदा अरिद्धनेमी पव्वइओ तदा रहनेमी तस्स जेडुस्स भाउओ रायमइ उवचरइ, जइ णाम एसा मइ इच्छेय्य, साऽवि भगवती णिव्विण्णकामभोगा, णातं च तीए जहा एसो मइ अज्झोववण्णो, अण्णया य तदा महुवयसंजुत्ता पेजा पीया, रहणेमी आगओ, मदनफलं मुहे काऊणं तीए वन्तं, मणियं च-एयं पेज्जं पीयाहि, तेणं भाणियं-कइ वंतं पिज्जइ?, तीए भ- पातान्मरणं श्रेयः ॥ ८७ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ८८ ॥ णिओ-जइ न पिज्जइ वंतयं तो अहंपि अरिद्धनेमिसामिणा वन्ता कहं पिबिउसि? धिरत्थु ते जसोकामी, जो तं जीवियकारणा । वंतं इच्छसि आवेउं, सेतं ते मरणं भवे। (सू. १२-९६) धि निंदायां ‘असु भुवि’ धातुः, अस्य ‘विधिनिमंत्रणा’ ‘लोद’ (च पा ३-३-१६२) अनुबन्धलोपः, लस्य तिप् ‘एरु’ रिति (पा ३-४-८६) उच्चं शप् ‘आदिग्रभृतिभ्यः शप्’ (पा. २-४-१२) लुक् परग- मनं, धि पूर्वस्य धिरस्तु, धिरत्थु तुभं जसोकामी, जसोकामिणो खत्तिया भण्णंति, अहवा धिरत्थु ते अयसोकामी, गंधलाघवत्थं अकारस्स लोवं काऊणं एवं पढिज्जइ ‘धिरत्थु तेऽजसोकामी’ ‘जो तं जीवियकारणा’ ‘जो तुमं इमस्स कुसग्गजलबिंदुचंचलस्स जीवियस्स अट्ठाए भाउणा वन्तं इच्छसि आईउं, एयं पेज्जं णेच्छसि, एवं ते सेयं मरणंति, धम्मो य से कहिओ, संघुद्धो पव्वइओ य, रायमई- वि तं चोएऊण पव्वइया, पच्छा अण्णदा कदाइ सो रहनेमी वारवईए भिक्खं हिंदिऊण सामिसगासमागच्छंतो वासवहलएण अभा- हतो एक्कं गुहं अणुप्पविट्ठो, राईमई य सामिणो वंदणाए गया, वंदिय पढिस्सयमागच्छइ, अंतरे वरिसिउमाढत्तो, तिता य तमेव गुहमणुपविट्ठा जत्थ सो रहनेमी, वत्थाणि य पविसारिया, ताहे तीए अंगपच्चंगं दिट्ठं. सो रहनेमी तीय अज्झोववण्णो, दिट्ठो य णाए, इंगियागारकुसलाए य नाओ अस्सोमणो भावो एतस्स, ताहे सा भणइ- ‘अहं च भोगरायस्स, तं चऽसि अंधगवण्हिणो । मा कुले गंधणा होमो, संजमं निहुओ चर ॥ (१३-९६) भोगा खत्तियाणं जातिविसेसो भण्णइ, जहा वद्धमाणसामिकुलुप्पणा णाया खत्तिया भण्णंति, एवं उग्गसेणोवि भोगकुलिओ भण्णइ, तस्स अहं भोगराइणो धूया, तुमं च तस्स तारिसस्स अंधयवण्हिणो कुले पसूओ समुहविजयस्स पुत्तो, ता एवं दोण्णिवि महाकुलप्पसूयाणि मा गंधणणागसरिसाणि भवामो, हेट्ठा अभिहितं सच्चं रहणेमिस्स कहयइ, तंजहा-अगंधणकुलप्पसूया सप्पा च वंतं पडियाइयंति. तहा वयंपि भोगे पयहिऊण सच्चभावेण मा ते चेव कुलीनकार्यं ॥ ८८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [२], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [६-१६/६-१६], निर्युक्तिः [१५२-१७६/१५२-१७७], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥६-१६॥ दीप अनुक्रम [६-१६]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ अध्ययने ॥ ८९ ॥ पडिवाइयो, अहवा कुलगंधिणो कुलपूषणा मा भवासो, तम्हा तुमं संजममेव सव्वदुक्खनिवारणं निहुओ चराहि, किंच-सा पुण मणइ ‘जइ तं काहिसि भावं, जा जा दिच्छसि नारीओ। वायाइद्धोव्व हदो, अट्ठिअप्पा भविस्ससि ॥ (सू.१४-९६) ‘दशिर् प्रेक्षणे’ धातुः, अस्य धातोः भविष्यति ‘अनद्यतने लट्’ (पा. ३-३-१५) ‘स्यतासी ललुटो’ पा. ३-१-३३) लट् प्रत्ययः अनुबंधलोपः मध्यमपुरुषः सिप् आनुपूर्व्यानुबंधलोपः स्यतासीस्यप्रत्ययः ‘व्रथश्चसृजमृज्जराजभ्राज्जशं भः (पा. ८-२-३६) षत्वं ‘पदोः कस्से (पा. ८-२-४१) कत्वं ‘इण्को’ (पा. ८-३-५७) सापेक्षप्रत्यययोः (पा. ८-३-५९) षत्वं ‘सृजिदृशोर्ल्यमकिति’ (पा. ६-१-५८) अः, यणादेशः परगमनं द्रक्ष्यसि, संति इत्थीओ दरिसणिज्जाओ ताओ दट्ठण जइ भावं करेहिसि-प्रार्थना अभिप्रायं तो तुमं अणंतरयणाए पुढवीय वायाइद्धोविह हदो अट्ठितप्पा भविस्ससि, हदो णाम वणस्सइविसेसो, सो दहतलागादिषु छिण्णमूलो भवति, तथा वातेण य आइद्धो इओ इओ य निज्जइ, तहा तुमपि एवं करेतो संजमे अबद्धमूलो समणगुणपरिहीणो केवलं दव्वलिगधारी भविस्ससि ॥ तीसे सो वयणं सुच्चा, संजयाए सुभासियं। अंकुसेण जहा णागो, धम्मे संपडिवाइओ ॥ (सू.१५-९६) ‘श्रु श्रवणे’ धातुः, अस्य धातोः ‘समानकर्तृकयोः पूर्वकाले क्त्वा’ (पा. ३-४-२१) प्रत्ययः अनुबंधलोपः गुणप्रतिषेधः श्रुत्वा, ‘तीसे’ चि तीय रायमतीय सो रथनेसी एवं सुणेऊण वयणं अण्णाणि य धम्मसंताणि सुभासियाणि सोऊणं जहा सो अंकुसेण णागो, एत्थ उदा- हरणं-वसंतपुरं णगरं, तत्थ एसा इम्भवहुगा नदीए ण्हायइ, अण्णो य तरुणो दट्ठण तं मणइ-‘सुण्हायं ते पुच्छइ एस नदी पडरसोहियतरंगा। एते य नदीस्सखा अहं च पादेसु ते पणतो ॥ १ ॥’ ताहे सा पडिभणइ- सुहगा हंतु णदीओ नूपुरपंडि- तोदाहरणं ॥ ८९ ॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७-३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ९३ ॥ भावे । गाथा (१८०-१००) णामठवणाओ गयाओ, तत्थ दव्वमहन्तं अचित्तमहाखंधो भण्णइ, सो किर सुहुमपरिणामपरिणओ अणंताणत्तप्पएसिया खंधा तं तहाभावं परिणमंति जेण सव्वलोगं पूरेइ, जहा केवलीसमुग्धायादओ, दंडकवाडमयंतराणि य चउत्थे समए पूरेइ, एवं सोऽवि चउत्थे समए सव्वं लोगं पूरेत्ता पडिनियत्तइ, एयं दव्वमहन्तं, खेत्तमहन्तं नाम सव्वागासं, कालमहंतं सव्वद्धा भण्णइ, पहाणमहंतं तिविहं, तं०-सचित्तं अचित्तं मीसयं, तत्थ सचित्तं तिविहं-दुपदं चउपदं अपदंति, तत्थ दुपदपहाणो तित्थगरो, चउप्पदाणं हत्थी, अपयाणं पणसं, अरविंदं वा, अचित्ताणं वेरुलियरयणं पहाणं, मीसगाणं च भगवं तित्थगरो वेरुलि-यादीहिं विभूसिओ, पहाणमहंतं सम्मत्तं, इदाणिं पडुच्चमहंतं भण्णइ- आमलगं पडुच्च त्रिल्लं महल्लं त्रिल्लं पडुच्च कविट्ठं महंतं एवमादि, भावमहंतं णाम तिविहं पणत्तं, तं० पाहण्णओ कालओ आसययोत्ति, तत्थ पाहण्णतो सव्वभावानं खाइओ भावो भावमहंतो, कालओ पप्प पारिणामिओ भावो पहाणो, किं कारणं ?, जेण जीवदव्वा अजीवपरिणामेण अजीवदव्वा य जीवपरि-णामेण ण कयाइ परिणमंति, आसयओ उदइओ भावो पहाणो, किं कारणं ?, जेणेव बहुतरगा जीवा उदइए भावे आवस्सिया, उदइए भावे वडुत्तिचि वुत्तं भवइ, भावमहंतं गयं ॥ इयाणिं एयस्सेव महंतयस्स पडिवक्खो खुड्डयं निक्खिवियव्वं, तंपि अडुविहं एवं चेव भवइ, नामठवणाओ तहेव, दव्वखुड्डयं परमाणू, खेत्तखुड्डयं एगो आगासपएसो, कालखुड्डयं समयो, पहाण-खुड्डयं तिविहं, तं०-सचित्तं अचित्तं मीसगं च, तत्थ सचित्तं तिविहं-दुपयं चउप्पयं अपयं च, तत्थ दुपयाणं पहाणखुड्डयं लव-सत्तमा देवा, पंचण्हवि सरीराण सव्वखुड्डलयं आहारगसरीराणि, चउप्पयाण पहाणं सव्वखुड्डलयं सीहो, अपयाणं आगासपुप्फं जाइषुप्फं वा, अचित्ताणं वइरं, मीसयं ते चेव लवसत्तमा देवा सयणिज्जगया, पहाणखुड्डलयं गयं, इदाणिं पडुच्चखुड्डलयं भण्णइ- महत्खुल्लक- निक्षेपाः ॥ ९३ ॥

आगम (४२)	"दशवैकालिक"- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
	अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथाः [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] "दशवैकालिक" निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [-] गाथा १७- ३१ दीप अनुक्रम [१७-३१]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ अध्ययने ॥ ९५ ॥ दर्शना- चारः ॥ ९५ ॥ 'दंसणाणचरित्त'ंगाहा (१८३-१०१) सो य भावायारो पंचविहो, तं०-दंसणायारो णाणायारो चरिच्चायारो तवायारो वीरिया-यारो, तत्थ दंसणायारो सो अड्ढविहो भवइ, 'निस्संकिच्च'ंगाहा (१८४-१०१) तत्थ संका दुविहा, तं०-देससंका य सव्व-संका य, तत्थ देससंका जहा समाणे जीवत्ते कहमेस भविओ इमो अभविउत्ति, ण पुण चित्तइ जहा भावा हेउगेज्झा अहेतुगेज्झा य, तत्थ हेउगेज्झा जहा जीवस्स अत्थित्त एवमादी, अहेउगेज्झा जहा भविया अभविया य, (केवल) नेयो भावोत्ति, एसा देससंका, सव्वमेयं पागयभासाए बद्धं अण्णेण व कुसलक्खियं होज्जन्ति एसा सव्वसंका, तत्थ देससंकाए सव्वसंकाए य इमं उदाहरणं- कप्पट्टगा दोष्णि जहा आवस्सए तथा भणियन्नं, एवं सो जहा पेज्जावमाणेण मरणं संपत्तो, एवं जो जिणप्पणीएसु भावेसु संक करेइ सो संसारसु चिरं भमीहित, तम्हा संका न कायच्चा, जे न करेहिंति संके सो इतरकप्पट्टगो जहा पंचलक्खणार्ण भोगार्ण आभागी जाओ तथा सोवि जिणप्पणत्तेसु संके अकरेमाणे सम्भामोकखाणं आभासीभविससइ, तम्हा संका ण कायच्चा । इत्याणि कंखा, सा दुविहा- तं०-देसे सव्वे य, तत्थ देसकंखा जहा कोई एगं कुतित्थियमतं कंखइ, ण सेसाणि मत्ताणि, एसा देसकंखा भण्णइ, अण्णा पुण सव्वपावादियमयाई कंखइ सा सव्वकंखा भण्णइ, एताए दुविहाएवि कंखाए इमं उदाहरणं-राया अमच्छो य आसेण अवहिया अडविं पवेसिया, जहा आवस्सए तम्हा कंखा ण कायच्चा । इद्याणि विवितिगिच्छा, सा दुविहा-देसे सव्वे य, तत्थ देसविवितिगिच्छा सोहणं साहूणं जइ पुण जीवालो न लोगो दिट्ठो होंतो तो सुट्ठुरं होन्तेति, एवमाइदेसविवितिगिच्छा भण्णइ, इद्याणि सव्वविवितिगिच्छा-जइ सव्वं सुकरं जिणेहिं दिट्ठे होंतं तथो सुहं अम्महारिसा करते, तत्थ उदाहरणं-चौरो उज्जाणे जल हिण्यत्तणं मोत्तूणं विज्जं साहिच्चा आगासेणुप्पइओ, इतरो महिओ, जहा आवस्सए तदेव, तथा विवितिगिच्छा ण कायच्चा, अहवा
	*** अत्र भावाचाराणाम् दर्शनादि पंच भेदानां वर्णनं क्रियते । *** भावाचार-मध्ये दर्शनाचारस्य निःशङ्कित आदि अष्ट-भेदाः कथयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७-३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥ ९६ ॥ वितिगिच्छाए इमं वितियं उदाहरणं- दुगुंछा ण कायव्वा, जहा सावगधूया दुगुंछं काउं दुग्भिगंधत्तणं पत्ता, पच्छा सेणियस्स भज्जा जाया, एवं एयं अक्खाणयं जहा आवस्सए, वितिगिच्छित्ति गतं ॥ इदाणिं मूढदीट्ठित्तणं, तावसाणं तवातिसत्ता विज्जातिसया य ददूणं मिच्छादिट्ठीहिं वा पूहज्जमाणे कुत्तिथिए पासिऊण अमूढदिट्ठिणा भवियव्वं, एत्थ उदाहरणं सुलसा साविया, जहा अमडो रायगिहं गच्छंतो बहूणं भवियाण थिरीकरणनिमित्तं सामिणा भणिओ-सुहं संपुच्छेज्जासु, अमडो चित्तेह-पुण्णमंतिया सा जा अरहा पुच्छिज्जह, तओ अमडेण परिजाणणाणिमित्तं भत्तं मग्गिया, ताए न दिण्णं, तओ तेण बहूणि रूवाणि विगुव्वियाणि, तहवि न दिण्णं, ण य समूढा, तहा किर कुत्तिथियरिद्धीओ ददूण अमूढदिट्ठिणा भवियव्वं, अमूढ-दिट्ठित्तिगतं ॥ इदाणिं उववूहणत्ति दारं, सम्मत्ते सीयमाणस्स वा असीदमाणस्स वा उववूहणं कायव्वं, एत्थ सेणियराया दिट्ठंतो, जहा रायगिहे णगेरे सेणियो राया, इओ य सको देवराया सम्मत्तं पसंसइ, इओ य एगो देवो असदहंतो नगरवाहिं निग्गयस्स चेच्छयरूवं काऊण अणिमिसे गेण्हइ, ताहे तं निवारइ, पुणरवि अण्णत्थ संजई गुव्विणी पुरओ ठिया, ताहे अपवरगे पेसिऊण जहा न कोइ जाणइ तहा सइगिहं कारावियं, जं किचि सइकम्मं तं सयमेव करइ, तओ सो देवो संजईरूवं पयहिऊण दिव्वं देवरूवं दरिसेत्ति, भणइ य-भो ! सेणिय ! सुलद्धं ते जम्मजीवियफलं जेण ते पवयणस्सुवरिं एरिसी भत्ती भवत्ति उववूहेऊण गओ, एवं उववूहियव्वो, साहम्मियउववूहणेत्ति गयं । इदाणिं थिरीकरणं, धम्मे सीदमाणस्स थिरीकरणं कायव्वं, जहा उज्जेणीए अज्जासाढो कालं करेत्ते संजए अप्पाहेयइ मम दरिसावं देज्जह, जहा उत्तरज्जयणेसु एयं अक्खाणयं सव्वं तहेव, तम्हा जहा सो अज्जासाढो थिरीकओ तथा जे भविया ते थिरीकरेयव्वा, थिरीकरणंति दारं सम्मत्तं ॥ इदाणिं वच्छल्लत्ति दारं- तं च संत- दर्शनाचारः ॥ ९६ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७- ३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥ ९७ ॥ बलविरियपुरिसकारपरक्रमेण पवयणस्स कायव्वं, एत्थ दिट्ठतो चैव अज्जवइरा, जहा तेहिं अग्गिसिहाओ सुहुमकाइयाइं आणेऊण सासणस्स उब्भावणा कया, एयं अक्खाणयं जहा आवस्सए तहा कहियव्वं, एवं साहुणावि सव्वपयत्तेण सासणं उब्भावेयव्वं, पभावणेतिगयं, सम्मत्तो य दंसणायारो ॥ इद्वारिणं णाणायारो णाम जा णाणागमनिमित्ता चिट्ठा कज्जइ एस णाणायारो, सो य अट्ठविहो पण्णत्तो, तं-काले विणय'गाहा (१८६-१०१) तत्थ पढमं कालेत्ति दारं, जो जस्स अंगयविट्ठस्स वा अंगवाहिरस्स वा सुयस्स अज्झाइयव्वि कालो भणिओ तंमि जहोवइइ काले पढतो णाणायारे वट्ठइत्ति, तव्विवरीए काले पढेतस्स अणायारो भवइ, लोमे-एवि दिट्ठं, करिसयाण कालं पप्प णाणाविहाणं बीयाणं निप्फत्ती भवइ, तम्हा साहुणा काले पढियव्वं, अकाले पढते पडिणीयदेवया विराहेज्जा, अत्रो- दाहरणं- एको साहु पाउसियं कालं घेतुं अइकंताएवि पढमाए पोरिसिए अणुययोमेण पढइ कालियसुत्तं, सम्मदिट्ठदेवया य चित्तेइ-मा पन्तदेवया छलेज्जत्तिकोउं तक्कूडं घेतुं तक्कं तक्कंति तस्स पुरजो अभिक्खं आयागयाइं करइ. तेण य चिरस्स सज्झा- यस्स मे वाघायं करइत्ति भणिआ-अयाणिए! को इमो तक्कस्स विक्कणकालो?, वेलं ताव पलोएहि, तीयवि भाणयं-अहो! को इमो कालियसुत्तस्स सज्झायकालोत्ति?, अविय सूतीछेइमेचाणि पासइ, तओ सो साहु चित्तेइ-न एस पागइयत्तिकोऊण उवउत्तो, णायं चणेण-अट्ठरत्तो जाओ, मिच्छादुक्कडंति, देवयं भणइ- इच्छामि संता पडिचोयणा, देवयाए भण्णति- अकाले कालियं मा पढे- ज्जासि, मा ते अण्णा कोइ पंतदेवया छलेहि, तम्हा कालेणाहीयव्वं, अहवा अकाले सज्झायं करेतस्स इमं उदाहरणं-धमे धमे णातिधमे, अतिधंतं णं साभई. जं अज्जियं धमंतेण, तं हारियं अइधमंतेण ॥ १ ॥ जहा एगो समाविओ छेत्तं रक्खइ खगरभया, ज्ञानाचारः ॥ ९७ ॥
	*** भावाचार-मध्ये ज्ञानाचारस्य काल आदि अष्ट-भेदाः कथयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा १७- ३१ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥ ९८ ॥ ते सिंग धमइ सो य, अण्णदा तेण समावचीए धंतं सिंगयं, चोरा य तेण समीवेण गावो हरंति, तेहिं नायं-कुढो आयो, गावो छुड्डेऊण णट्टा, पभाए तेण दिट्ठातो, वरं णीयातो, तओ चिंतेइ-धमंतो चेवच्छामि छेत्तस्स अदूरसामंतो, एवं सो दिणे दिणे धमंतो धमंतो अच्छइ गावो चारित्तो य, ते य चोरा अण्णया तेणेव अंतण वोळित्ति, तेहिं सो परिजाणिओ जाव न कोइत्ति, ताहे रुद्धेहिं बंधाविओ गावो य से हडाओ, एवं साहुणावि जं काले पढिज्जइ तंमि चेव संतोसो कायच्चो, जो पुण लोभेणं पढंतो अच्छइ अकालेवि सो तहा विणस्सइ, एयंमि चेव अत्थे इमो चित्तिओ संखधमओ-एगो राया दंडयत्ताए पडिओ, एककेण य समावचीए संखो वाइओ, रत्ना य तुट्ठेण थक्के धंतंति सयसहस्सं दिण्णं, सो पच्चूसे निच्चमेव धमं० अच्छइ, अण्णया य राइणा विरेयओ पीओ, सण्णाभूमि अतीति, तेणं संखो हओ, परवलमासण्णं सुत्तं राइणा पुच्चं, तओ राइणो संतासेण वेगो ठिओ, असुहो जाओ, लट्ठीभूओ अ, सो य संखवाइणो दंडिओ, तह अकाले ण सज्झाएअव्वं, मा तहा विणस्सिहित्ति, अहवा इमं तहयं उदाहरणं-सिरीए मतिमं तुस्से, अईसिर्णि तु न पत्थए। अतिसिरीमिच्छंतीए, थेरीए विणस्सिओ अप्पा॥१॥ एगा छाणधारिया थेरी, ताए एगो वाणमंतरो तोसिओ, सा जाणि छाणाणि पछत्थेइ ताणि रयणाणि होँति, सा इस्सरी जाया, चाउस्सालं वरं कारियं, समोसियाए पुच्छियं- किमेयंति?, एताए सिद्धे, ताहे सावि एयं चेव वाणमंतरं आराहेउं पवत्ता, आराहिओ भणइ- किं करोमि?, ताए थेरीए भणियं- जइ पसाओ जं समोसियथेरीए वरं देह सो मम दुग्गुणो भवउ, एवं होउ, जं जं सा चिंतेइ तं तीसे दुग्गुणं होइ, तओ ताए पढमथेरीए नायं जहा एताए वरो लद्धो ममारहितो दुग्गुणो, सा असहंती पुणो भणइ-मम चाउस्सालं गिहं फिट्ठउ, तणकुडिया मे भवउ, तओ इथरीए दो तणकुडीयाउ, चाउस्सालाणि फिट्ठाणि, पुणो चिंतेइ-एकमच्छि काणं होउ, इथरीए ज्ञानाचारः ॥ ९८ ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा १७- ३१ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥ ९९ ॥ ज्ञानाचारः ॥ ९९ ॥ दोवि काणिभूयाणि, पुणो विचित्तेइ- मम एगो हत्थो भवउ, समोसियाए दोवि नट्टा, पुणो चित्तेइ- मम एगो पाओ होउ, समो- सियाए दोवि नट्टा, ताहे पडिया अच्छइ, एसो असंतोसस्स दोसो, तहावि अतिरिच्चे काले सज्जाएण कायव्वो, मा तहा विणि- स्सिहिइ जहा थेरिति, कालित्तियं दारं-इयाणिं विणओ, विणएण पढियव्वं, अविणएण अधेज्जमाणो विज्जाफलं ण लभइ, एत्थोदाहरणं-सेणिओ राया भज्जाए भणइ- ममेगखंभं पासारं करेहि, एवं दुम्मपुप्फियज्झयणे वक्खाणियं, तम्हा विणएण अधिज्जेयवं, णो अविणएणं, विणओ गओ। इदाणिं बहुमाणोत्ति दारं , जे णाणमंता तेसु णाणमंतेसु भावओ नेहूपडिवंधो एस बहुमाणो, भत्ती पुण अब्बुट्टाणकिरिया जा कज्जइ, एत्थ चउभंगी-एगस्स भत्ती णो बहुमाणो? एगस्स बहुमाणो णो भत्ती? एगस्स बहुमाणोवि भत्तीवि ३ एगस्स णो बहुमाणो णो भत्ती ४, एत्थ बहुमाणभत्तिविसंसन्निदरिसणत्थं इमं उदाहरणं-एगामि गिरिकंदरे सिवो, तं च बंभणो पुल्लिदो य अच्छेंति, बंभणो उवलवणसंमज्जणणावरिसावणपयतो सुतीभूओ अच्छिणिता थुणइ भत्तिजुत्तो, ण पुण बहुमाणेण, पुल्लिदो पुण तंभि सिवे भावपडिवद्धो गल्लोदएण प्हावेइ, णामिऊण उवविट्ठो, सिवो य तेण समं आलावसंकहाहि अच्छइ, अन्नया तेसि बंभणेण उल्लावणसदो सुओ, तेण परियरिऊण उवालद्धो- तुमंपि एरिसो चेव कडपूयण- सिवो जो एरिसएण उच्छिट्ठएण समं मेतेसि, तओ सिवो भणइ- एसो मे बहुमाणेइत्ति, तुमं पुणाई ण तहा, अणया य अच्छीणि ओखणिऊण अच्छइ सिवो, बंभणो य आगतुं रडिउमाटत्तो उवसंतो य, पुल्लिदो य आगओ, सिवस्स अच्छि ण पेच्छइ, तओ अप्पाणयं अक्खि कंडफलेण उक्खिणिता सिवस्स लाएइ, तओ सिवेण बंभणो पत्तियाविओ, एवं नाणमंतेसु भत्ती बहुमाणो य दोवि कायव्वाणि, बहुमाणोत्ति दारं गतं ॥ इयाणिं उवहाणदारं- उवहाणं णाम तवो जो जस्स अज्झयणस्स जोगो आगाढ-

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७- ३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ३ अध्ययने ॥११०॥ सीला नारी विनारी एवं कहालकखणाओ विणट्टुत्ति विकहा भवइ, सा य इमा विकहा, तं० ‘इत्थिकहा’ गाहा (२०९-११४) भणित्वा, विकहा गता ॥ जातो विक्खेवणादियातो चत्तारिवि कहाओ ताओ पुरिसंतरं पप्प अकहाओ य कहाओ भवन्ति, कहं?, जहा दुवालसंगं गणिपिडमं मिच्छादिट्ठि पप्प सुतअन्नाणभावेण परिणमइ, सम्मदिट्ठि पप्प सुतनाणभावेण परिणमति, तहा कहाओवि पणवयं पडुच्च एव विविहाउ भवन्ति, एत्थ गाहा-‘एता चेव कहाओ’ गाहा (२१०-११४) भणित्वा, तत्थ अकहा ताव एवं भवन्ति ‘मिच्छत्तं वेदेंतो जं अन्नाणी कहं परिकहेत्ति’ गाहा (२११-११४) कहा पुणेंवं भवति ‘तवसंजम’ गाहा (२१२-११४) पढियवा, विकहा पुण एवं भवइ-‘जा संजमो(ओ) पमत्तो’ गाहा (२१३-११४) भणियवा ॥ इदाणि संजमगुण- ट्ठिएण केरिसा ण कहेयवा, केरिसा वा कहेयवात्ति, तत्थ इमा न कहेयवा-‘संगाररसुत्तइया’ गाहा (२१४-११४) भाणि- त्वा, इमा पुण कहेयवा-‘समणेण कहेयवा’ गाहा (२१५-११४) पढित्वा, ‘अत्थमहंती’ गाहा (२१६-११४) भणित्वा, ‘खेत्तं देसं कालं’ गाहा (२१७-११४) कंछा, कहा सम्मत्ता, समत्तो य णामणिप्फणो णिक्खेवो ॥ इयाणि सुत्ताणुगमे सुत्तमुच्चारयव्वं, अक्खलियं अमिलियं अविच्चांमेलियं जहा अणुयोगदारे, तं चिमं सुत्तं ‘संजमे सुट्ठियप्पाणं, विप्पमुक्काण ताइणं । तेसिमेयमणाइणं, णिग्गंधाण महेसिणं (१७-११५) ‘यम उपरमे’ धातुः, अस्य धातुसंज्ञा, संपूर्वस्य अपप्रत्ययः, अनुबंधलोपः परगमनं संयमः, तत्थ संयमो सत्तरसविहो हेट्ठा दुमपुण्फियाए वण्णिओ, ‘अत सातत्यगमने’ धातुः धातुसंज्ञा, सात्य- तिभ्याम्मनिन्मनिणा’ विति (उणादि ४) मनिण् प्रत्ययः, अनुबंधलोपः वृद्धिः आत्मा, तस्मिन् संयमे शोभनन प्रकारेण स्थितः आत्मा येषां ते भवन्ति संयमे सुस्थितात्मानः, ‘मुत्तु मोक्षणे’ धातुः, अस्य निष्ठाप्रत्ययांतस्य विप्रपूर्वस्य च विप्रमुक्तः, विप्रमुक्काणं विवि- मिश्रा कथा- विकथाऽ- कथास्वरूपं च  ॥११०॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७-३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥१११॥ हेण बाहिरम्भन्तरेण गंधेण मुक्कणं, निर्गन्धार्णति वुत्तं भवइ, ‘त्रै पालने’ धातुः, ‘आदेच उपदेशेऽशिति’ (पा६-१-४५) आकारः, अस्य तृच् प्रत्ययः, शत्रोः परमात्मानं च त्रायंत इति त्रातारस्तेषां त्रातुणां, तारंतित्ति तारिणो, ते य तारिणो तिविहा भवन्ति, तं-आततायारो परतायारो उभयतातारोत्ति, तत्थ आयतातारो पत्तेयवुद्धा, परतातारो तित्थकरा, कहं?, ते कयकिच्चावि भगवंतो भवियाणं संसारसमुद्धारकंखिणो धम्मोवएमेण तारयन्ति, चांदओ भणइ—असंक्वावि पव्वइया संता नो किं तातिणो भवन्ति?, आयरिओ भणइ-तेहिं अंघलगपदीवधारितुल्लेहिं ण एत्थ अधिकारो, उभयतातिणो थेरा भणन्ति, ‘तेसिमेयमणाइण्णं’ तेसि पुव्वनिहिट्ठाणं संजमेठिताणं बाहिरम्भन्तरेण गंधविमुक्कणं आयपरोभयतातीणं एयं नाम जं उवरि एयंमि अज्झयणे भणिहिति एयं जेसिमणाइण्णं, अणाइण्णं णाम अकप्पणिज्जन्ति वुत्तं भवइ, अणाइण्णगगहणेण जमेतं अतीतकालगगहणं करेइ तं आयपरोभयतातीणं कीरइ, किं कारणं?, जइ ताव अम्ह पुव्वपुरिसेहिं अणातिण्णं तं कहमम्हे आयरिस्सामोत्ति?, निर्गन्धगगहणेण साहूण णिइसो कओ, महान्मोक्षोऽभिधीयते, महत्पूर्वः ‘इषु इच्छायां’ धातुः, महांतं एषितुं शीलं येषां ‘सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये’ (पा. ३-२-२८) इति णिनि प्रत्ययः, उपपदसमासे अनुबन्धलोपः, उपधागुणः ‘वृद्धिरेच्ची’ ति (पा. ५-१-८८) वृद्धिः, ते महैषिणो, मग्ग-णंति वा एसणंति वा एगइ, तेषां महैषिणां एतत्सर्वमनाचीर्णं यदित ऊर्ध्वमनुक्रमिष्यामो, आह च—  उद्देसियं१ कीयगडं२, णियागं३ अभिहडाणि४ य। राय भत्ते५ सिणाणे६ य, गंध७ भल्ले८ य वीयणे९ ॥ (१८ ११६) उद्दिस्स कज्जइ तं उद्देसियं, साधुनिमित्तं आरंभोत्ति वुत्तं भवति, ‘हुक्कीज द्रव्यविनिमये’ धातुः अस्य तुम्प्रत्ययः अनुबन्धलोपः गुणः केतुम् अन्यसत्कं यत्केतुं दीयते क्रीतकृतं, नियामं नाम निययत्ति वुत्तं भवति, तं तु यदा आयेरेण आमंतिओ भवइ, जहा भगवं ! मिश्रा कथा- विकथाऽ- कथास्वरूप च ॥१११॥
	*** अत्र औदेशिक-आदि दोषाणां वर्णनं क्रियते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७- ३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ३ अध्ययने ॥११२॥ तुभेहिं मम दिणे दिणे अणुगहो कायव्वो तदा तस्स अब्भुवमच्छंतस्स निपागं भवति, ण तु जत्थ अहाभावेण दिणे दिणे भिक्खा लब्भइ, ‘णीञ् प्रापणे’ धातुः, निष्ठाप्रत्ययान्तस्य नीतं, अभिहडं णाम अभिमुखमानीतं. कहं ?, सग्गामपरग्गामनिसीहा-भिहडं च नोनिसीहं च, अभिहडं जहा उवस्सए एव ठियस्स गिहंताराओ आणीयं एवमादी, एत्थ सीसो आह-अभिहडाणि यत्ति एत्थ बहुवयणअभिधाणं विरुद्धं चेव, आह च-अभिहडाणित्ति बहुवयणेण अभिहडभेदा दरिसिता भवति, कहं?, ‘सग्गामपरग्गामे निसीहाभिहडं च नोनिसीहं च । निसीहाभिहडं धेप्वं णोणिसीहं तु वोच्छामि ॥ १ ॥’ एयाए गाहाए वक्खाणं जहा पिंड-णिज्जुत्तीए, चकारेण अण्णाणिवि एवमाइयाणि सूइयाणि भवति, ‘राय भत्ते सिणाणे य’ तत्थ रायभत्तं चउव्विहं, तं-दिया गेण्हित्ता वितियदिवसे भुंजति? दिया घेतुं राइं भुंजइ २ राइं घेतुं दिया भुंजइ ३ राइं घेतुं राइं भुंजइ ४, सिणाणं दुविहं भवति, तं-देससिणाणं सव्वसिणाणं च, तत्थ देससिणाणं लेवाडयं मोत्तूण सेसं अच्छिपम्हपक्खालणमेत्तमवि देससिणाणं भवइ, सव्वसिणाणं जो ससीसतो ण्हाइ. ‘गंधमल्ले य वीयणे’ तत्थ गंधग्गहणेण कोट्टुपुडाइणो गंधा गहिया, मल्लग्गहणेण गंधिमवेढिमपूरिमसंघाइमं चउव्विहंपि मल्लं गहितं, वीयणं णाम धम्मत्तो अत्ताणं ओदणादि वा तालवेंटादीहिं वीयेति, एयं तेसिमणाइण्ण । किं च- ‘सणिणीही १० गिहिमत्ते ११ य, रायपिंडे १२ किमिच्छए १३ । संवाहणा १४ दंतपहोवणा १५ य, संपुच्छणा १६ देहपलोयणा १७ य ॥ (१५-११६) ‘डुघात् धारणे’ धातुः अस्य सन्निपूर्वस्य ‘उपसर्गे घोः किः (पा. ३-३-९२) इति किः प्रत्ययः, ‘आतो लोप इटि चे’ति (पा. ६-४-२४) आकारलोपः सन्निधिः, तत्थ सन्निही णाम गुडघयादीणं संचयकरणं, गिहिमत्तं गिहिभायणंति, ‘राजृ दीप्तौ’ धातुः अस्य ‘कनिन् युवृषितक्षिराजिघान्निद्युप्रतिदिवः’ (उणादि १ पादः) कनिन् प्रत्ययः अनुबन्धलोपः परगमनं राजन्, तत्थ रायग्गहणेण मुद्धा- अनाची- णानि ॥११२॥
	*** अत्र संनिद्धि आदि दोषाणां वर्णनं क्रियते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७- ३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ३ अध्ययने ॥११३॥ मिसित्तरणो गहणं, ‘पिण्डि संघाते’ धातुः ‘इदितो लुप्’ प्रत्ययः, अनुबन्धलोपः पिण्डः राजपिण्डः, सो य किमिच्छतो जति भवति, किमिच्छओ नाम राया किर पिण्डं देतो गेण्हंतस्स इच्छियं दलेइ, अतो सो रायपिण्डो गेहिपिण्डिसेहणत्थं एसणारक्खणत्थं च न कप्पइ, संवाहणा नाम चउव्विहा भवति, तंजहा--अट्टिसुहा मंससुहा तथासुहा रोमसुहा, एवं संवाहणं सयं न करेइ परेणं न कारवेइ करे तं पि अन्नं न समणुजाणामि(इ) दंतपहोयणं णाम दंताण कट्ठोदगादीहि पक्खालणं, संपुच्छणा णाम अप्पणो अंगावयवाणि आपुच्छ-माणो परं पुच्छइ, पलोयणा नाम (अद्वागे रुवनिरिक्खणं ‘अट्टावयं’ गाहा (२०-११६) अट्टावयं) जूयं भण्णइ, १८ नालियाए पासाओ छाट्ठण पाणिज्जंति, मा किर सिक्खाणुणेण इच्छंतिए कोई पाडेहिति १९, छत्तं नाम वासायवनिवारणं तं अकारणे धरितं न कप्पइ, कारणेण पुण कप्पति २०, तिगिच्छा णाम रोगपडिकम्मं करेइ २१, उवाहणाओ लोगसिद्धाओ चेव, सीसो आह—पाहणागहणेण चेव नज्जइ-जातो पाहणाओ ताओ पाएसु भवंति, ण पुण ताओ गलए आविधिज्जंति, ता किमत्थं पायग्गहणंति, आयरिओ भणइ-पायग्गहणेण अकल्लसरीरस्स गहणं कयं भवइ, दुव्वलपाओ चक्खुदुव्वलो वा उवाहणाओ आविधेज्जा ण दोसो भवइत्ति, किंच-पादग्गहणेण एतं दंसेति-परिग्गहिया उवाहणाओ असमत्थेण पओयणे उप्पण्णे पाएसु कायव्वा, ण उण सेसकालं २२, जोई अग्गी भण्णइ, तस्स अग्गिणो जं समारम्भणं, एतमवि तेसिमणाइणं २३। किंच-  सिज्जातरपिण्डं च ’ सिलोगो (२१-११६) ‘शीङ्ग स्वप्ने’ धातुः, क्यप्प्रत्ययान्तस्य शय्या, आश्रयोऽभिधीयते, तेण उ तस्स य दाणेण साहूणं संसारं तरतीति सेज्जातरो तस्स पिण्डो, भिक्खत्ति वुत्तं भवइ २४, आसंदिग्गहणेणं आसंदगस्स गहणं कयं, सो य लोगे पसिद्धो २५, पलियंको पल्लंको भण्णइ, सोवि लोगे पसिद्धो चेव २६, अहवा एतं सुत्तं एवं पढिज्जइ ‘सिज्जातरपिण्डं च अनाची- र्णानि  ॥११३॥
	***अत्र शय्यातर-पिण्डस्य वर्णनं क्रियते

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७- ३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ३ अध्ययने ॥११५॥ अनिव्वुडाणि ण कप्पंति, उच्छुखंडमवि दोसु पांरेसु वट्टमाणेसु अनिव्वुडं भवइ, निव्वुडं पुण जीवविप्पजटं भण्णइ, जहा निव्वातो जीवो, पसंतोत्तिवुत्तं भवइ ३५, कंदा ३६ मूलावि ३७ जे अपरिणया ते ण कप्पंति, फला तवुसाइणो ३८ बीजा गोधूमतिलादिणो, ३९ एयमवि तेसि परिभोत्तुं अणाइण्णं ।  च ‘सोवच्चले सिंधवेलोणे’ सिलोगो (२४-११६) सोवच्चलं नाम सेंधवल्लोणपव्वयस्स अंतरंतरेसु लोणखाणीओ भवति ४०, सेंधवं नाम सिंधवल्लोणपव्वए तत्थ सिंधवल्लोणं भवइ ४१, रुमालोणं रुमाविसए भवइ ४२, समु-इलोणं समुदपाणीयं तं खड्डीए निग्गंतूण रिणभूमीए आरिज्जमाणं लोणं भवइ ४३, पंसुखारो ऊसो भण्णइ ४४, कालालोणं नाम तस्सेव सेंधवपव्वयस्स अंतरंतरेसु काला लोणखाणीओ भवति, आमगं भवति असत्थपरिणयं, एतमवि तेसिमणाइण्णं ४५ । किंच—‘धूवणे-त्ति वमणे य’ सिलोगो (२५-११६) तत्थ धूवणेत्ति नाम आरोग्यपडिकम्मं करेइ धूमंपि, इमाए सोगाइणो न भविस्संति, अहवा अन्नं वत्थाणि वा धूवेइ ४६, वमणं लोगपसिद्धं चेव ४७, वत्थीकम्मं नाम वत्थी दइओ भण्णइ, तेण दइएण घयाइणि अधिट्ठाणे दिज्जंति ४८, विरेयणं लोगपसिद्धं चेव ४९, एयाणि आरोग्यपरिकम्मनिमित्तं वा ण कप्पइ, अंजणे दन्तवणे य गायबभंगविभूसणाणि लोगपसिद्धाणि चेव, ५०  तेसिमेयमणाइण्णं ‘तेसिमेयमणाइण्णं निग्गंथाण महेसिणं’ २६-११६) तेसिमेयमणाइण्णमिति जं हेट्ठा उद्देसियाओ आरब्भ जाव गायबभंगविभूसणेति अणाइण्णमेतं निग्गंथाण महेसिणं, ‘संजमं अणुपालंता लहुभूयविहारिणो’ । संजमो पुव्वभणिओ, अणुपालयंति णाम तं संजमं रक्खयंति, भूता णाम तुल्ला, लहुभूतो लहु वाऊ तेण तुल्लो विहारो जेसि ते लहुभूतीविहारिणो, वाउरिव अप्पडिवद्धा विहरंति ।  पंचासवपरिणयाया’ सिलोगो (२७-११८) ‘श्रु गतौ’ धातुः श्रवतीति अच्प्रत्ययः आश्रवः, ‘पंच’त्ति संखा, आसवगहणेण हिसाईणि पंच कम्मरसासव- अनाची- णानि  ॥११५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [३], उद्देशक [-], मूलं [-] / गाथा: [१७-३१/१७-३१], निर्युक्तिः [१८०-२१७/१७८-२१५], भाष्यं [४...]
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥१७-३१॥ दीप अनुक्रम [१७-३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ पदजीव. ॥११७॥ दन्ता' (२९-११८) परीसहा बावीसं 'सह मर्षणे' धातुः, अस्य परिपूर्वस्य अच्प्रत्ययः, परीषहा, ते परीषहा रिपवो भण्णंति, ते जेहिं दमिता ते परीसहरिबुदन्ता, धुयमोहा नाम जितमोहचित्तियुत्तं भवइ, जित्तिदिया णाम जिताणि इंदियाणि-सोत्ताईणि जेहिं ते जिइं दिया, सव्वदुक्खप्पहीणट्ठा नाम सव्वेसिं सारीरमाणसाणं दुक्खाणं पहाणाय, खमणानिमित्तंति युत्तं भवइ, परक्कमंति विविहं पगारिहिं परक्कम्मंति युत्तं भवइ । इदाणि एवं तेसिं जतंताणं जं फलं तं भवइ- 'दुक्कराईं करेत्ताणं' सिलोमो, (२०-११८) 'दुक्कं करणे' धातुः दुःपूर्वस्य अस्य 'ईप्त्सुदुष्पु कृच्छ्राकृच्छ्राथेषु खल् (पा. ३-३-१२६) प्रत्ययः दुक्कराणि, त एवं परक्कम्म दुक्कराणि आतापनाअकंइयनाक्रोशतर्जनाताडनाधिसहनादीनि, दूसहाईं सहिउं केइ सोहंमाईहिं वेमाणिएहिं उप्पज्जंति, केइ पुण तेण भवग्गहणेण सिज्जंति, णीरया नाम अट्ठक्कम्मपगडीविमुक्का भण्णंति, तत्थ जे तेणेव भवग्गहणेण न सिज्जंति ते वेमाणिएसु उववज्जंति, तत्तोवि य चइऊणं धम्मचरणकाले पुव्वकयसावसेसेणं सुकुलेसुं पच्चाययंति, तओ पुणोवि जिणपण्णत्तं धम्मं पडि- वज्जिऊण जहणेण एमेण भवग्गहणेण उक्कोसेणं सत्तहिं भवग्गहणेहिं-खवेत्ता पुव्वक्कम्माइं, संजमेण तवेण य । सिद्धिमग्ग- मणुप्पत्ता, ताइणो परिनिव्वुडेत्ति (३१-११८) जाणि तेसिं तत्थ सावसेसाणि कम्माणि ताणि संजमतवेहिं खविऊणं सिद्धि- मग्गमणुपत्ता नाम जहा ते तवनियमेहिं कम्मखवणट्ठमब्भुज्जुत्ता अओ ते सिद्धिमग्गमणुपत्ता भण्णंति, तायंतीति तायिणो, परिनिव्वुडा नाम जाइजराभरणरोगादीहिं सव्वप्पगारेणवि विप्पमुक्कत्ति युत्तं भवइ, वेमिनाम नाहमात्मीयेनाभिप्रायेण, किं तहिं?, तीर्थकरोपदेशाद् ब्रवीमि ॥ इयाणि नया व्याख्यायंते 'णायंमि गिण्हयव्वे अगेण्हअव्वंमि चैव अत्थंमि । जइतव्वमेव इति जो उवएसो सो नयो नाम ॥ १ ॥ सव्वेसिपि नयाणं बहुविहवत्तव्वयं निसामेत्ता । तं सव्वनयविसुद्धं जं चरणगुणट्ठिओ साहू संयत- त्वफलं ॥११७॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ४ षड्जीव. ॥१२०॥ भण्णइ-‘दुविधा य होंति जीवा’ गाहा, सुहुमा वादरा य, तत्थ सुहुमा सच्चलोगे परियावण्णा णायव्वा, वायरा पुण दुविहा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य, पस्सवणेत्ति दारं गतं ॥ इयाणिं लक्खणेत्ति दारं, लक्खणं नाम जेण जीवो पच्चक्खमणुवल्लभमाणो विणज्जइ जहा अत्थित्ति तं लक्खणं भण्णइ, तं च लक्खणं इमाहिं दोहिं गाहाहिमणुगंतव्वं, तंजहा ‘आदाणे परिभोगे’ गाथा (२२५-१२३) ‘चित्तं चेयण सन्ना’ गाहा (२२६-१२३) तत्थ पढमं आयाणेत्ति दारं, जहा अग्गिणो दहणादीणि लक्खणाणि एवं जीवस्सवि आदाणं, आदाणं णाम गहणं, जहा संडासएण आदाणेण लोहकारो आदेयं लोहपिंडं गेण्हइ, एवं जीवो संडास-त्थाणि एहिं सोईदियाइएहिं पंचहिं इंदिएहिं लोहपिंडत्थाणीया सहसुरसगंधफासे गेण्हइ, नासदात्मा आदानेनादेयग्रहणसा-मर्थ्ययुक्तत्वाद् अयस्कारादिवत्, आदानेत्ति दारं गतं ॥ इदाणिं परिभोगेत्ति दारं, परिभोगेण नज्जइ जहा अत्थि जीवो, कहं ? जम्हा सदाइणो पंच विसया जीवो परिभुंजअइ णो अजीवो, एत्थ दिट्ठतो ओदणवड्डियजं, जहा ओदणवड्डियाओ भोत्ता अण्णो अत्थंतरभूओ, एवं सरीराओ अत्थंतरभूतेन अण्णेण भोत्तारेण भवियव्वं, सो य जीवो सदादीणं उवभुंजओत्ति, विज्ज-मानभोक्तृकमिदं सरीरं भोग्यत्वात् ओदनवड्डितकवत्, परिभोगेत्ति दारं ॥ इदाणिं जोगेत्ति दारं, सो तिविधो-मणजोगो वय-जोगो कायजोगो, सो तस्स तिविहस्सवि जोगस्स जीवो णायगोत्ति, अन्यप्रयोक्तृका मनोवाकाययोगाः करणत्वात्परश्चादिवत्, जोगेत्ति दारं गतं ॥ इदाणिं उवयोगेत्ति दारं, सो य जीवोत्ति दारं, नाणंति दारं, नाणंति वा उवयोगेत्ति वा एगइहा, सुहुदु-क्खोवयोगं निच्चकालमेवोवउत्तो, उवयोगो लक्खणं जीवस्येति, नासदात्मा स्वलक्खणापरित्यागादग्निवत्, उवयोगेत्ति दारं गतं ॥ तहा इयाणिं कसायलक्खणं जीवस्स भण्णइ, जहा सुवण्णदव्वस्स कडगकुंडलाईणि लक्खणाणि भवंति तहा जीवस्स को- जीवस्य- प्ररूप- णादीनि ॥१२०॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ पङ्क्ति- ॥१२५॥ इदाणि बंधपञ्चयअभावोत्ति दारं-णिच्चो जीवो, कहं?, बंधपञ्चयअभावपसंगा जहाऽऽगासं, जम्हा खणविणट्टस्स अभावो भवति, दिट्ठतो घडो, जहा अविणट्टो घडो जलादीणं आहारकिच्चं करेइ, एवं जीवो जइ निच्चो णाणखणे ण विणस्सइ तो अवत्थि-यस्स बंधो मोक्खो य भवइ, अणवत्थियस्स अण्णमि खणे उप्पण्णस्स बंधपञ्चयअभावो भवइ, तम्हा निच्चो जीवो, जम्हा य निच्चो अतो अरूवी सरीराओऽवि अण्णो, नित्य आत्मा बंधप्रत्ययाभावादाकाशवत्, बंधपञ्चयअभावोत्ति दारं गतं । इदाणि विरुद्धअत्थऽपादुभावेरि दारं, निच्चो जीवो, कहं?, जं विणासि दव्वं भवति तंमि विणट्टे विरुद्धस्स पाउब्भावो दीसई, दिट्ठतो कट्ठछाणादीणि, जहा कट्ठछाणादीणि विणासिदव्वाणि तेसि विणासमागच्छंताणं छारइं गालाईणि विरुद्धदव्वाणि पाउब्भवन्ति, जहा वा घडस्स कवालाईणि विरुद्धदव्वाणि पाउब्भवन्ति, एवं जइ जीवस्स विणासे किंचि तारिसं विरुद्धदव्वं पाउब् रेज्जा तो अणिच्चो होज्जति, जम्हा य णिच्चो अतो अरूवी सरीराओ अण्णो, अविनाशी आत्मा विरोधिविकारासंभवादाकाशवत्, नि-चचत्तंति दारं गतं ॥ नित्यः आत्मा द्रव्यामूर्त्तत्वादाकाशवत्, अरूविता, अण्णत्तान्ति दारं गतं । इदाणि विइयाए गाहाए अत्थो भण्णति, तत्थ पढमं दारं निरामयभावोत्ति, कहं?, जम्हा निरामयो सामयो य भवति, दिट्ठतो घडओ, जहा घडस्स विणट्टस्स ण केणइ संजोगो भवइ, एवं जीवोवि जइ खणे उप्पज्जइ विणस्सइ य तओ तस्स अभावीभूयस्स निरामयभावो ण जुत्तो, विज्जमाणो अप्पा निरामयो वा होज्जा सामयो वा, निरामओ-निरोगी भण्णइ, सामयो सरोगी, निरोगो होऊण सरोगो भवइ, सरोगो होऊण निरोगो भवति, तम्हा निरामयसामययोगेण णज्जइ जहा अप्पा णिच्चोत्ति, जम्हा य निच्चो अओ अरूवी सरीराओ अण्णो, निरामयसामयभावोत्ति दारं गतं ॥ इयाणि बालकयाणुसरणंति, नानिच्चो जीवो, कहं?, जम्हा पुव्वाणुभूतं सरइ, निरामय- सामया- दीनि- द्वाराणि ॥१२५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ पदजीव. ॥१२७॥ जत्थ ताणि फलाणि सच्चसो णत्थि, तहा जीवस्सवि पुव्वं अब्भत्थं थणपारं जं जातस्सेव बालस्स उवएसमंतरेणवि थणं पति अहिलासो भवति, थणाभिलासकरणेण णज्जइ जहा निच्चो जीवोत्ति, थणाभिलासोत्ति दारं गतं । इदाणि तइयाए गाथाए अत्थो भण्णइ, तत्थ पढमं दारं सच्चवण्णुवदिट्ठत्ता, णिच्चो जीवो, कहं ?, जम्हा सच्चवण्णूहि एवमुवदिट्ठो, ते य भगवंतो ण तं भासति जस्स पुव्वावरदोसो भवति, भणियं च-‘वीतरागा हि सच्चवण्णू’ तम्हा निच्चो ततो अरूवी सरीराओ य अण्णोत्ति, सच्चवण्णुवदिट्ठत्तनि दारं गयं । इयाणिं सकम्मफलभोयणंति दारं, णिच्चो जीवो, कहं ?, जम्हा सयं कडाणि सुकयदुक-याणि कम्माणि अणुभवइ, जति निच्चो न भवेज्जा तो खणविणासिस्स सुकडदुकडाणं फलाणुभवणं न होज्जा, दीसति य फल-मणुभवंतो पच्चक्खमेव, तम्हा सकयफलभोयणेण णज्जइ जहा णिच्चो जीवोत्ति, जम्हा णिच्चो तम्हा अरूवी सरीराओ य अण्णोत्ति, सकम्मफलभोयणेत्ति दारं, गतं अण्णत्तं, इयाणिं अमुत्तत्ति दारं, णिच्चो जीवो, कहं ?, जम्हा सो अरूवी, दिट्ठतो आगासं, जहा आगासं अमुत्तिमंतं निच्चं तहा जीवोवि अमुत्तिमंतो निच्चो भविस्सति, अमुत्तत्तअण्णत्तनिच्चत्ताणि गयाणि ॥ इयाणिं कारओत्ति दारं, कारओ जीवो, कहं ?, जम्हा सुभासुभफलमणुभवइ, दिट्ठतो वाणियकिसिबलाइ, जहा वाणिजादयो फल-भोइणो कत्तारो, एवं जीवो भोत्ता कारओ, गयं कारओत्ति दारं, इदाणिं देहवाचित्ति दारं, जीवो देहवावी, कहं ?, जम्हा तस्स परिमिए देसे लिगाणि उवलब्भते, दिट्ठतो अग्गी, जहा अग्गी जंमि ठाणे वड्डइ तंमि चेव डहणपयणपयासणादीणि भवंति, एवं जीवो जंमि चेव परिमिते देसे अवत्थिओ तंमि चेव आकुंचणपसारणादीणि दीसति, तम्हा परिमिते देसे लिगदरिसणेण णज्जइ जहा जीवो देहवावी, सरीरमात्रव्यापी एवमात्मा परिमितदेसे लिगदर्शनादग्निवत्, देहवाचित्ति दारं गतं । इयाणिं वित्तियाए सर्वज्ञोपदि- ष्टत्वादीनि ॥१२७॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
	अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ३२- ५९ दीप अनुक्रम [३२-७५]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ अ० ॥१३०॥ अध्ययनो- पोद्धातः मूलं तस्मिन् जो आउकाओ सो मओ, इतरंमि जीवइ, तस्स अभावे सोऽवि भग्गो, ताहे तेण पुब्बमएण मारिओत्ति भण्णइ, अहवा एगो घडो आउकायभरिओ, ताहे तमाउकायं दुहा काऊणं अट्ठो ताविओ, सो मओ, अतो बीओ जीवइ, ताहे सोवि तत्थेव पक्खित्तो, तेण मएण जीवंतो मारिउत्ति, एसो भारकाओ गओ ॥ इयाणि भावकाओ भण्णइ- भावकाओ नाम तिप्पभिई उदइयाइया भावा भावकाओ, ‘इत्थं पुण अहिमारो’ गाहा (२३१-१३५) इत्थं पुण अहिमारो अज्झयणे निकायकाएण अहि-मारो, सेसा पुण उच्चारियत्थसरिसत्तिकीऊणं परुवियाणि, कायोत्ति दारं गतं, गओ य णामणिप्फणो णिकसेवो, इदानि सुत्ताणुगमे सुत्तमुच्चारेयव्वं अक्खलियं जहा अणुओगदारे, तं च सुतं इमं ॥ सुतं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं (सू० १-१३६) ‘श्रु श्रवणे’ धातुः, अस्य निष्ठा प्रत्ययः-श्रूयते स्म श्रुतं, एतस्स सुतस्स इमो अभिसंबंधो- ‘अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गुंथंति गणहरा णिउणा। सासणस्स हियट्ठाए तओ सुत्तं पवत्तइ ॥ १ ॥ जं भगवतो अतिए अत्थं सोऊण गणहरा तमेव अत्थं सुत्तीकाऊण पत्तेयं अप्पणो सीसिहिं जिणवयणसोतव्वगाभिमुहेहिं पुच्छिज्जमाणा एवमाहंसु- ‘सुतं मे आउसंतेणं’ अहवा सुहम्मसामी जंबुनामं पुच्छमाणं एवं भणइ, अस्मतसर्वनाम्नः कर्तृकरणार्थं तृतीयैकवचने टाडसी (पा. ७-१-१२) त्याद्येत्वे प्राप्ते ‘योऽची’ति (पा. ७-२-८९) यकारः ‘त्वमावेकवचने’ (पा. ७-२८७) इति मादेशः परगमनं मया, श्रुतं मया आयुष्मान् ! तेन भगवता, सुतं मतत्ति जो निहेसो एस खणिगवादिपडिसेहणत्थं कज्जइ, कहं ?, अहमेव सो जो तदा भगवतो तित्थगरस्स सगासे सोऊण णिविट्ठो, अक्खणिउत्ति वुत्तं भवइ, आयुस्स प्रातिपदिकं प्रथमा सुः, आयुः अस्यास्ति मतुप्प्रत्ययः, आयुष्मान्!, आयुष्मन्नित्यनेन शिष्यस्यामन्त्रणं गुणाश्च देशकुलशीलादिका अन्वाख्याता भवन्ति,
	*** अथ अध्ययनस्य सूत्राणि आरब्धाः

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ अ० ॥१५०॥ महग्घमुल्लं वा अप्पेण अग्घेण राउलमंडीए किणइ, अहवा जं अदिक्खं गण्हइ तं अप्पग्घं वा महग्घं वा होज्जा, तं च अदिण्णादाणं कोई दव्वओ गेण्हेज्जा नो भावओ? भावओ गेण्हेज्जा नो दव्वओ? दव्वओवि भावओवि? एगे नो दव्वओ नो भावओ? तत्थ दव्वओ नो भावओ जहा तणकट्टादीणि कोई साहू अरत्तदुट्ठो अणणुण्णविऊण गेण्हेज्जा तस्स दव्वओ अदिण्णादाणं नो भावओ, भावओ नो दव्वओ जहा चोरबुद्धीए पविसिऊण ण किंचि तारिसं लद्धंति तं भावओ अदिण्णादाणं नो दव्वओ, दव्वओवि भावओवि जहा चोरबुद्धीए पविट्ठो तारिसं अणेण लद्धं, एयं दव्वओवि भावओवि अदिण्णादाणं भवति, चउत्थो भंगो सुण्णो, सीसो आह—एयस्स अदिण्णादाणस्स को दोसो?, आयरिओ भणइ—इहलोगे ताव मरहणिज्जो भवइ बंधवहादीणि य पावइ, परलोगे य दोग्गइगमणं भवइ, ‘तच्चे भंते! महव्वए उवाट्ठिओमि सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं’ । ● ‘अहावरे चउत्थे भंते! महव्वए मेहुणाओ वेरमणं’ (६-१४१) एयस्सवि महव्वयस्स जो विसेसो सो भणइ, सेसं तहव जहा पाणातिवायवेरमणस्स, ‘से दिव्वं वा माणुसं वा तिरिक्खजोणियं वा’ होज्जा, एगग्गहणे गहणं तज्जाईयाणमितिकाउं खेत्तकालभावा तिण्णवि गहिया। इयाणि एयं चउत्थिहं पि मेहुणं वित्थरओ भणइ, तं—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ य, तत्थ दव्वओ मेहुणं रूवेसु वा रूवसहगएसु वा दव्वेसु, तत्थ रूवेत्ति णिज्जीवे भवइ, पडिमाए वा मयसरीरे वा, रूवसहगयं तिविहं भवति, तं—दिव्वं माणुसं तिरिक्खजोणियं, अहवा रूवं भूसणवज्जियं, सहगयं भूसणेण सह, खेत्तओ उड्डमहोतिरि एसु, उड्डं पव्वतदेवलोगाइसु अहे गट्ठाभवणादिसु तिरियं दीवसमुदेसु, कालओ मेहुणं दिया वा राओ वा, भावओ रागेण वा दोसेण वा होज्जा, रागेण मदणुभवे होज्जा, दोसेण जहा कोई सेहाइ तच्चणिणिगाए महव्वयाणि से भंजामितिकाउं मैथुन- विरमणं ॥१५०॥
	*** चतुर्थ महाव्रतस्य निरूपणं

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ अ० ॥१५४॥ इदानीं जयणा भण्णइ-‘से’ भिक्खु वा भिक्खुणी वा’(१०-१५१)सुत्तं उच्चारयेय्वं, ‘से’त्ति निहेसे, किं निहिस्सति?, जो तेसु महव्वएसु जहोवइहेसु अवट्ठिओ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा इति, संजओ नाम सोभणेण पगारेण सत्तरसविहे संजमे अवट्ठिओ संजतो भवति, विरओ णामऽणेगपगारेण बारसविहे तवे रओ, पावकम्मसदो पत्तेयं पत्तेयं दोसुवि वट्ठइ, तं०-पडिहयपावकम्मो पच्चक्खायपावकम्मो य, तत्थ पडिहयपावकम्मो नाम नाणावरणादीणि अट्ठ कम्माणि पत्तेयं पत्तेयं जेण हयाणि सो पडिहयपावकम्मो, पच्चक्खायपावकम्मो नाम निरुद्धासवदुवारो भण्णति, अहवा सत्त्वाणि एताणि एगट्ठियाणि, तं एवंगुणसंपण्णेण भिक्खुणा भिक्खुणीए वा दिवसओ जागरमाणेण राईए निहामोक्खं कुव्वमाणेण सेसं कालं जागरमाणेण कारणिएण वा एगेण परिसामणुगएण वा जं दानिं भण्णिहिति तं ण कायव्वं, ‘से पुढविं वा’ जो सो पुढविकायो हेट्ठा भणिओ तस्सेयं गहणंति, तत्थ पुढविग्गहणेणं पासाणलेट्ठुमाईहिं रहियाए पुढवीए गहणं. भित्ती नाम नदी भण्णइ, सिला नाम विच्छिण्णो जो पाहाणो स सिला, लेल्लु लेट्ठुओ, सरक्खो नाम पंसू भण्णइ, तेण आरण्णपंसुणा अणुगतं ससरक्खं भण्णइ, ससरक्खं वा वत्थं पुढविकायं विराहइत्ति-काऊण सहत्थेण, ‘से’त्ति निहेसे पुव्वभणिए भिक्खू वा भिक्खुणी वा, हत्थो पायो अंगुली य तिण्णिवि कंठाणि, सलागा घडि-याओ तंवाईणं कट्ठं पसिद्धमेव कलिचं कारसोहिसादीणं खंडं, सलागाहत्थओ बहुयरिआयो अहवा सलागातो घडिल्लियाओ तासिं सलागाणं संघाओ सलागाहत्थो भण्णति, एतेहिं पुढविकाइयाणं ण आलिहेज्जा, नकारो पंडिसेहे वट्ठइ, किं पंडिसेहयइ?, हत्थादीहिं पुढवीए आलिहणादीणि, आलिहणं नाम ईसि, विलिहणं विविहेहिं पगारेहिं लिहणं, घट्टणं बहणं, भिदणं दुदा वा तिहा वा करणंति, एवं ताव संयतो आलिहणादी ण करेज्जा, जहा सयं न करेज्जा तहा अण्णेणवि णालिहावेज्जा जाव न पृथ्वीकायः ॥१५४॥
	*** अत्र ‘जयणायाः’ स्वरूपम् दर्शयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ॥३२- ५९॥ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ४ अ० ॥१५६॥ जो अयपिंढाणुगयो फरिसगेज्जो सो आयपिंढो भण्णइ, इंग्गळो नाम जालारहिओ, मुम्मुरो नाम जो छाराणुगओ अग्गी सो मुम्मुरो, अच्ची नाम आगासाणुगओ परिच्छिण्णा अग्गिसिहा, अलायं नाम उम्मुआहियं पंज(पज्ज)लियं, जाला पसिद्धा चेव, इंधणरहिओ सुद्धागणी उक्काविज्जुगादि, एतारिसं अगणिककायं ण उंजेज्जा, उंजणं णाम अवमंतुअणं, घट्टणं परोप्परं उम्मुगाणि घट्टयति, अण्णेण वा तारिसेण दव्वजाएण घट्टयति, उज्जलणं नाम वीयणमाईहिं जालाकरणमुज्जालणं निव्वावणं नाम विज्जावणं, एवं ताव सयं णो उंजणाईणि करेज्जा, जहा य सयं न करेज्जा तहा अन्नं न उंजावेज्जा, जहा न उंजावेज्जा तहा अण्णं उंजंत वा जाव निव्वावेंतं वा ण समणुजाणेज्जा जावज्जीवाए तिविहं तिविहेण मणसा वयसा कायसा तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥ ● से भिक्खू वा भिक्खुणी वा संजयविरयपडिहयपच्चक्खाय जाव परिसागओ वा इमं परिहरेज्जा ‘से सीएण वा विधुव- ण्ण वा’ (१३-१५४) ‘से’त्ति निहेसे वट्ठइ, जो वाउकाओ हेट्ठा भणिओ तस्स निहेसे, सीतं चासरं भण्णइ, विहुवणं वीयनं णाम, तालियंटो नाम लोगपसिद्धो, पत्तं नाम पोमिणिपत्तादी, साहा रुक्खस्स डालं, साहाभंगओ तस्सेव एगदेसो, पेहुणं मोरपिच्छगं वा अण्णं वा किंचि तारिसं पिच्छं, पिहुणहत्थओ मोरिगकुच्चओ, गिद्धपिच्छाणि वा एगओ बद्धाणि, चेलं नाम सगलं वत्थं, चेलकण्णो तस्सेव एगदेसो, हत्थमुहादीणि लोगपासिद्धाणि, एतेहिं कारणभूएहिं अप्पणो वा कायं बाहिरं वावि पोग्गलं- उसिणोदगं वा सयं ताव न फुमेज्जा न वीएज्जा, जह सयं तहा अण्णं ण फुमावेज्जा न वीयावेज्जा, अण्णं फुमंतं वा वीयंतं वा न समणुजाणेज्जा जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं मणसा वयसा कायसा ज्ञाय वोसिरामि ॥ तेजःकायः वायुकायः ॥१५६॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
	अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथाः [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ३२- ५९ दीप अनुक्रम [३२-७५]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ४ अ० ॥१५७॥ तेजःकायः वायुकायः ॥१५७॥ ● से भिक्खु वा भिक्खुणी वा संजयविश्यपडिहयपच्चक्खाय जाव परिसागओ वा इमं परिहेज्जा ‘से बीएसु वा बीय- पइट्टेसु वा’ (स्र.१४-१५४) ‘से’ति निदेसे वड्डइ, जो सो वणस्सइकाओ हेट्ठा भणिओ तस्स निदेसो, बीयं नाम सालिवीहादीणं भण्णइ, पइट्टियं नाम आहारसेज्जाफलमादीणि बीयाणं उवरिट्ठियाणिच्चे, रूढं णाम बीयाणि चेव फुडियाणि, ण ताव अकुरो निप्फज्जइ, रूढपइट्टियं नाम जं तेसिं उवरिं आहारसेज्जासणफलमपीढगादि ठवियं तं रूढपतिट्टियं भण्णइ, जायं नाम एताणि चेव थंबीभूयाणि, जातपतिट्टियं नाम तेसु चेव थंबेसु जं किंचि आहारसेज्जासणफलमपीढगाई ठवियंति, हरिताणि नाम व- चादीणि, हरियपतिट्टियं नाम जं किंचि आहारसेज्जासणफलमपीढगादि ठवितं, छिण्णग्गहणेणं वाउणा भग्गस्स अण्णेण वा परसु- माइणा छिण्णस्स अद्भावे वड्डमाणस्स अपरिणयस्स गहणं कयमिति, छिण्णपइट्टियं नाम तंमि चेव अपरिणए किंचि आहारसे- ज्जासणफलमपीढगादी ठवितं, सचित्तकोलपडिणिस्सियसद्धो दोसु वड्डइ, सचित्तसद्दे य कोलसद्दे य, सचित्तपडिणिस्सिया- णि दारुयाणि सचित्तकोलपडिनिस्सिताणि, तत्थ सचित्तगहणेण अंडगउडेहिंगादीहिं अणुगताणि जाणि दारुगादीणि सचित्त- णिस्सियाणि, कोलपडिनिस्सियाणि नाम कोलो घुणो भण्णति, सो कोलो जेसु दारुगेसु अणुगओ ताणि कोलपडिनिस्सियाणि, तेसु सचित्तेसु कोलपडिनिस्सितेसु णो सयं गच्छेज्जा जाव न तुवट्टेज्जा, तत्थ गमणं आगमणं वा चंक्रमणं भण्णइ, चिट्ठणं नाम तेसिं उवरिं ठियस्स अच्छणं, निसीयणं उवट्ठियस्स जं आवेसणं, तुयट्ठणं निवज्जणं, जहा य सयं गमणादीणि न करेज्जा तथा अन्नं न गच्छावेज्जा जाव न तुयट्ठावेज्जा तथा अन्नमवि गच्छंतं वा जाव तुयट्ठंतं वा न समणुजाणेज्जा जावज्जीवाए जाव वोसिरामि ॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [४], उद्देशक [-], मूलं [१-१५] / गाथा: [३२-५९/४७-७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२१६-२३३], भाष्यं [५-६०]
प्रत सूत्रांक [१-१५] गाथा ३२- ५९ दीप अनुक्रम [३२-७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ४ अ० ॥१५८॥ ‘से भिक्षू वा भिक्षुणी वा संजयविरयपाडिहयपच्चखाय जाव परिसागओ वा’ ‘से कीडं वा पयंगं वा’ (सू.१५-१५५) ‘से’ति निहेसे वट्टइ, जो सो तसकायो हेट्टा भणिओ तस्स निहेसे, कीडपयंगा कुंथुपिपील्लियाओ य पुव्वभणिया, तेसि अन्नतरो कीडगाईणं जइ होज्जा हत्थंमि वा जाव संथारगंमि वा, तत्थ पादो वाह ऊरुतो पसिद्धाओ, सेज्जा सच्चंगिया, संथारो अट्ठा- इज्जा हत्था आभ्यतो हत्थं सच्चउरंगुलं विच्छिण्णो, अण्णतरग्गहणेण बहुविहस्स तहप्पगारस्स संजतपायोग्गस्स उवगरणस्स गहणं कयंति, एतेहिं कत्थादीहिं पुव्वभणियाणं कीडाण अण्णतरो पाणो उवच्छिएज्जा, तओ तं उवच्छीणं जाणिऊणं संजयामेवीत्त जहा तस्स पीडा ण भवति तहा धेचूर्णं एगंते नाम जत्थ तस्स उवघाओ न भवइ तत्थ एगंते अवणेज्जा, जहा णो णं संघात- मावज्जइ, संघातं नाम परोप्परतो गत्ताणं संपिडणं, एग्गहणेण गहणं तज्जाईयाणंतिकाऊणं सेसावि परितावणकिलावणादिभेदा गहिया, आवज्जणा नाम नो तहा गिण्हेज्जा जहा संघातणाइ दोसो संभवति, एसा पुढविमादीणि पडुच्च पाणतिवातवेरमण- अणुपालणत्थं जयणा भणिया, चउत्थो छज्जीवणियाए अघिगारो गओ ॥ इयाणि उवएसोत्ति पंचमो अहिगारो भण्णइ, तं ‘अजयं चरमाणो उ, पाणभूयाइं हिंसओ । बंधइ पावतं कम्मं, तं से होइ कडुयं फलं (३२-१५६) अजयं नाम अणुवएसेणं, चरमाणो नाम गच्छमाणो, द्रुतं गच्छमाणो संतो वग्घा- इयं करेज्जा, कदाइ सरौरविराहणावि होज्जा, पाणाणि चेव भूयाणि, अहवा पाणगहणेण तसाणं गहणं, सत्ताणं विविहेहिं पगारेहिं हिंसमाणो बंधए पावगं कम्मं, बंधइ नाम एक्केकं जीवप्पदेसं अट्ठहिं कम्मपगडीहिं आवेदियपरिवेदियं करेति, पावगं नाम असुभकम्मोवचयो धणचिकणो भण्णइ, परतित्थियाण य गच्छमाणानं चिट्ठमाणानं य कम्मबंधो न भवति, अतो तप्पडि- त्रसकायः यतनो- पदेशः ॥१५८॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२२०-२३४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥६०-१५९॥ दीप अनुक्रम [७६-१७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ५ अ० ॥१६५॥ एते ताव मूलगुणा भणिया, इदाणि उत्तरगुणा भण्णंति, एतेणाभिसंबंधेणागतस्स पंचमज्झयणस्स चत्तारि अणु- ओगदारा भाणियव्वा, जहा आवस्सए, नवरं इहं नामनिष्फण्णो भण्णइ--नामं ठवणापिंडो दव्वपिंडो य भावपिंडो य' गाथा, णामनिष्फण्णे पिंडानिज्जुत्ती भाणियव्वा, सा य सव्वावि नवहिं कोडीहिं समोयरइ, तं०-ण हणइ ण हणावेइ हणंतं नाणु- जाणइ ण पयति ण पयावेइ पयंतं नाणुजाणइ न किणइ न किणावेइ किणंतं नाणुजाणइ, एत्थ गाथा 'कोडीकरणं' गाथा (६२-१६१ भा०) एता नवकोडीओ दुहा कीरंति-उग्गमकोडी य विसुद्धिकोडा य, तत्थ उग्गमेकोडी नाम अविसोदिकोडी, तत्थ जा सा उग्गमकोडी सा छव्विहा, तं०-आहाकम्मं पढमा उग्गमकोडी, उद्देसिया पासंड समणनिग्गंथाण य कम्मं समोयरइ विति- या उग्गमकोडी, पूती कम्मं भत्तपाणपूतियं ततिया, भीसजाए घरमीसपासंडाणं चउत्था, वादरपाहुडियाए पंचमी, अज्झोयरए छट्ठा, एसा छव्विहा अविसोधिकोडी, सेसा विसोधिकोडी, तत्थ जा सा अविसोधिकोडी सा न हणइ न हणावेइ हणंतं नाणु- जाणइ न पयति न पयावेइ पयंतं नाणुजाणइ न पयति एतेसु समोयरइ, 'नव चैचट्ठारस' गाथा (२६।५-१६१) नव कोडीओ दोहिं रागदोसेहिं गुणिया अट्ठारस भवंति, ताओ चेव नव तिहिं मिच्छत्ताण्णाणअविरतीहिं गुणियाओ सत्तावीसं भवंति, सत्तावीसा दोहिं रागदोसेहिं गुणियाओ चउप्पण्णा भवंति, ताओ चेव नव दसविधेण धम्मेण गुणियाओ विसुद्धाओ नउइं भवंति, सा नउइं तिहिं नाणदंसणचरित्तेहिं गुणिया दो सत्तरा भवंति, गओ नामनिष्फण्णो निक्खेवो, सुत्ताणुगमे सुत्तधुच्चारेयव्वं, अक्खलियं अमिलियं अविच्चामेलियं जहा अणुयोगदारे, तं च सुत्तं इमं— संपत्ते भिक्खुकालंमि असंभंतो अमुच्छिओ। इमेणं कम्मजोगेण, भत्तपाणं गवेसए (६०-१६३) 'आप्लु व्याप्तौ' पिण्ड- स्वरूपं ॥१६५॥ उद्देशक-१
	अध्ययनं -५- 'पिंडैषणा'आरभ्यते

[illegible]

“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+|भाष्य|+चूर्णिः)

अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथाः [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]

मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः

श्रीदश-
वैकालिक
चूर्णी.
५ अ०
॥१६७॥

धातुः, अस्म धातोः अच् प्रत्ययः अनुबन्धलोपः परगमने क्रमः, क्रमो नाम परिवाडो भण्णइ, ‘युजिर् जोगे’ धातुः, अस्य धातोः अकर्त्तरि च कारके संज्ञायां (पा. ३-३-१९) घञ् प्रत्ययः अनुबन्धलोपः ‘चजोः कुर्विष्यतो’ रिति (पा. ७-३-५२) कुत्वेन जकारस्य गकारः, ‘पुगंतलघूपधस्य चे’ति (पा. ६-३-८६) गुणः योगः, तस्स कमस्स जोगो कमजोगो, भक्तपाणाणि लोग-पसिद्धाणि, ‘इषु इच्छायां’ धातुः, ‘हेतुमति चे’ति (पा. ३-३-२६) णिच् प्रत्ययः अनुबन्धलोपः, ‘पुगन्तलघूपधस्य चे’ ति (पा. ६-३-८६) गुणः एष ‘सनाद्यन्ता धातव’ इति (पा. ३-१-३२) धातुसंज्ञायां ल्युट् ‘युवोरनाका’विति (पा. ७-२-२) अनः एषण स्त्रीविवक्षायां ‘अजाद्यत्तष्टाप् (पा. ४-१-४) एषणा, गोः एषणा (पा. ३-३-१७) अवङ् स्फोटायनस्य (पा. ६-१-१२३) गोशब्दस्य अवङ्देशः गवेषणा, गवेषणा मग्गणा भण्णइ, सा य भिक्षा कथं गवेषियव्वत्ति ?, भण्णति- ‘से गामे वा नगरे वा, गोघरमग्गओ सुणी । चरे मंदमणुव्विग्गो, अट्ठक्खित्तेण चेषसा ॥ (६१-१६३) ‘से’त्ति निहेसे, किं निहिसत्ति?, जो सो संजयधिरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मो भिक्षू तस्स निहेसोत्ति, गामनगरमग्गहणेण सेसावि खेडकव्वडमडंबनिग-मादिभेदा गहिया, गोघरो नाम भ्रमणं चर गत्यर्थः धातुः, अस्य धातोः ‘पुंसि संज्ञाया’मिति (पा. ३-३-१२८) घप्रत्यये वर्त्तमाने ‘गोचरसंचरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्चे’ति (पा. ३-३-११९) घप्रत्ययान्तः निपात्यते, गावश्चरंति अस्मिन् देशे गोचरः, जहा गावीओ सहादिसु विसएसु असज्जमाणीओ आहारमाहारंति, दिट्ठंतो वच्छओ वाणिगिणीए अलंकियविभूसियाए चारुवे-साएवि गोभत्तादी आहारं दलयंतीति तंमि गोभत्तादिम्म उवउत्तो ण ताए इत्थियाए रूवेण वा तेसु वा आभरणसंहेसु ण वा मंधफासेसु मुच्छिओ, एवं साधुणावि विसएसु असज्जमाणेण समुदाणे उग्गमउप्पायणासुद्धे निवेसियबुद्धिणा अरत्तदुट्ठेण भिक्षा

भक्तपानै-
षण

॥१६७॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ६०- १५९ दीप अनुक्रम [७६- १७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णिः ५ अ० ॥१७१॥ विसोत्तिया दव्वविसोत्तिया भावविसोत्तिया, नामठवणाओ गताओ, दव्वविसोत्तिया जहा सारणिपाणिं कयवराइणा आगमसोते निरुद्धे अण्णतो गच्छइ, तओ तं सस्सं सुक्खइ, सा दव्वविसोत्तिया, तासिं वेसाणं भावविप्पेक्खियं णड्डुहसियादी पासंतस्स णाण-दंसणचरित्ताणं आगमो निरुंभति, तओ संजमसस्सं सुक्खइ, एसा भावविसोत्तिया। सीसो आह-को तत्थ दोसो?, आयरिओ भणइ, अणाययणे चरंतस्स, संसग्गीय अभिक्खणं। होज्ज वयाणं पीला, सामन्नांमि य संसओ। (६९-१६५) तं वेससामंतं अभिक्खणं अभिक्खणं एतजंतस्स ताहिं समं संसग्गी जायति, भणियं च- “संदंसणाओ पीई पीतीओ रती रती य वीसंभो। वीसंभाओ पणओ पंचविहं वद्धए पेम्मं ॥ १ ॥” तओ तस्स वयाणं मेहुणविरमणादीणं पीडा नाम विणासो, सामणं नाम समणभावो, तंमि समणभावे संसयो भवइ, किं ताव सामणं धरेमि? उदाहु उप्पवयामिति? एवं संसयो भवइ, जइ उण्णिक्ख-मइ तो सव्ववया पीडिया भवंति, अहवि ण उण्णिक्खमइ तोवि तग्गयमाणसस्स भावाओ मेहुणं पीडियं भवइ, तग्गयमाणसो य एसणं न रक्खइ, तत्थ पाणाइवायपीडा भवति, जोएमाणो पुच्छिज्जइ-किं जोएसि?, ताहे अवलवइ, ताहे मुसावायपीडा भवति, ताओ य तित्थगरेहिं णापुण्णायाउत्तिक्राउं अदिण्णादाणपीडा भवइ, तासु य ममचं करंतस्स परिग्गहपीडा भवति। तम्हा एयं वियाणिस्ता, दोसं दोग्गइवड्डुणं। वज्जए वेससामन्तं, सुणी एगंतमस्सिए (७०-१६५) तेण य भिक्खाए पवि-ट्टेण इमाणि परिहरियव्वाणि ‘साणं सूविंयं गाविं, दित्तं गोणं हयं गयं। संडिभं कलहं जुद्धं, दूरओ परिवज्जए (७१-१६५) साणो लोगपसिद्धो, सूविंया गावी पायसो आहणणीसीला भवइ, दित्तो कसाओ मत्तो वा, आह च- “दित्तो दप्पिओ” ते य इमे दित्ता परिहरणिज्जा, तं-गोणो हयो गयोत्ति, गोणो बलिवहो, हयो-आसो, गयो-हत्थी, सो दित्तो परिहरणिज्जो, संडिभं नाम शून्यादि परिहारः ॥१७१॥

[illegible]

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ६०- १५९ दीप अनुक्रम [७६- १७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक 'चूर्णी' ५ अ० १८५ गहणेण एयाणि गहिघाणि, आयरिओ भणइ- एताणि सत्थोवहताणिवि अन्नंमि समुदाने फासुए लब्भमाणे ण गिण्हियव्वाणि, किं कारणं- ‘अप्पे सिआ०’ ॥ १३३ ॥ सिलोगो कंटो चेव, भोयणं भाणियव्वं । इदाणि पाणगं भन्नाइ- ‘तहेवुच्चावयं पाण०’ ॥ १३४ ॥ सिलोगो, ‘तहेव’ ति जहा भोयणं अकप्पियं पडिसिद्धं कप्पियमणुण्णायं तहा पाणगमवि भण्णइ, उच्चं च अवचं च उच्चावचं, उच्चं नाम जं वण्णगंधरसफासेहि उववेयं, तं च मुहियादिपाणमादी, चउत्तरसियं वावि जं वण्णओ सोभणं गंधओ अपूयं रसओ परिकप्परसं फासओ अपिच्छिलं तं उच्चं भण्णइ. तं कप्पइ, अवयं णाम जमेतेहि वण्णमंधरसफासेहि विहीणं, तं अवयं भन्नति, एवं ता वसतीए धेप्पति, अहवा उच्चावयं णाम पाणापगारं भन्नाइ, वारयो नाम घडओ, रकारलकाराणमेग- त्तमितिकाउं वारओ वालओ भन्नाइ, सो य गुलफाणियादिभायणं तस्स धोवणं वारधोवणं । किंच-संसेइमं नाम पाणियं अह- हेऊण तस्सोवरि पिट्टे संसेइज्जंति, एवमादि तं संसेदियं भन्नति, तमवि अन्नंमि लब्भमाणे ण पडिगाहेज्जा, चाउलोदगादीण धोवं विवज्जए । किंच-‘जं जाणेज्ज चिरोधायं, मईए दंसणेण वा । सोच्चा निस्संक्रियं सुद्धं, पडिगाहेज्ज संजए ॥१३५॥ तं च पाणयं चिराधोयं इमेहि कारणेहि जाणेज्जा, तं- मतीए व जाणेज्जा, पच्चक्खं पासित्ता व जाणेज्जा, मतीए नाम जं कार- णेहि जाणइ, तत्थ केई इमाणि तिण्णि कारणाणि भणंति, जहा जाव पुप्फोदया विरायंति ताव मिस्सं, अण्णे पुण भणंति- जाव फूसियाणि सुक्कंति, अण्णे भणंति- जाव तंदुला सिज्जंति, एवइएण कालेण अचित्तं भवइ, तिण्णिवि एते अणाएसा, कहं ?, पुप्फोदया कयायि चिरमच्छेज्जा, फूसियाणि वरिसारत्ते चिरेण सुक्कंति, उण्हकाले लहु, कलमसालितंदुलावि लहुं सिज्जंति, एतेण कारणेण, तस्सा जदा पडिपुच्छियं तेण य से दायेण कहियं ताहे सोऊण जं निस्संक्रियं भवति, अपुच्छिए वण्णगंधरस- पानक- विधिः १८५

[illegible]

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ६०-१५९ दीप अनुक्रम [७६-१७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥१८९॥ ताहे जइ किंचि अजाणयाए ण सम्ममालोइयं पुरेकम्मपच्छाकम्मादि तस्स पुण पडिकमेज्जा, तत्थ य पडिककमाणेण वोसद्ध- देहेन काउस्सग्गे चित्तेज्जा ‘अहो जिणेहिं असावज्जा०’ ॥ १५१ ॥ सिलोगो, ताहे- ‘णमुक्कारेण०’ ॥ १५२ ॥ सिलोगो “नमोक्कारेण” “नमो अरिहंताणं” ति एतेण नमोक्कारेण काउस्सग्गं उस्सारेत्ता जिणसंथवो ‘लोगस्स उज्जो- अगरे’ भन्नेइ, तं कड्डिऊण जइ पुच्चं ण पट्टवियं ताहे पट्टविऊण सज्झायं करेइ, जाव साधुणो अब्बे आगच्छंति, जो पुण खमणो अत्तलाभिओ वा सो मुहुत्तमेत्तं वा सज्झो (वीसत्थो) इमं चित्तेज्जा-‘वीसमंतो इमं’ ॥ १५३ ॥ सिलोगो, साहूसु य आगएसु आयरियं आमंतेहि (ति), जेण परिग्गहणं सोहणं, अह न गहियं ताहे भणइ-खमासमणो! देह इओ जस्स दायव्वं इच्छाकारेण, ताहे जइ तेहिं दिन्नं तो सोहणं, अह भणांति-तुमं चेव देहि, ताहे ‘साहवो तो चिअत्तेण०’ ॥ १५४ ॥ सिलोगो, चिअत्तं णाम अन्नपाणे अप- डिवद्धो सव्वभावेण, जहावत्थुं भणइ-इच्छाकारेण अणुग्गहं करेइ, न रायवेट्ठिमिह मण्णमाणो निमंतेति, जइ कोइ इच्छइ सोहणं, तेहिं सद्धिं भुंजिज्जा । ‘अह कोई न इच्छिज्जा०’ ॥ १५५ ॥ सिलोगो, अह पुण तेसिं साहूणं कोईवि न इच्छेज्जा ताहे एक्क- ओ उ भुंजेज्जा, किंच- तेण साहूणा आलोय भायणे समुहिसियव्वं, जयं नाम तदुवउत्तेण, अपरिसाडियं दुविहं-लंघणाओ (हत्थाओ) मुहाओ य, उवायं चेव जतं जं न परिसाडइ, तं पुण भोयणं-‘तित्तगं व’ ॥ १५६ ॥ सिलोगो, तत्थ तित्तगं एल- गवालुगाइ, कडुमस्सगादि, जहा पभूएण अस्सगेण संजुत्तं दोद्धगं, कसायं निप्फावादी, आंवलं तक्कं विलादि, मधुरं जलखीरादि, लवणं पसिद्धं चेव, एताणि कस्सइ हितइच्छिताणि जहा पुव्वमुसिणभावियसरीरस्स सीताहितत्तणे वा उसिणं मधुरमेव पडिहाइ, एवं सव्वत्थ जाणियव्वं, तम्हा साहूणा सव्वभावाणुकूलेसु रागो ण कायव्वो, पडिकूलेसु य दोसो, ‘एयलद्धमन्नत्थपउत्त’ -मिति उद्देशः २ ॥१८९॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ६०- १५९ दीप अनुक्रम [७६- १७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रदिश- वैकालिक चूर्णी. ५ अ० ॥१९०॥ अण्णो-मोक्खो तण्णिमित्तं आहारेय्वन्ति, तम्हा साहुणा सम्भावानुकूलेसु २ साधुत्ति (न) २ जिग्भिदियं उवालभइ, जहा जमेतं मया लद्धं एतं सरीरसगडस्स अक्खोवंगसरिसन्ति काऊण पउत्तं, न वण्णरूवबलाइनिमित्तंति, तं मधुघयमिव भुजियव्वं साहुणा, जहा मधुघयाणि भुजंति तथा तं असोहणमवि भुजियव्वं, अहवा जहा मधुघयं हणुमाओ हणुगं असंचारेहिं भुजितव्वं । ‘अरस्सं विरस्सं’ ॥१५७॥ सिलोगो, अरस्सं नाम असंपत्तरस्सं, हिंसुलवणादीहिं संभारेहिं रहियं, विरस्सं नाम सभावओ विगतस्सं विरस्सं भण्णइ, तं च पुराणकण्हवन्नियसीतोदणादि ‘सुच्चियं’ तं पुण मंधुकुमासा ओदणो वा होज्जा, मंधू नाम बोरचुब्बजवचुच्चादि, कुम्मासा जहा गोळ्ळविसए जवमया करेति, तेन तप्पमारं मोयणं । ‘उप्पण्णं णाइ’ ॥ १५८ ॥ सिलोगो, उप्पण्णं नाम जं अप्पं वा बहुं वा फासुगं लद्धं तं णातिहीलेज्जा, णमारो पडिसेहे वट्टइ, अतिसदो अतिककमे, हीलणाणिदणा, तत्थ साहुणा इमं आलंबणं कायव्वं, जहा मम संथवपरिधारिणो अणुवकारिस्स अप्पमवि परो देति तं बहु मण्णि-यव्वं, जं विरसमवि मम लोगो अणुवकारिस्स देति तं बहु मन्नियव्वं, अहवा इमं आलंबणं कायव्वं-‘मुहालद्धं मुहाजीवी’ सिलोगद्धं, मुहालद्धं नाम जं कौंटलवेटलादीणि मोचूणमितरहा लद्धं तं मुहालद्धं, मुहाजीवी नाम जं जातिकुलादीहिं आजीवण-विसेसेहिं परं न जीवति तेण मुहालद्धं आहाकम्मार्हहिं दोसेहिं वज्जियं भोत्तव्वंति । किंच-‘बुल्लहाउ मुहादार्ह’ ॥ १५९ ॥ सिलोगो, सोम! मुहादायि एरिसो, जहा एगो परिव्वायगो, सो एगं भागवत्तं उवढिओ-अहं तव गिहे वासारत्तं करेमि, मम उदंतं वहहि, तेण भणिओ-जइ मम उदंतं न वहसि, एवं होउत्ति, से सो भागवओ सेज्जभत्तपाणाइणा उदंतं वहइ, अण्णदा य तस्स घो-डओ चोरेहिं हिओ, अतिप्पभायंतिकाऊण जालीए बढो, सो य परिव्वायओ तलाए ण्हायओ गओ, तेण सो घोडओ दिट्ठो, उद्देशः २ ॥१९०॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [६०-१५९/७६-१७५], निर्युक्तिः [२३५-२४४/२३४-२४४], भाष्यं [६१-६२]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ६०-१५९ दीप अनुक्रम [७६-१७५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥१९१॥ आगतुं भणइ-मम पाणियतडे पोत्ती विस्सरिया, गोहो विसज्जओ, तेण घोडगो दिट्ठो, आगन्तुं कहियं. तेण भागवएण णायं-जहा परिच्चायएण उवाएण कहियं, तेण परिच्चायओ भणइ- जहा जाहि, णाहं तव निव्विट्ठं उदंतं वहामि, निव्विट्ठं अप्पफलं भवइ, एरिसो मुहादायी दुल्लभो । महाजीविमि उदाहरणं-एगो राया धम्मं परिकखति, को धम्मो ?, जो अनिव्विट्ठं भुंजइ, तो तं परिकखेमिच्चिकाउं मणुस्सा संदिट्ठा- राया मोदए देति, तत्थ बहवे कप्पाडियादयो आगया, पुच्छिज्जंति-तुम्हे (केण) भुंजइ ?, अण्णो भणति-अहं भुहेण भुंजामि, अण्णो-अहं पाएणं, अन्नो-अहं हत्थेहिं, अण्णो-अहं लोमाणुग्गहेण, सव्वे ते रन्नो कहिज्जंति, चेन्नओ आगओ, सो पुच्छिओ- तुमं केण भुंजाहि ?, भणइ- ‘अहं मुहा भुंजामि,’ रण्णो कहियं, ताहे रण्णा चेन्नओ पुच्छिओ भणइ- जो जेण उल्लग्गइ सो तेण भुंजइ, कहं ?, जेण जे ताव भवंतं आउहेहिं आराहेति ते आउधेहिं भुंजंति, लेहगाहिणो करेहिं, दूता पाएहिं, गंधव्विया गीएण, सयमागधादिणो वायाए, कुत्तिथियावि मुहमंमलादीहिं, अहं मुहाए भुंजामिति, ताहे सो राया एस धम्मोत्तिकाऊणं आयरियसगासे धम्मं सोऊण पव्वइओ, एरिसो मुहाजीवी भणइ, जो य मुहादायी जो य मुहाजीवी एते दोऽवि सिज्जंति, जाव य ण परिणिच्चायंति ता देवलोगेसु य पच्चायार्यंति, वेमि नाम तीर्थकरस्य सुधर्मस्वामिनो(वो)पदेशाद् ब्रवीमि, न स्वाभिप्रायेणेति ॥ ॥ पिण्डैषणाध्ययनप्रथमोद्देशकचूर्णी समाप्ता ॥ पिंडैषणाध्ययनस्य पढमउद्देशे ण जं भणियं तमिदार्णि भण्णति, तंजहा— ‘पडिग्गहं संलिहित्तानं’ ॥ १९० ॥ सिलोगो, ‘ग्रह उपादाने’ धातुः, अस्य धातोः प्रतिपूर्वस्य ‘ऋदोरपि’ (पा. ३-३-५७) त्यनुवर्त्तमाने ‘ग्रहवृद्धनिश्चिगमश्चे’ति (पा. ३-३-५८) अप्रत्ययः, पकारः ‘अनुदात्तौ सुप्पिता’ (पा. ३-१-४) विति विशेषणार्थः, परगमनं प्रातिग्रहं, परिगिज्जति उद्देश्य २ ॥१९१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥१९२॥ जम्मि भायणे असणादिदा सो पडिग्गहो, ‘लिह आस्वादने’ धातुः, अस्य धातोः संपूर्वस्य ‘अलंखल्वोः’ प्रतिषेधयोः प्राक्त्ववेत्य- (पा. ३-४-१८) नुवर्त्तमाने ‘समानकर्तृकयोः पूर्वकाल’ (पा. ३-४-२१) इति क्त्वा प्रत्ययः, ककारः ‘किञ्छति चे’ति (पा. १-१-५) गुणवृद्धिप्रतिषेधार्थः, ‘हो ढे’ इति (पा. ८-२-३१) हकारस्य ढकारः ‘क्षपस्तथो धोऽधः’ इति (पा. ८-२-४०) तकारस्य धकारः, ‘ह्दुना ह्दु’रिति (पा. ८-४-४१) ह्दुत्वेन धकारस्य ढकारः, ‘ढो ढे लोपः’ इति (पा. ८-३-१३) ढकारस्य लोपः, ‘ढलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽण’ इति (पा. ६-३-१११) दीर्घत्वं, समेकीभावेन लीढत्वा इति ‘प्रादय’ इति (पा. १-४-५८) समासः ‘गतिकारकोपपदानां कृद्धिः समासवचन’मिति (पा. ६-२-१३९) ‘सुपो धातुप्रातिपदिकयो’रिति (पा. २-४-७१) सुबलुक्, अकृतव्यूहाः पाणिनीयाः कार्यं दृष्ट्वा प्रतिनिवर्त्तत इति निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः, संलिह इति स्थिते ‘समासे नञ्पूर्वे क्तवो ल्यापि’ति (पा. ७-१-३७) क्त्वाप्रत्ययस्य ल्यप् आदेशः, पकारः पूर्ववत्, लकारः लिहतिप्रत्ययात्पूर्वं उदात्तार्थः, परगमनं, संलिह्य, तं पडिग्गहं संलिह्तिता नाम पदेसणीए भत्तावयवाणमसेसाणं वयणे पक्खेवो, ‘लिप उपदेहे’ धातुः, अस्य धातोः भावे (पा. ३-३-१८) घञ्प्रत्ययः अनुबन्धलोपः पुगंतलघूपधगुणपरगमनानि, लिप्यते तस्य लेपः, लेवमायाए नाम जाव लेपदेशाव- सेसं ताव संलिहेज्जा, यम उपरमे धातुः, अस्य धातोः सम्पूर्वस्य ‘क्तवत् निष्ठे’ति (पा. १-१-२६) क्तप्रत्ययः, ककारः ‘किञ्छति चे’ति (पा. १-१-५) विशेषणार्थः, ‘अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि किञ्छती’ति (पा. ६-४-३७) अनुनासिकान्तस्य झलि किञ्छति परतः अनुनासिकस्य लोपो भवति, परगमनं, संजओ नाम अप्पमत्तो, दुष्टो गन्धः दुर्गन्धः अशो- भनः अप्रीतिकरः अमनोज्ञो, दुर्गन्धं च सुगन्धं वा, सर्वशब्दो अशेषवाची, सर्वं प्रातिपदिकं, नपुंसकविवक्षायां सु ‘स्वमोर्नपुंसका- उद्देशः २ ॥१९२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०- २०९॥ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ५ अ० ॥१९३॥ दि'ति (पा. ७-१-२३) वर्त्तमाने 'अतोऽम्' (पा. ७-१-२४), अतः अकारान्तात्प्रातिपदिकात् अम्, अतो गुणः, परपूर्वत्वं, सर्वं, भुज पालनाभ्यवहारयोः धातुः, अस्य धातोः 'वर्त्तमाने लटि'ति (पा. ३-२-१२३) लट् प्रत्ययः, टकारलकारयोरनुबन्धलोपः, लस्य तिपादयो भवन्तीति सर्वतिप्यतिप्रसंगे प्राप्ते 'अनुदात्तङित आत्मनेपदं' (पा. १-३-१२) भवति, किं पुनरात्मनेपदं भवति?, तद्वानावात्मने (पा. १-४-१००) तत्र सर्वात्मनेपदप्रसंगे प्राप्ते तिङ्स्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमानि (पा. १-४-१०१) इ प्रथमपुरुषस्यैकस्मिन्नर्थे एकवचनमुपादीयते, तं तकारादकारमपकृष्य 'टित आत्मनेपदानां टेरेत्व'मिति (पा. ३-४-७९) अकारस्य एकारः 'कर्त्तरि शप्' ति (पा. ३-१-६८) शप् प्राप्ते 'रुधादिभ्यः शम्' (पा. ३-१-७८) मकारः 'मिदचोऽन्त्यात्परः' (पा. १-१-४७) इति विशेषणार्थः, अकार उच्चारणार्थः, लस्य तिपादयो भवन्तीति प्रातिपदिकप्रसंगे प्राप्ते शेषात् कर्त्तरि परस्मैपदं (पा. १-३-७८) भवति, किं पुनः परस्मैपदं भवति?, प्रातिपदिकसत्कः इत्येवमादि. तत्र प्रथमपुरुषस्य एकस्मिन्नर्थे एकवचनमुपादीयते, तिप्, पकारलोपः इकारः 'नित्यं ङित' (पा. ३-४-९९) इत्येति (पा. ३-४-१००) इकारलोपः 'कर्त्तरि शप्' ति (पा. ३-१-६८) शप् प्राप्ते 'तुदादिभ्यः शः' (पा. ३-१-७७) प्रत्ययः, शकारादकारमपकृष्य शकारः सार्वधात्वर्थः यासुद् परस्मैपदेष्टुदात्तो ङिच्चे'ति (पा. ३-४-१०३) यासुद्, टकारस्य 'आद्यन्तौ टकितौ' इति (पा. १-१-४६) विशेषणार्थः, उकार उच्चारणार्थः, 'लिङः सलोपोऽनन्त्यस्यै' वेति सकारलोपः, 'अतो या इयः' अतः अकारान्तादङ्गादुत्तरस्य या इत्येतस्य इय आदेशः, 'लोपो व्योर्बली'ति (पा. ६-१-१६) यकारलोपः 'आद् गुण' इति (पा. ६-१-८१) गुणः भवत्येकश्च पूर्वपरयोः, परगमनं, उत्सृजेत्. नकारादकारस्य उकारेण सह आद् गुण (पा. ६-१-८७) नोत्सृजेत्-न छड्ण, ण सुम्भि सुम्भि भोच्चा उद्देशः २ ॥१९३॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ५ अ० ॥१९४॥ दुर्लभ परिठवेज्जा, एगग्गहणे गहणं तज्जातीयाणमितिकाउं दुग्गंधगहणेण दुवण्णदुरसादीवि भेदा गहिया, सुगन्धगहणेणावि पसत्थवण्णरसाइभेदा गहिया । सीसो आह—जइ एवं सिलोगपच्छद्वं पुर्व्व पढिज्जइ पच्छा पडिग्गहं संलिहत्ताणं, तो अत्थो सुहगेज्जयरो भवति, आयरिओ भणइ--सुहमुहोच्चारणत्थं, । वाचत्ता य सुत्तवन्धा, पसत्थं च पडिग्गहगहणं उद्देसगस्स आदितो भण्णमाणं भवत्तिअतो एयं सुत्तं एवं पढिज्जति, तं पुण दुग्गंधं वा सुगन्धं वा कत्थं भत्तं होज्जा ?, ‘सेज्जा निसीहियाए०’ ॥ १६१ ॥ सिलोगो, सेज्जा-उवस्सतादि मट्ठकोट्टयादि, तहा निसीहिया जत्थ सज्जायं करंति, अहवा सेज्जाए वा निसीयाहिएत्ति, तासु सेज्जानिनीहियासु भुत्तो होज्जा गोयरग्गसमावण्णो बालबुद्धुखवगादि मट्ठकोट्टयादिसु समुद्दिट्ठो होज्जा, ततो सो अयावयट्ठं नाम ण यावयट्ठं, उट्ठं(ऊणं)ति वुत्तं भवति, ‘जइ तेण न संथरे’ सिलोगो, सो पुण खमओ वा होज्जा दोसीणो वा गंधितो, एए वा बालकेसु विधरेसु एतेहिं गंधियं, तं च अयावयट्ठं ‘ततो०’ ॥ १६२ ॥ पुण भत्तपाणगवेसणट्ठाए उत्तरइ, उत्तरमाणो य तेणेव विहिणा पुव्वभणिएणं जो पढमुद्देसएणं ‘संपत्ते भिक्खुवालंमि’ एत्तो आरब्भ जो विही भणिओ तेण विहिणा इमेण उत्तरेण य गवेसेज्जा, उत्तरो नाम पुव्वभणिआतो इदाणि जो विधी भणिहिहि, सो य उत्तरो इमो— ‘कालेण निक्खमे भिक्खू०’ ॥ १६३ ॥ सिलोगो, ‘कालेण’ति गामनगराइसु भिक्खावेलाए उवस्सयाओ निक्खमेज्जा, तहेव य कालेण चेव उच्चे जोतिसिए (चिओ जो तंमि) पडिक्कमेज्जा, पडिक्कमेज्जा नाम नियसेज्जा, णियं च खेत्तं पट्ठप्पति, कालो पट्ठप्पति, भायणं पट्ठप्पति, तं हिंडिउं, एत्थ अट्ठ भंगा, ‘अकालं च विवज्जेत्ता’ णाम जहा पडिलेहणवेलाए सज्जाथस्स अकालो, सज्जायवेलाए पडिलेहणाए अकालो एवमादि अकालं विवज्जित्ता ‘काले कालं समायेरे’ तं भिक्खावेलाए भिक्खं समायेरे, पडिलेहणवेलाए उद्देशः २ ॥१९४॥
	*** अत्र ‘जयणा’ वर्णयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥१९५॥ पडिलेहणं समायरे, एवमादि, भणियं च—‘जोगो जोगो जिणसासणंमि दुक्खक्खया पउज्जंतो । अण्णोऽण्णमबाहंतो असवत्तो होइ कायव्वो ॥ १ ॥’ किंच ‘अकाले चरसी०’ ॥ १६४ ॥ सिलोगो, तमकालचारिं आउरीभूतं दट्ठण अण्णो साहु भणेज्जा, लद्धा ते एयंम निवेसे भिक्खात्ति १, सो भणइ- कुओ एत्थ थंडिल्लगामे भिक्खत्ति, तेण साहुणा भणइ- तुमं अप्पणो दोसे परस्स उवरिं निवाडेहि, तुमं पमाददोसेण सज्झायलोभेण वा कालं न पच्चुवेक्खसि, अप्पाणं अइहिंढीए ओमोदरियाए किलामेसि, इमं सन्नियेसं च गरिहसि, जम्हा एते दोसा तम्हा— ‘सइ काले चरे भिक्खू० ॥ १६५ ॥ सिलोगो, सति नाम विज्जमाणे काले हिंडियव्वं, पुरिसकारो नाम जंघाबलादिसु बलं ताव हिंडियव्वं, अण्णायपिंडेसणयस्स पुरिसकारेण विणा वित्ती तु ण भवति, कयाइ पुरिस- कारे कीरमाणेऽपि भिक्खं न लभेज्जा, तत्थ इमं आलंबणं कायव्वं- ‘अलाभुत्ति न सोइज्जा’ हा न लहामित्ति, निद्धम्मो उ खरंटइ लोगे, एरिसं न भाणियव्वं न चित्तियव्वं, किन्तु ‘तवुत्ति आहियासए’ ओमोयरिया अणसणाइ बारसविहतवअब्भं- तरत्तिकाऊणं अधियासेयव्वं, कालजयणा गत्ता । इदार्णि खेत्तजयणा भणइ ‘तहेवुच्चावया पाणा० ॥ १६६ ॥ सिलोगो, ‘तहेव’त्ति जहा अकालो वज्जेयव्वो तहा इमंपि वज्जेयव्वं, उच्चावया नाम नाणापगारा, अहवा उच्चावया पसत्थजातिदेहरूपवं- ससरीरसंठाणादीहि उव्वेता, अवया नाम जे एतेहिं चेव परिहीणा, ते उच्चावया पाणा पंथे वा पंथभासे भत्तट्ठाए बलिपाहुडि- यादिसु समागया दट्ठण णो उज्जुयं गच्छेज्जा, किन्तु ‘जयमेव परक्कमे’ जयं नाम परिहरइ, अहवा नो उज्जुयं गच्छति, एत्तो संयतस्स अन्तराइयअधिकरणादयो दोसा भवति । ‘गोअरग्गपविट्ठो अ०’ ॥ १६७ ॥ ॥ सिलोगो, गोयरग्गएण भिक्खुणा णो णिसियव्वं कत्थइ चरे वा देवकुले वा सभाए वा पवाए वा एवमादि. जहा य न निसिएज्जा तहा ठिओऽपि भम्मकहावाद- उद्देशः २ ॥१९५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ५ अ० ॥१९६॥ कहा-विगगहकहादि णो ‘पञ्चधिज्जा’ नाम ण कहेज्जइ, णणत्थ एगणाएण वा एगवागणेण वा, ‘संजए’त्ति आमंतणं, खेत्त-जयणा गता। इदाणि दब्बजयणा भण्णइ—‘अग्गलं फलिहं०’ ॥१६८॥ सिलोगो, अर्गला-गोवाडादीदारेसु भवति, फलिहो नगरदुवारादिषु, दारं- दारमेव, कवाडं- बारत्तवत्तं, एताणि अग्गलादीणि ‘अवलंबिया ण चिट्ठेज्जा’ अवलंबिया नाम अवयंभि-ऊणंति बुत्तं भवति, पुणिसहो आमंतणे वट्ठइ. इमे दोसा-कयाति दुब्बद्धे पडेज्जा, पडंतस्स य संजमविराहणा आयविराहणा वा होज्जत्ति, दब्बजयणा गया। इयाणि भावजयणा भण्णइ, तं०- ‘समणं माहणं वावि०’ ॥ १६९ ॥ सिलोगो, समणा पंच, माहणा धिज्जाहया. किविणा- पिंडोलगा, वणीमगा पंच, एतेसिं पुव्वं कंचि पविट्ठं पुरओ वा पविसमाणं पासित्ता अइकमिऊण ण पविसेज्जा, ण य तेसिं दायगपडिच्छगाण चक्खुफासे चिट्ठेज्जा, किं कारणं?, इमे दोसा भवन्ति ‘वणीमगस्स वा०’ ॥ १७० ॥ सिलोगो, वणीमगगहणेण सेसावि माहणादिणो एगगहणे गहणं तज्जातीयाणमितिकाउं गहिया भवन्ति, तस्स भिक्खागस्स दायगस्स वा दोण्हं पि वा दायगपडिगाहगाणं अप्पत्तियं कदायि भवेज्जा पवयणलाघवं वा, एवमादि दोसा भवन्ति तम्हा-‘पडिसेहिए व दिस्से वा०’ ॥ १७१ ॥ सिलोगो, जाहे समणमाहणादीणं अण्णतरो पडिसेधिओ भवइ, दिण्णं वा से, सयं वा विणियत्ता भवन्ति, ताहे साहुणो भत्तपाणट्ठाए उवसंकमियव्वन्ति, सत्तपीडाधिकारोऽणुवट्ठइ- ‘उप्पलं पउमं०’ (१७२) सिलोगो, उप्पलं नीलोत्पलादि पउमं पसिद्धमेव कुमुदं- गहभुप्पलं मदगतिआ-मेत्तिया, अण्णे भणंति-धियइहो मदगतिआ भण्णइ, न केवलमेताणि जो संलुं चिऊणं देति तस्स हत्थाओ ण वेप्पइ, किं तु अण्णपि जं पुप्फं सच्चित्तं संलुं चिऊणं देइ तमवि न वेप्पइ, संलुं चिया णाम छिंदिऊण, तमेवंपगारं दित्तियं पडियाहक्खे न मे कप्पइ तारिसं’ ॥ १७४ ॥ सीसो आह- उद्देशः २ ॥१९६॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो ५ अ० ॥१९७॥ गणु एस अत्थो पुंवि चेष भणिओ जहा ‘सम्मदमाणी पाणाणि वीयाणि हरियाहं’ति हरियग्माहणेण वणप्फहं गहिया, किमत्थं पुणो गहणं कयंति?, आयरिओ भणइ-तत्थ अविसेसियं वणप्फइगहणं कयं, इह पुण समेदभिण्णं वणप्फइकायमुच्चारियं, जं जहा अकप्पियं भवति तं तहा इमा पडिसेहेइ, तहा ‘उप्पलं पडमं वावि’ ॥ १७५ ॥ सिलोगो, सम्मदिया नाम पुव्वच्छि- ण्णाणि जाणि ताणि अपरिणयाणि संमदणसंघट्टणाणि काऊण देइ, तमेवंपगारं दितियं पडियाइक्खे-न मे कप्पइ तारिसं । किंच जहा उप्पलादीणि सत्ताणि परिवज्जिज्जंति तहा इमाणिवि-‘सालुअं वा विरालियं’ ॥ १७७ ॥ सिलोगो, ‘सालुअं’ नाम उप्पलकन्दो भण्णइ, ‘विरालियं’ नाम पलासकंदो भण्णइ, जहा बीए वस्सी जायंति, तीसे पत्ते, पत्ते कंदा जायंति, सा विरालिया भण्णइ, कुमुदा उप्पला य पुव्वभणिया, तेसिं दोण्हवि गाली-गालिया भण्णइ, एयाणि लोगो खायति अतो पडिसेहणनिमित्तं नालियामहणं कयंति, गुणालिया-गवदंतसन्निभा पडमिणिकंदाओ निगच्छति, ‘सासवनालिअं’ सिद्धत्थगणालो, तमवि लोगो ऊणसंतिकाऊण आमगं चेष खायति, उच्छुसंडमवि पव्वेसु धरमाणेसु ता नेव अनवगतजीवं कप्पइ । किंच-‘तरुणमं वा पव्वालं’ ॥ १७८ ॥ सिलोगो, ‘तरुणमं’ नाम अहुणुडियं ‘पव्वालं’ पल्लवो, सो रुक्खस्स वा हरियस्स वा होज्जा, रुक्खे जहा अंभिलयाईणं, तणस्स जहा अज्जगमूलादीणं, आमगं नाम सचित्तं, परिवज्जए (परितो) वज्जए परिवज्जए । ‘तरुणिअं वा छिवाडि’ ॥ १७९ ॥ सिलोगो, ‘तरुणिया’ नाम कोमलिया, ‘छिवाडी’ नाम संगा, ‘आमिया’ नाम सचेतणा, ‘सहं मज्जिया’ नाम एकसिं मज्जिया, तं तहप्पगारं छिवाडिं दितियं पडियाइक्खे । किंच-‘तहा कोलमणुस्सिअं’ ॥ १८० ॥ सिलोगो, कोलं वज्जरं भण्णइ, अण्णे पुण भणांति-वंसकिरिल्लो वेलुयं, तमवि अणुस्सिअं न कप्पइ, ‘कासवनालियं’ सीवणिफलं भण्णइ, तमवि उद्देशः २ ॥१९७॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+भाष्य+चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथाः [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा १६०- २०९ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥१९९॥ ण पुण नीयं कुलं अतिक्रमिऊण ऊसढं अभिसंधारिज्जा, ‘णीयं’ नाम णीयंति वा अवयंति वा एगट्टा, दुग्गुळियकुलाणि वज्जे- ऊण जं सेसं कुलं तमतिक्रमिऊणं नो ऊसढं गच्छेज्जा, ऊसढं नाम ऊसढंति वा उच्चंति वा एगट्टं, तंमि ऊसढे उक्कोसं लभीहामि बहुं वा लब्धीहामितिकाऊण णो णीयाणि अतिक्रमेज्जा, किं कारणं?, दीहा भिक्षवायरिया भंवति, सुत्तथपीलमंथो य, जड- जीवस्स य अप्पो न रोयंति, जे ते अतिक्रमिज्जंति ते अप्पत्तिथं करंति जहा परिभवति एस अम्हेत्ति, पच्चइयोवि जातिवायं ण भुयति, जातिवाओ य उववृद्धिओ भवति । तम्हा--‘अदीणो वित्ति०’ ॥ २८५ ॥ सिलोगो, ‘अदीणो’ नाम अविमणो, तेषु उच्चनीयेसु कुलेसु वित्तमेसेज्जा, एसेज्जा नाम गवेसेज्जा, णो विसीएज्जा णाम विसादो न कायच्चो, जहा हिंडंतस्सऽवि मे जो (नो सं) पडइ, घरसयमवि गंतुं एगमवि भिक्खं न लहामि, पडिस्सयं गच्छामित्ति, ‘पंडिते’त्ति आमंतणं, मुच्छिओ इव मुच्छिओ (मुच्छिओ) न किंचि कज्जाकज्जं जाणइ तथा सोऽवि अनपाणगिद्धो ईरियाईसु उवयोगं न करेइ, तम्हा अमुच्छिएण भोयणे भवियच्चंति, मायणि नाम ‘झाऽवबोधने धातुः’ अस्य धातोः मात्रापूर्वस्य मात्राशब्दस्य ‘कर्मणि द्वितीयेति (पा. २-३-३) कर्मणि उप- पदे द्वितीया विभक्तिर्भवति, का पुनर्द्वितीया?, अम्, प्रथमयोः पूर्वः सवर्णदीर्घः, मात्रा जानातीत्येवं विग्रह्य ‘आतोऽनुपसर्गात् क’ इति (पा. ३-२-३) कप्रत्ययः, ककारादकारमपकृत्य ककारः ‘ङ्किती’ ति विशेषणार्थः, ‘आतो लोप इति च’ ‘ङ्किति चे’- (पा. ६-४-६४) त्याकारलोपः, गतिकारकोपपदानां कुङ्किः समासवचनं प्राक् सुप्प्रत्ययः, उपपदभिर्दं तं सुपा सह समस्यते तत्पुरुषश्च समासो भवति, सति समासे ‘सुपो धातुप्रातिपदिकयो’ रिति (पा. २-४-७१) सुप् लुक्, ‘ङ्यापोः संज्ञाछन्दसोर्वहु- ल’ मिति (पा. ६-३-२३) मात्राशब्दो ह्रस्वः मात्रञ्चः इत्ति एण पञ्चत्वं भवति, तमेव नाऊण गेण्हइ, एसणारएण होयव्वं, उद्देशः २ ॥१९९॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०-२०९॥ दीप अनुक्रम [१७६-२२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ५ अ० ॥२००॥ एगमहणे महणं तज्जातीयाणांमितिकाउं उग्गमउप्पायादिणोऽवि गहिया, अलभमाणेण किमालंघणं कायव्वं?, ‘बहुं परघरे’ ॥१८६॥ सिलोगो, बहुनाम परिमाणओ तं दव्वं बहुतं, ‘विचिहं’ नाम अणेगण्यगारं, खज्जतिचि खादिमं, सातिज्जतीति सातिमं, एतंमि खाइम साइम वा अलभमाणे ण तत्थ पंडिओ कुप्पेज्जत्ति, किं कारणं?, इच्छा देज्जा परो न वा, परो नाम असंजओ सावओ वा, अण्णो वा कोहवि वितकिज्जति सो परो. तंमि ओ (अदी) यमाणे एवं चित्तेयव्वं जयं, एतस्स अप्पज्जत्तियं बहुं च सैं अणुवकारा, एतेण त इच्छा दिज्ज परो न वा देज्जत्ति । किंच ‘सयणासण’ ॥१८७॥ सिलोगो, पठितसिद्धो चेव, किंच ‘इत्थिअं पुरिसं वावि’ ॥ १८८ ॥ सिलोगो, मग्गिज्जेज्जा पुरिसे वा, सा य इत्थिया नवतरा वा होज्जा थेरी वा, एवं पुरिसोऽवि, तं इत्थि पुरिसं वा डहरभावे वट्टमाणं थेरभावे वट्टमाणं ‘वंदमाणं न जाइज्जा’ जहा अहमेतेण वंदिउत्ति अवस्स-मेसो दाहेति, तत्थ विपरिणामादिदोसा संभवन्ति, पुरिसं पुण वंदमाणं २ अन्नं किंचि वक्खेवं काऊण अणत्तो वा मग्गिऊण पुणो तत्थेव गंतूण मग्गइ, जइ ताहे पुणो वंदति तो मग्गिओ जइ कदापि पडिसेहज्जा तत्थ नो अण्णं फरुसं वए, जहा-हीणं ते वंदितं, तुमं अवंदओ चेव, एवमादि, अथवा एस आलावओ एवं पठिज्जइ ‘वंदमाणो ण जाएज्जा’ वंदमाणो णाम वंदमाणो सिराकंपं पंजलियादीहि णो जाएज्जा, वायाएवि वंदणसरिसाए ण जातिव्वो, जहा सामि भट्टिदेवए वाऽसि, केणति वंदणसीलेण पमादयो अणाभोगओ वा वंदिओ न होज्जा तत्थ-‘जे न वंदे न से कुप्पे’ ॥ १८९ ॥ सिलोगो, तत्थ जो न वंदति तस्स उवरि कोहो ण कायव्वो, वंदिओऽवि रायादीहि णो समुक्सेज्जा, जहा को मए समाणो संपत्तिं?, ‘एवमन्नेसमाणस्स’ ति एवसदो अवधारणे वट्टइ, किमवधारयति?, पुव्वोवहट्ठं विधि अवधारयति, सो एसो विही म्णइ-एतेण विहिणा पुव्वायरिहि उद्देशः २ ॥२००॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०- २०९॥ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ५ अ० ॥२०१॥ समुदाणभेसितं, तमणुएसमाणस्स णाम तमेव जिणुवदिदं मेरमणुलंक्माणस्स सामणमणुचिद्वु नाम अहितं चिद्वुति । इदमणिं स- पक्खे तेणियां पडिसेहिज्जंति- ‘सिआ एगइओ लुहुं’ ॥ १९० ॥ सिलोगो, सिया नाम कदाइ, एगो नाम सत्तेसु जति एगो कोइ एरिसं करेज्ज, सो य वण्णगंधरसादीहि उववेयं भोयणं लद्धं ‘लोभेण विणिगूहति’ लोभेण नाम तंमि भोयणे मिद्धो- मुच्छिओ, विविहेहिं पगारेहिं गूहति विणिगूहति, अप्पसारियं करेइ, अन्नेण अंतपन्तेण ओहोडति, मा मेयमुक्कस्सयं आयरिओ अण्णो वा कोइ दट्ठणं सयं आइएज्जा नाम गेण्हेज्जा, जइ पुण पच्छन्नं करेमि तो पढमालिक्खामिस्सिं मडीए वा तातो अक्खमासाओ गिण्हामित्ति, तस्सेवं कुव्वमाणस्स इमे दोसा भवंति, तं० ‘अत्तट्ठा गुरुओ लुद्धो’ ॥ १९१ ॥ सिलोगो, अत्तणो अस्थो गुरुओ, लुद्धो पसिद्धो चेव, तओ सो अत्तट्ठगुरुयत्तं कुव्वमाणो सपक्खे तेणिया मायापच्चात्तियं ‘बहुं पावं पकुव्वति’ नाम अतीव कुव्वइ पकुव्वइ, तस्स तं सैसारगमणाय भवइ, एस ताव परलोइओ अवाओ भण्णइ, इमो पुण इहलोइओ जहा दुत्तोसओ भवति, कहं?, तस्स मणुण्णाहारसमुत्तस्स उक्कोसो दव्वअलामो पायसो, भत्तस्सावि ण तुट्ठी उपपज्जइ, अपरितुट्ठो य कहं णिव्वुत्तिं लभि- स्सति?, अहवा ‘णिन्ध्याणं च न गच्छइ’ एसोऽवि परलोगावायो, णिव्वाणं सव्वकम्मक्खयो, मोक्खो सव्वकम्मपगडीणं, णण्णभवे गच्छइ, तमेवंगुणविशिष्ट निव्वाणं न गच्छइ, एस ताव पच्चक्खो अपच्चक्खमवहरति । इयाणि अपच्चक्खो पच्चक्ख- मवहरति सो भण्णइ ‘सिआ एगइओ लुहुं०’ ॥ १९२ ॥ सिलोगो, कदाचि कोइ लुद्धो भिक्खायरियाए अडमाणो विविहं पाण- भोयणं लद्धं जं भद्दं तं भोत्तुं विवण्णं विरसं च तमाहरइ, तत्थ भद्दंति वा कल्लार्णति वा सोभणंति वा एगड्ढा, ‘विवण्णं’ अवक्खलगाक्खडंडकुरादीयं विवणं, विरसं नाम जं सभावओ विगतं रसं तं विरसं भण्णइ, तं च सीसोदणादी, सो पुण क्रिमत्थं उद्देशः २ ॥२०१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०- २०९॥ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ५ अ० ॥२०२॥ महं भोचूर्णं विवर्णविरसाणि आहरइ ?, ‘जाणंतु ता इमे’ ॥१९३॥ सिलोगो, जाणंतु ता इमे सम्मणा जहा एस साधू आय- तो-भोक्खो भण्णइ, तं आययं अत्थयतीति आययट्ठी, अहोऽयं संतुट्ठो नाम जइ अत्थि तो भुंजति, अलम्भमाणेऽवि समो चेव, अहो य अंतपंतं निसेवइ, लुहाइ से वित्ती, एतस्स ण णिहारे गिद्धी अत्थि, ‘सुतोसओ’ नाम थोवेणावि आहारेण लद्धेण ण चेव आउलीभवति । किंच-‘पूअणट्ठा जसो० ॥ १९४ ॥ सिलोगो, सो पच्छन्नभोई पूयणट्ठी जसोकामी य इमं महंतं अवायं पावइ, तत्थ पूयणट्ठी जहा जइ अहमेव करेमि तो सपक्खपरपक्खओ मे पूया भविस्सइ, ‘जसोकामी’ नाम एवं कुवमाणस्स जसो मे भविस्सइ, जहा अहो महप्पा एसत्ति, एवमादी, ‘माणसम्माणकामए’ माणो वंदणअब्भुट्ठाणपच्चयओ, सम्माणो तेहिं वंदणादीहिं वत्थपत्तादीहिं य, अहवा माणो एगदेसे कीरइ, सम्माणो पुण सव्वप्पगारेहिं इति, माणसम्माणे कामयतीति मान- समाणकामए, कामयति नाम पत्थयति, सो एवंविहसहावो बहुं ‘विविहं’ अण्णपगारं पापं पसवति, पसवति नाम प्रक्षययति, कम्मगरुययाए वा सो लज्जाए वा अणालोएतो मायासल्लमवि कुवति । कइं ?, ‘सुरं वा मेरगं वइवि०’ ॥ १९५ ॥ सिलोगो, तत्थ सुरं पिट्ठकम्मादि दव्वसंजोगओ भवति, मेरगो पसन्नो सुरापायोगेहिं दव्वंइ कीरइ, ण केवलं सुरमेरगा परिहरियव्वा, किन्तु अण्णेऽवि जे मज्जप्पगारा तेऽवि परिहरणज्जचि, जति नाम गिलाणनिमित्तं ताए कज्जं भविज्जा ताहे ‘ससक्खं नो पिबेज्जा’ ससक्खं नाम सागारिण्हिं पडुप्पाइयमाणं, किं कारणं ससक्खं ण पिबेज्जा ?, भण्णति- ‘जसं सारक्खमप्पणो’ जसो संजमो भण्णइ किच्ची वा, तेण य पीएण मत्तो भवति, मत्तो य संजमं णो पेक्खइ । इयाणि ससक्खं ण पायव्वं, एगागिणो पायव्वमिति?, अतो भण्णति-‘पियए एगओ तेणो०’ ॥ १९६ ॥ सिलोगो, पियति नाम पियतिचि वा आपियइचि वा एगट्ठा, उद्देशः २ ॥२०२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०- २०९॥ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ० अ० ॥२०४॥ भण्णति कल्लणं, सो य संजमो, अण्णेगं नाम इहलोइयपरलोइयं, जं च साधूहिं पूजियं, पूजियं नाम आतिण्णंति पूजितंति वा, अण्णेहिं वा साधूहिं पूजियं भण्णइ, ‘विउलं अत्थसंजुत्तं’ नाम विपुलं विसालं भण्णति, सो य मोक्खो, तेण विउलेण अत्थेण संजुत्तं विउलत्थसंजुत्तं, अत्थसंजुत्तं नाम सभावसंजुत्तं, ण पुण गिरत्थियंति, ‘किञ्चिज्जमाणं सुणेह य’ चि । ‘एवं-तु गुणप्पेही’ ॥२०३॥ सिलोगो, गुणा अट्टारससीलंगसहस्साणि ते पेहमाणो णाम सेवमाणो, तदा नागज्जुण्णिद्या तु एवं पढंति-‘एवं तु अगुण-प्पेही अगुणाणं विवज्जए’ अगुणा एव अणं अगुणाणं, अणंति वा रिणंति वा एगट्ठा, तं च अगुणरिणं अकुव्वंतो, सो य सव्वकालमेव मोक्खहेउमाराहयमाणो तारिसो आराहइ परिकम्मवित्तुणेण मरणंतेऽवि संपत्ते संघरो णाम संजमो तमाराधयति । किञ्च-‘आयरिणं’ ॥ २०४ ॥ सिलोगो, तेणाधिगारे वट्टमाणे इमं भण्णइ-तवतेणे वयं ॥ २०५ ॥ सिलोगो, तत्थ तवतेणो णाम जहा कोइ खमगसरिसो केणावि पुच्छिओ-तुमं सो खमओचि ?, तत्थ सो पूयासकारनिमित्तं भणति-ओमिति, अहवा भणइ-साधूणो चेव तवं करेति, तुसिणो संविक्खइ, एस तवतेणे, वयतेणे णाम जहा कोइ धम्मकहिसरिसो वाईसरिसो अण्णेण पुच्छिओ जहा तुमे सो धम्मकहि-वादी वा ?, पूयासकारनिमित्तं भण्णइ-आमं, तोण्हिको वा अच्छइ, अहवा भणइ-साधुणो चेव धम्मकहिणो वादिणो य भवंति, एस वयतेणे, रूवत्तेणे णाम रूवस्सी कोइ रायपुत्तादी पव्वइओ, तस्स सरिसो केणइ पुच्छिओ, जहा तुमं सो अमुगोचि ?, ताहे भण्णति-आमंति, तुसिणीओ वा अच्छइ, रायपुत्तादयो एरिसा वा, एस रूवतेणे, आयारभावतेणे णाम जहा महुराए कोउहलति जहा आवस्सयचुण्णीए स आयारतेणो, भावतेणो णाम जो अण्णुवगतं किञ्चि सुत्तं अत्थं वा माणावलेवेण न पुच्छइ, वक्खणंत्तं वाएतस्स वा सोऊण मेणइ, एवं तवतेणादि भावोवहस्यचणेण इहलोमे चेव अयसादिदोसा उद्देशः २ ॥२०४॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४४...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥१६०- २०९॥ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ५ अ० ॥२०५॥ पावइ, परलोगेऽवि सो अणालोइयपडिक्कंतो कालगओ देवकिव्विसियत्ताए कम्मं पकरोति । सीसो आह-जइ तारिसेहि देवत्तं लब्भइ, किमेवड्ढेण जत्तेण?, भणइ-तारिसस्स वभवयाइयाण पालणादीणं तं फलं, तहविज्ज्थ असोहणं । अतः-‘लद्धूणवि देवत्तं’ ॥ २०६ ॥ सिलोगो, किं तेण देवत्तेण जत्थ सो ओहिनाणलद्धीए न जाणइ-कोऽहं पुव्वं आसी ? किं वा कर्यंति ?, अहवा सो इमे न याणइ-जहा इमं दुक्कडं कर्यं जेणाहं देवत्तेणवि सति आभियोगो अंतत्थो वा जातोत्ति, एस्स तव देवलोगे अवायो भणिओ । इदाणि ताओ देवलोगाओ चुतस्स भणइ-‘तत्तोऽवि से चइत्ताण’ ॥ २०८ ॥ सिलोगो, जइवि कहवि सो तओ चइत्ता देवलोगाओ माणुस्सेसु उववज्जइ जत्थ बहुणावि कालेण बोधिलाभो न भवति । ‘एअं च दोसं दट्ठुणं, नायपुत्तेण भासिअं’ ॥ २०८ ॥ सिलोगो, एवं नाम जो हेट्ठा इयाणि देवकिव्विसादि दोसो भणिओ, एयं दट्ठुणं, चकारेण खच्चति जहा कित्थियं भणिहामि ?, अण्णेऽवि भगवया णायपुत्तेण एत्थ बहवे दोसा भासिवा, तम्हा तेसिं दोसाणं परिहरणनिमित्तं ‘अणुमायंपि मेहावी, मायामोसं विवज्जए’ तत्थ अणुसदो थोवे वड्ढइ, थोवमवि मायामोसं विवज्जए, किमंग पुण बहुयंति ? । इदाणि दोण्हंपि उद्देसणाणं उवसंहारो कीरइ, जहा-‘सिक्खिऊण भिक्खेसणसोहिं’ ॥२०९॥ सिलोगो, सिक्खिऊण-णाऊणं, भिक्खाए एसणा भिक्खेसणा, भिक्खमग्गणात्ति कुत्तं भवति, ताए भिक्खाए उग्गमुप्पायणेसणादीहिं सिक्खिऊण संजता साधुणो भणन्ति बुद्धा नाम अरहंतो भगवंतो, तेसिं संजतबुद्धाणं सगासे पिंडेसणज्झयणं सिक्खिऊणं ‘तत्थ’ त्ति ताए भिक्खेस-णसुद्धीए साधुणो ‘सुप्पणिहिइंदिए तिच्चलज्जेण गुणवया विहरियच्चं’ सुट्ठु पणिहिताणि इंदियाणि जस्स सो सुप्पणिहि-इंदिओ, लज्जसंजमो-तिच्चसंजमो, तिच्चसदो पकरिसे वड्ढइ, उकिट्ठो संजमो जस्स सो तिच्चलज्जो भणइ, गुणो जस्स अत्थि सो उद्देशः २ ॥२०५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [५], उद्देशक [२], मूलं [१५...] / गाथा: [५१-२०९/१७६-२२५], निर्युक्तिः [२४४.../२४५-], भाष्यं [६२...] मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा १६०- २०९ दीप अनुक्रम [१७६- २२५]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णीः ६ धर्माः २०६ धर्म कथकस्य- रूपं २०६ गुणवं, विहारेज्जासि, त्तियेमि नाम तीर्थकरोपदेशात् सुधम्मस्वाभि, न स्वाभिप्रायेण ब्रवीमि । इदाणि-णाद्यंमि गिणिह्वयवे, अग्निह्वयव्वंमि चेव अत्थंमि । जइलव्वमेव इह जो उवएसो सो णयो णाम ॥ १ ॥ सव्वेसिंपि नयाणं बहुवि- हवत्तव्वयं निसामेत्ता । तं सव्वन्नयविसुद्धं जं चरणगुणट्टिओ साह ॥ २ ॥ पिण्डेषणाध्ययनचुण्णी संमत्ता ॥ अथ आचारकथा-धर्मार्थकामाध्ययनं ॥ इदाणि भिक्षुं भिक्षापविट्ठं जइ कोह पुच्छेज्जा-केरिसो तुम्ह धम्मात्ति ? , ततो सो तेण भाणियव्वो, जहा-आयरियो उज्जाणे अण्णत्थ वा जत्थ, विइत्ता, तँ कहेयव्वं, ततो ते धम्मसोयव्वनिमित्तमागच्छंति, एतेण संबंधेणागस्स अज्झवणस्स वत्तारि अनुयोगदारा भाणियव्वा, जहा आवस्संगचुण्णीए, नवरं इह नामनिप्फन्नो महान्तिपायारकहा, महंतं णिक्खिवियव्वं, आयारो णिक्खिवियव्वो, कहा निक्खिवियव्वा, एते तिणिण जहा खुड्डपायारकहाए, इत्थ इमा णिदरिसणगाहा भाणियव्वा, पुव्वं ‘जघा य’ (जो पुर्व्वि० वृ० २४७) गाहा कण्ठ्या, इदाणि सुत्ताणुगमे सुत्तं वक्खाणितव्वं, तं अक्खलियं अमिलियं अविच्चामे- लियं जहा अनुयोगदारे तं च इमं सुत्तं— नाणदंसणसंपन्नं, संजमे अ तवे रथं । गणिमागमसंपन्नं, उज्जाणंमि समोसदं ॥ सू० २१० ॥ ‘ज्ञा अवबोधने’ धातुः, अस्य लङ् वर्त्तमाने, ‘करणाधिकरणयोश्चे’ति (पा. ३-३-११७) करणे ल्युट्प्रत्यये टकार उच्चा- रणार्थः लकारः लिटि प्रत्ययात्पूर्वं उदात्तार्थः, ‘युचोरनाका’ विति (पा. ७-१-१) अनादेशः, अकः सर्वर्णदीर्घत्वं, ज्ञायते अनेन ज्ञान स्थिते न इति नपुंसकविचक्षायां प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा, तस्य एकवचनं सु, ‘अतोऽमि’ति
	अध्ययनं -५- परिसमाप्तं अध्ययनं -६- ‘महाचारकथा’ आरभ्यते *** अत्र धर्म-कथकस्य स्वरूपम् वर्णयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ६ धर्मा. २०८ धातुप्रतिपदिकयो’ (पा. २-४-७१) रिति सुपलुक्, नकारस्य ‘हलन्त्य’ मिति (पा. १-३-३) (हलन्त्याविति) संज्ञा- प्रयोजनं निमित्त्यादिनिमित्त्यादुदार्थः (चव्युदासार्थः) ‘यस्येति चे’ ति (पा. ६-४-१४८) अकारलोपः, गणिन् इति स्थिते ‘कर्मणि द्वितीया’ (पा. २-३-२) अम् परगमनं गणितं, ‘गम्लृ गतौ,’ अस्य धातोः आङ्पूर्वस्य ‘करणाधिकरणयोश्च’ त्यनुवर्त्तमाने ‘पुंसि संज्ञायां घः प्रायेणे’ ति (पा. ३-३-११८) घप्रत्ययो भवति, घकारादकारमपकृष्य घकारस्य ‘लशक्वतद्धिते इदित्ति’ (पा. १-३-८)- त्संज्ञा, प्रयोजनं ‘चजोः कु घिध्यतो’ रिति (पा. ७-३-५२) विशेषणार्थः, प्रायेण आगम्यतेऽनेनेति आगमः, तं गणिमागम- संपन्नं नाम वायगं, एकारसंगं च, अन्नं वा ससमयपरसमयवियाणगं, उज्जाणे, सन्धातुः स्वरादौ पठ्यते, सरमाचष्टे तत्करोति तदाचष्टे तेनातिक्रामति धातुरूपं चेति चूर्णं, [सत्या०.] ‘चुरादिभ्यो णिः’ (पा. ३-१-२५) अणुवन्धलोपः ‘अत उपधाया’ इति (पा. ७-२-११६) वृद्धिः प्राप्ता अदन्तत्वान्न भवति, सर्वे अदन्ताः अज उपदेशाः, तेनोपधावृद्धिप्रतिषेधः, ‘अतो लोप आर्द्ध- धातुके’ (पा. ६-४-४८) अत (पा. ६-४-४६) अकारस्य लोपो भवति अर्द्धधातुके परतः, सति ‘सनाद्यन्ता धातव’ इति धातुसंज्ञा, अस्य धातोः संपूर्वस्य अवपूर्वस्य च ‘क्तक्तवत् निष्ठे’ ति (पा. १-१-२६) क्तः प्रत्ययः ककारः किङ्ति विशेष- णार्थः, ‘आर्द्धधातुकस्येड् वलादे’ रिति (पा. ७-२-३५) इडागमः, टकारः उच्चारणार्थः ‘सार्वधातुकार्द्धधातुकयो’ रिति (पा. ७-३-८४) अङ्गस्य गुणः प्राप्तः किञ्चात्प्रतिषेधे ‘निष्ठायां सेङि’ ति (पा. ६-२-४५) लोपः परगमने समवसरितं तं च, ते आगं- तूणं । रायाणां रायमच्चा य० ॥ ३११ ॥ सिलोगो, तत्थ रायाणो बद्धमउडा, रायमच्चा अमच्चा, डडणायगा सेणावइप्प- मितयो, माहणा धीयारा, तेसिं उप्पत्ती जहा सामाइयनिज्जुत्तीए, ‘अदुव खत्तिया’ नाम कोइ राया भवइ ण खत्तियो. अन्नो धर्म कथकस्य- रूपं २०८

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥२१०-२७७॥ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ. ६ धर्मा. ॥२१२॥ सालि (सट्टि) णो पसिद्धा, सट्टीगा सालिभेओ, कोहवअणुया पसिद्धा, कंगूगहणेण उड्डुकंगूए गहणं, जे पुण अवसेसा कंगूभेया ते रालओ भण्णइ, तिल्लमुग्गमासा अतसी य एताणि पसिद्धाणि, हरिमन्था कालचणया, तिउडया लंगचनया, णिप्फावा वल्ला, मसूरा मालविसयादिसु चवलगा, रायमासा इक्खतुंडगादि, सासियो राइआतो, तुवरी आढगी, कुलत्था पसिद्धा, धण्णया कुंकुमरीओ, कलाया वड्डचणया, चउवीसं धण्णा भणिया। इदाणिं दोहिं गाहाहिं चउवीसं रयणाणि भण्णंति-‘रयणाणि चउवीसं’ ॥ २५६ ॥ गाहा, ‘संखो तिणिसागुरु’ ॥ २५७ ॥ गाहा, सुवण्णतउयतंवा पसिद्धा, रययं-रुप्पयं भण्णइ, लोह-सीसगाणि पसीयाणि, हिरण्णं रूवगादि, पासाणग्गहणेण वियातिपासाणग्गहणं कयं, ‘वड्डरं’ वड्डमेव, मणिग्गहणेण जावंति केइ पासाणभेदा एए सव्वे गहिया, मोत्थियपवालसंखा लोगप्पसिद्धा, तिणिसरूखोऽवि रयणं, अगरुचंदणा पसिद्धा, वत्थगहणेण सोत्थियवागयादीणि, अमिलागहणे सव्वेसिं उन्नियाणं गहणं कयं, कट्ठगहणेणं सागरूखादीणं गहणं कयं, दंता हत्थीणं, चम्मा महिसिगाईणं, वाला चमरीणं, गंधा सोमंघियाणि दव्वाणि दव्वोसही पिप्पिलीमिरियादी, चउवीसइविहाणिवि रयणाणि भाणि-याणि, इयाणिं थावरं भण्णइ-भूमि घरा० ॥ २५८ अद्धगाथा, तिविहं थावरं भवति, ‘भूमिघर तरुगणा’ इति तत्थ भूमिखेत्तं तिविधं-सेतुं केतुं उभयं, घरं तिविहं-खातं उस्सितं खाओसितं, तत्थ खायं जहा भूमिघरं, उस्सितं जहा पासाओ, खातउस्सितं जहा भूमिघरस्स उवरि पासादो तरुगणा जहा नालिकेरिकदलीमादी, थावरं गतं। इयाणिं दुपदं भण्णइ ‘चक्कारवद्धमाणुस’ गाधापच्छदं, दुपदं दुविहं-चक्कारवद्धं माणुसं च, चक्कारवद्धं णाम सगडरहादीणि, माणुसं ण्हुसादासभयदादी, गयं दुपदं। इयाणिं चउप्पदं भण्णइ, तं दसविधं, ‘गावी महिसी उट्ठा अयएल्लग’ ॥ २५९ ॥ गाथा (गावीमाइआओ) पसिद्धाओ, आसो नाम अर्थभेदाः ॥२१२॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥२१०-२७७॥ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ६ धर्माः ॥२१८॥ परट्टाए सन्नियगादिसु परस्स अट्टाए ओभासइ, ‘कोह्वा’ जहा तुमं दासो जुंगितो एवमादि, कोहगहणेण माणमायालोभावि गहिया, तत्थ माणेणं जहा अवहुस्सुतो भणति बहुस्सुए उ अहमिति, मायाए अलसियत्तणेण पादो दुक्खिस्सइत्ति गामे ण हिंडइ एवमादि, लोभेण जहा कोइ भत्तं वेत्तुणं धुवं अण्णं लामं चेतितमाणो एसणिज्जंति भणइ, इमं मायाए जहि (अणेसणिज्जंति, अहवा भयओ वितहं काऊण पच्छित्तमया न कयमिति, एगग्गहणे गहणं तज्जातीयाणंति हासादिणोऽवि गहिया) गहियं, तओ एते ‘हिंसगं, न मुसं बूआ’ ‘हिंसगं’ नाम जेण सच्चेण भणिण पीडा उप्पज्जइ तं हिंसगं, जहा अत्थि ते केऽवि मिया वा पसुया वा दिट्ठा?, तत्थ भाणियव्वं-ण पस्सामित्ति, सच्चमेव तं अपि, अपि च न तच्चवचनं सत्यमतच्चवचनं न च, यद् भूतहितमत्यन्तं तत्सत्य-मितरं मृषा, जहा सयं मुसावायं नो ब्रूयात् तहा नोवि अन्नं वयावए, ‘एगग्गहणे गहणं तज्जाइयाण’ मितिकाउं वदंतमवि अन्नं न समणुजाणेज्जा, किं कारणं?, भणइ-‘मुसावाओ उं लोगम्मि, सच्चसाहूहिं’ ॥ २२१ ॥ सिलोगो, जो सो मुसावाओ एस सव्वसाहूहिं गरहिओ, सक्कादिणोऽवि मुसावादं गरहंति, तत्थ सक्काणं पंचण्हं सिक्खावयाणं मुसावाओ भारियतरोत्ति, एत्थ उदाहरणं- एणेण उवासएण मुसावायवज्जाणि चत्तारि सिक्खावयाणि गहियाणि, तओ सो ताणि भंजिउमारद्धो, अण्णेण य भणिओ, जहा-किमेयाणि भंजसि?, तओ सो भणइ- मिच्छा, णाहं भंजामि, ण मए मुसावायस्स पच्चक्खायं, तेसिं पि सव्वा-हियया णिच्छिता, एतेण कारणेणं तेसिं पि मुसावाओ भुज्जो सव्वसिक्खापदेहितो, किंच- ‘अविस्सासो य भूताणं’ मुसावादो भवइ, यथा किमनेन यत्किंचित्प्रलापिनेति?, तम्हा एते दोसा जाणिऊण मम्मं सव्वपयत्तण वज्जेज्जा । मुसावादविरती गता, इदाणि अदिन्नादाणविरती भणइ, तं- चित्तमंतमचित्तं वा० ॥ २२२ ॥ सिलोगो, चित्तं नाम चेतणा भणइ, सा च व्रतपदकम् ॥२१८॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णीः ६ धर्माः ॥२२०॥ ‘विडमुब्भेइमं लोणं०’ ॥ सिलोगो, तत्थ लोणं दुविधं, तं०- विडं च उब्भेइमं च, तत्थ विलं (डं) गोमुत्तादीहिं पविऊण कित्तिमं कीरइ, उब्भेइमग्गहणेण सामुदादीण गहणं कयं, अहवा विलग्गहणेण फासुगलोणस्स गहणं कयं, उब्भेइमग्गहणेण अफासु-गस्स लोणस्स, तेहं लोणपसिद्धं, सप्पी धयं भण्णइ, फाणिधग्गहणेण सव्वस्स गुडस्स गहणं कयंति, एतेसिं लोणादीणं गहणं सारोऽधवा आधरोत्ति गहिऊण कयंति, एताणि अविणासिदव्वाणि न कप्पंति, किमंग पुण रसादीणि विणासिदव्वाणिचित्तिं?, एवमदि सण्णिधिं न ते साधवो भगवन्तो णायपुत्तस्स वयणे रया इच्छंति, ‘सान्निधि’ नाम एतेसिं दव्वाणं जा परिवासणा सा सान्निधी भण्णति, परिवासंतस्स य इमे इमे दोसा भवन्ति-लोहस्सेस अणु० ॥ २२७ ॥ सिलोगो, अणुफासो नाम अणुभावो भण्णति, जहा सुकालाणुफासो, एवं एसोऽवि लोभाणुभावोत्ति वुत्तं भवति, मन्नेणाम तित्थंकरो वा एवमाह-जहा जमेताणं विल-मुब्भेइमादीणं सान्निधी णामेसो महालोहाणुफासो मन्नामिचित्ति, अन्नतरं णाम तिलतुसतिभागमेत्तमवि, अहवा अन्नयरं असणादी, अविंसदो संभावणे वड्डइ, किं सम्भावयति?, जहा जइ ताव थोवमवि असणाइ गेण्हमाणे दोसाणमायतणं भवति, किं पुण जे बहु गेण्हति? सव्वाणि वा असणादीणि गिण्हति? एतं सम्भावयति, ‘जे’ चित्ति अविसेसिताणं गहणं भवति, सिया कदापि, सण्णिहिं कामयतीति सन्निहिकामी, गिहं जेसिं अत्थि ते गिही, पव्वइयावि होऊण गिही य गिहतुल्ला वा, आह-जइ ताव लव-णाइणं संचएणं गिही भवइ तो कइ वत्थादी गिण्हमाणा साधुणो गिहिणो य भविस्संति?, भण्णइ-जंपि वत्थं व पायं वा० ॥ २२८ ॥ सिलोगो, जमितिसदो निदेसे वड्डइ, अविंसदो संभावणे, किं सम्भावयति?, वत्थादीणं निरत्थयग्गहणेण दोसा भवंति संजमाणुपालणत्थं लज्जानिमित्तं वा वेप्पमाणाणि ण दोसकराणि भवंति एवं संभावयति, वत्थपाया पसिद्धा, कंबलगहणेण व्रतपदकम् ॥२२०॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०- २७७ दीप अनुक्रम [२२६- २९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ६ धर्मा. ॥२२१॥ पायणिज्जोगो (गहिओ) भवति उन्नियक्कप्पो वा, पादपुंछणं-रग्घहरणं, एतेसि वत्थादीणं जं धारणं तमवि, संजमनिमित्तं वा वत्थस्स गहणं कीरइ, मा तस्स अभावे अग्गिसेवणादि दोसा भविस्सन्ति, पातामावेऽवि संसत्तपरिसाडणादी दोसा भविस्सन्ति, कंबलं वासकप्पादी तं उदगादिरक्खण्डा वेप्पति, लज्जा निमित्तं चोलपट्टको वेप्पति, अहवा संजमो चेव लज्जा, भाणितं च-“इह सो लज्जा नाम लज्जामंतो भण्णइ, संजममंतोत्ति वुत्तं भवति,” एताणि वत्थादीणि संजमलज्जट्टा ‘धारयंति परिहरंति य’, धारणापरिहरणा को पइविसेसो?, तत्थ धारणा णाम संपयोअणत्थं धारिज्जइ, जहा उप्पण्णे पयोयणे एतं परिभुंजिस्सामिति, एसा धारणा, परिहरणा नाम जा सयं वत्थादी परिभुंजइ सा परिहरणा भण्णइ, तं पुण वेप्पमाणं परिभुंजमाणं वा कहं ण परिग्गहो भविस्सइत्ति?, भन्नइ, (अ) परिग्गहणभोगतो असारमुल्लग्गहणायो य अधिभूतसाधारणतो य देसकालान्नभोगेण य परिग्गहदोसो न भविस्सइत्ति । किंच--‘न सो परिग्गहो वुत्तो’॥२२९॥ सिलोगो, णकारो पडिसेहे वड्डइ, ‘सो’ ति जो सो वत्थादीण भणिओ, वुत्तं नाम वुत्तंति वा भणितंति वा, धारयंति वा संजमंति वा निमित्तंति वा एगट्टा, णायाम स्वत्तियाणं जातिविसेसो, तस्मि संभूओ सिद्धत्थो, तस्स पुत्तो णायपुत्तो, अच्चाणं अप्पं च तरयतीति तायी तेण तायिणा, ण सो पडिग्गहो भणिओत्ति, जा पुण तेसु वत्थादीसु मुच्छा सो परिग्गहो भवति, अरत्तहुट्ठस्स परिभुंजंतस्स ण परिग्गहो भवइ, इतिसइो उवप्पदरिसणे वड्डइ, गणधरा भणगपिया वा एवमाहुः--जहा एतेसु परिग्गहिएसु अपरिग्गहिएसु वा वत्थदिदसु जा गेही सो परिग्गहो महेंसिण भणियो, न केवलं नायपुत्तेण उवाधिगहणं करं, किंच-सच्चत्थुवहिणा० ॥ २३० ॥ सिलोगो, सव्वेसु अतीताणागतिसु सव्वभूमिएसुत्ति, ते बुद्धा--विस्थयसा उवहिणा--एगदूसेण सचेले धम्मो पन्नवेयव्वेत्तिकऊणं णिग्गता, ‘एगग्गहणे गहणं तज्जातियाण’ मितिकाउं व्रतपट्टम् ॥२२१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ६ धर्मा. ॥२२२॥ पत्तेयबुद्धजिणकप्पियादिणो सो अधियो भवति ‘ संरक्खण परिग्गहो ’ नाम संजमरक्खणणिमित्तं परिगिण्हंति, ण दप्पपरि- भूसणादिणिमित्तंति । किंच-‘अवि अप्पणोऽवि देहम्मि तेहिं भगवंतेहिं, ते हि भगवंतो सदेहेवि‘नायरंति ममाइयं’‘णायरंति’नाम न करंति, ‘ ममाइयं ’ ममत्तं, ते कओ वाहिरे उवगरणे मुच्छं करंति ? , अमुच्छियस्स परिग्गहो कहं भविस्सई ? , जहेव सरीरं धम्मसाहणत्थं अमुच्छिया धारयंति तथा वत्थादीणिवि । परिग्गहविरई गया, इयाणि राईभोयणाविरती भण्णइ, तं—‘ अहो निच्चं तवो कम्मं ॥२३१॥ सिलोगो, अहो सहो तिसु अत्थेसु वट्ठइ, तंजहा-दीणभावे विम्हए आमंतणे, तत्थ दीणभावे जहा अहो अहमिति, जहा विम्हए अहो सोहणं एवमादी, आमंतणे जहा आगच्छ अहो देवदत्तात्ति एवमादि, एत्थ पुण अहोसहो विम्हए दट्ठव्वो, गणधरा मणगपिता वा एवमाहु-जहा अहो कट्ठ‘निच्चं तवो कम्मं’ति णिच्चं नाम निययं‘तवोकम्मं’तवो कीरमाणो, कथं तवो भवति? ‘सच्चवुद्धेहिं वणिणयं’ वणिणयं नाम वणिणयंति वा देसियंति वा एगट्ठा, किंच तेहिं वणिणयं ? , भण्णइ ‘ जा य लज्जासमा- विच्ची ’ ‘ जा ’ इति अविसेसिया, चकारो सावेक्खे, अत्थि च वृत्ति, किमवेक्खइ, ? जमेगभत्तं उवरिं भणिणहिति एतं अवेक्खइ, लज्जा संजमो भण्णइ, जाए विच्चीए सो संजमो स समो भण्णइ, न विरुज्झइत्ति वुत्तं भवइ, किं च—‘ एगभत्तं च भोअणं ’ एगस्स रागदोसरहियस्स भोअणं अहवा इक्वारं दिवसओ भोयणंति । अहो राईभोयणे को दोसो ? , इत्थ भण्णइ—‘ संतिमे सुहुमा पाणां ॥ २३२ ॥ सिलोगो, ‘ संति ’ नाम विद्यन्ते, इमे नाम जे पच्चक्खमेवोपलब्धन्ते, सुहुमा, तसा थावरा य, तत्थ तसा कुंथुमाई, थावरा बीयपरागादी, ‘ एगग्गहणेण गहणं तज्जातीयाण’मितिकाउं सुहुमग्गहणेण वादराणवि, तसाणं गधणेण वणप्फइमाई गहिया, सो ताणि सुहुमवादराणि पाणाणि राओ अपासंतो कथमेपणीयं चरिच्चतीति ? , एपणीयं व्रतषट्कम् ॥२२२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ६ भर्मा. २२५ वि दहइ । सव्वओ दाहित्तणेण य ‘भूआणमेसमाघाओ’ ॥ २४३ ॥ सिलोगो, भूता सम्पातिमादी, तेसिं भूताणं आपादे आघातो णाम जावतो भूता अगणिसमासमल्लियते ते सव्वे घातयतीति आघातो, हव्वं वहतीति हव्ववाहो, तत्थ लोससिद्धते हव्वं देवाणं अहावरं दिव्वा तिप्पंतीति, वहतीति वाहो, वहति णाम णेति, हव्वं ताम् जं हयते घयादी तं हव्वं सण्णइ, अम्हं पुण जम्हा इव्वाणि जीवाणं जीवियाणि वधत्ति अजीवदव्वाण य मुत्तिमंताणं विष्णमं ब्रह्तीति हव्ववाहो, ण संसओ णाम एत्थ संसओ न कायव्वो, जहा-एसो हव्ववाहो भूयाणं आघायं न करेत्ति, पदीवनिमित्तं पयावणनिमित्तं वा कोये आरमेज्जा, तत्थ पदीवनिमित्तं जहा अन्धकारे पमासत्थं पदीवो कीरई, पयावणनिमित्तं हिमागमे वरिसासु वा अप्पाणं तावन्ति, वत्थाणि वा ओदणादीणि वा पयावन्ति, एतेहिं कारणेहिं स हव्ववाहं-अग्गि, किंचि णाम संघट्ठणपरितावणणिव्ववणादि । जम्हा भूयाण एस आघातो ‘तम्हा एअं विआणित्ता, दोसं दुग्गइवहुणं । तेउकायसमारंभं, जावज्जिवाइ वज्जए’ ॥ २४४ ॥ तेउक्कायविरति गत्ता । इदाणि वाउकायविरती भण्णति— अणिलस्स समारंभं ॥ २४५ ॥ सिलोगो, निलओ जस्स नात्थि सो अणिलो तस्स अनिलस्स समारंभं, ‘समारंभं’ नाम उक्खेवतोयतालियं- दादीहिं भवति, ‘बुद्धा’ तित्थगरगणधसादी, ‘तारिसं’ नाम ते बुद्धा ‘अनिलसमारंभं’ अणिल(वाउस)मारंभं असरिसं भण्णति, कथं ? सो विराधिज्जमाणो अणेगे विराधेति संपाहमे असंपाहमे य, अओ ‘सावज्जबहुलं चेयं’ ति सह वज्जेण सावज्जं, वज्जं नाम वज्जंति वेरंति वा परंति वा एगट्ठा, बहुलं नाम सावज्जदोसाययणं, चकारः पादपूर्णे, ‘एअं’ नाम जमेयं वाउकाय- समारंभं भणियं, तारयन्तीति त्ताइणो तेहिं तातीहिं, ण एयं वाउकायसमारंभं सेवितंति, तं च वाउकायं भगवतो साध्वो णो कायपट्कम् २२५

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ६ धर्मो. ॥२२६॥ इमेहि उदीरन्ति, तं० ‘ तालिअंटेण पत्तेण० ’ ॥ २४६ ॥ सिलोगो, तालियंटादीणि जहा छज्जीवणिगाए, न केवलं तालियंटा- दीहि वाउकायं न उदीरयन्ति, किन्तु—‘ जंपि वत्थं व पायं वा, कंबलं पायपुंछणं० ॥ २४७ ॥ सिलोगो, जमवि वत्थादि तेणावि वाउजीवसंपाइमरक्खणद्धा णो वाउकायं अविहिपक्खोडणादीहि उदीरन्ति भगवंतो साधवो, किन्तु जयणाए परिमोग- परिहारेण धारणापरिहारेण य परिहरन्तीति । तम्हा एअं विआणित्ता, दोसं दुग्गइवड्डणं । वाउकायसमारंभं, जाव- जीवाइ वज्जए ॥ २४८ ॥ सिलोगो कण्ठयः, वाउकायविरती गता । इदाणि वणप्फइकायविरहं भण्णइ, तं०-‘वणस्सइं न हिं- सन्ति० ’ ॥ २४९ ॥ सिलोगो, ‘ तम्हा एअं विआणित्ता० ’ ॥ २५१ ॥ सिलोगो, एएसिं सिलोगाणं अत्थो जहा पुढविका- यस्स, एवं तसकाएवि तिण्हवि सिलोगाणं वक्खणं भाणियव्वं । ‘ तसकायं० ’ ॥ २५२ ॥ २५३ ॥ २५४ ॥ जहा पुढविकाए, कायछकं गतं, गया य मूलगुणा, इदाणि उत्तरगुणा, अकप्पादिणि छट्ठाणाणि, ताणि मूलगुणसारक्खयभूताणि, तं ताव जहा पंच- महव्वयाणं रक्खणनिमित्तं पत्तेयं पंच पंच भावणाओ तह अकप्पादीणि छट्ठाणाणि वयकायाणं रक्खणत्थं भाणियाणि, जहा वा गिहस्स कुड्ढकवाडजुत्तस्सवि पदीवजागरमाणादि रक्खणाविसेसा भवन्ति तह पंचमहव्वयजुत्तस्सवि साहुणो तेसिमणुपालणत्थं इमे उत्तरगुणा भवन्ति, तत्थ पढर्म उत्तरगुणो अकप्पो, सो दुविधो, तं०-सेहड्डवणाकप्पो अकप्पड्डवणाकप्पो य, तत्थ सेहड्डवणा- कप्पो नाम जेण पिण्डणिज्जुत्ती ण सुता तेसु आणियं न कप्पइ भोत्तुं, जेण सेज्जाओ ण सुयाओ तेण वसही उग्गमिता ण कप्पइ, जेण वत्थेसणा ण सुया तेण वत्थं, उड्डवद्धे अणला ण पव्वाविज्जंति, वासासु सव्वेऽवि, अकप्पठवणा गया, कप्पो इमो, जहा- जाइं चत्तारि भुज्जाइं, इसिणाऽऽहारमाइणि । ताइं तु विवज्जंतो, संजमं अणुपालए ॥ २२५ ॥ (सूत्रं) कायपट्कम् ॥२२६॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥२१०-२७७॥ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो ६ धर्मा. ॥२३२॥ साहवो सीएण उसिणेण दवेण व णेह सिणायांतिचि, आह- जइ उप्पीलावणादिदोसा न भवंति ?, तहावि अन्ने ण्हायमाणस्स दोसा भवंति, कहं ?, ण्हायमाणस्स धंभचेरे अगुत्ति भवति, असिणाणपच्चइयो य कायकिलेसो तवो सो ण हवइ, विभूसादोसो य भवतिचिकाळण जावज्जीवं वयं घोरे अस्सिणाणमहिद्वेयव्वंति, जहेव साहूणं ण्हाणं पडिसिद्धं, तहा ‘ सिणाणं अदुवा कक्कं० ’ ॥ २७२ ॥ सिलोगो, सिणाणं ण्हाणं भण्णइ, कक्को लवन्तयो कीरइ, वण्णादी कक्को वा, उव्वलयं अट्टगमादि कक्को भण्णइ, लुहं कसाओ जं वासेडयादी कीरइ, पउमं कुंकुमं भण्णइ, चकारेण अण्णाणिवि एवमादि गहियाणि, ताणि गायस्स उव्व-ट्टण्णत्थं णायरंति साधवो, कयाइवित्ति कयाइगहणेण णज्जइ जाव आउ ताइ सेसं नायरंति, को पुण सिणाणादिसु दोसो ?, भण्णइ, विभूसाइ दोसा भवंतिचि, एतेण अभिसम्बन्धेण सोभवज्जणं दारं पत्तं, तं०, ‘ नग्गिणस्स वावि मुंडस्स० ’ ॥ २७३ ॥ सिलोगो, णग्गिणो णग्गो भण्णइ, मुंडो चउव्विधो, तं०- नाममुंडो ठवणामुंडो दव्वमुंडो भावमुंडो यत्ति, णामठवणाओ गयाओ, दव्वमुंडो आइव्वमुंडाई, भावमुंडो जस्स इंदियणोइंदिया दंता सो भावमुंडो भवति, दीहाणि रोमाणि कक्खीवत्थ-जंघादीसु जस्स, णहावि अलत्तयषाडणपायोगा, ण छज्जंति ते दीहा धारेउं, जिणकप्पियादीण दीहावि, एवंविहरूवस्स मेथु-णोवरयस्स साहुणो न किंचि विभूसा साधयइ, केवलं विडचेट्ठणं करइ. अतो- विभूसावात्तियं भिक्खू, कम्मं बंधइ चिक्कणं। संसारसागरे घोरे, जेण पडई दुरुत्तरे ॥ २७४ ॥ सिलोगो, ‘ विभूसावत्तियं ’ नाम विभूसा वत्तियं पच्चइयं रागाणु-गयस्स भिक्खुणो चिक्कणो कम्मबंधो भवइ. चिक्कणंति वा दारुणंति वा एगट्ठा, तं कम्मं बंधइ जेण कम्मेण बद्धेण संसारसागरे भमति, इदाणि गणधरा मणगपिता वा एवमाहु, विभूसावत्तियं नाम विभूसावत्तियं पच्चइयं, जमेयं विभूसावत्तियं कम्मं हेट्ठा निषद्या निषेधः ॥२३२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [६], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२१०-२७७/२२६-२९३], निर्युक्तिः [२४७-२६८/२४५-२६८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २१०-२७७ दीप अनुक्रम [२२६-२९३]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ६ धर्माः ॥२३३॥ अभियं तयं तित्थगरादि धुद्धा मन्त्रंति, मन्त्रंति वा ज्ञाणंति वा एगद्धा, तारिसं नाम जमिदाणि चिक्रणंति भणियं तहप्पगारं संसारसागरमडयं वज्झतीति, न किंचन केवलं विभूसादोसो सो एगो, किन्तु सावज्जं बहुलं चेत्तंति, सहज्जं सावज्जं, जा सत्थं व ण्हाणादीणि मग्गमाणस्स-गवीसमाणस्स सावज्जकिरियाए सावज्जवहुलं चेव विभूसावत्तियं कम्मं बंधइत्तिकाऊण मा एयं तित्थकराईहिं ताईहिं सेवियंति, सोभणवज्जणन्ति दारं गतं। संमत्ता य उत्तरगुणा अट्टारसट्टाणाणि य, उत्तरगुणाधिकारे इमं भणइ— ‘खवंति अप्पाणममोहदंसिणो०’ ॥ २७६ ॥ सिलोगो, अहवा जो सो अट्टारससु ठाणेसु संजमो उवदिट्ठो, जे य तम्मि संजमे ठियाते खवंति अप्पाणं अमोहदंसिणोत्ति, आह-किं ताव अप्पाणं खवंति उदाहु सरीरंति?, आयरिओ भणइ— अप्पसहो दोहिवि दीसइ-सरीरे जीवे य, तत्थ सरीरे ताव जहा एसो संतो दीसई मा णं हिंसिहिसि, जीवे जहा गओ सो जीवो जस्सेयं सरीरं, तेण भणितं खवेति अप्पाणंति, तत्थ सरीरं औदारिकं कम्मगं च, तत्थ कम्मएण अधिगारो, तस्स य तवसा खए कीरमाणे औदारियमवि खिज्जइ, अमोहं पासंतिचि अमोहदंसिणो सम्मदिट्ठी, सम्मवन्ताण वुत्तं भवति, तवो बारसविहो तम्मि तवे रया, संजमा सत्तरसविहो, उज्जुताभावो अज्जवं, अज्जवगहणेण अणासंसओ संजमतवे कुव्वतीति, गुणग्रहणेण एते चेव गुणा गहिया, एवं ते चरणगुणसंजमतवेसु अवट्ठिया चिरसंचिताणि पावाणि पुरेकडाणि कम्माणि धुणंति, अण्णाणि नवाणि ण साहवो करंति ॥ ‘सओवसंता अममा०’ ॥ २७७ ॥ सिलोगो, सदा-सव्वकालं उवसंता सदोवसंता, अममा णाम वज्झव्वं-तरेहिं गंथेहिं विप्पमुक्का अममा भणंति, किंचणं चउव्विहं, तं-णामकिंचणं ठवणाकिंचणं दव्वकिंचणं भावकिंचणं च, तत्थ नामं तहा ठवणाओ गयाओ, दव्वकिंचणं हिरण्णादि, भावकिंचणं अन्नाणकिंचणं अविरईमिच्छताईणि, अप्पणो विज्जा सविज्जा तया निपद्या निषेधः ॥२३३॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥२७८-३३४॥ दीप अनुक्रम [२९४-३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णिं ॥२४१॥ अण्णत्ते जहा सुद्धवंसो सो देवदत्तो, अण्णत्ते जहा सुद्धदंतो, आदेसदब्बसुद्धी गता । वण्णरसगंधफासे ॥२८७॥ गाथा, पहाणदब्बसुद्धी इमेसु ठाणेषु भवइ, तं-वण्णेषु गंधेषु रसेसु फासेसु जा समणुच्चा सा पहाणवक्कसुद्धी भवति, समणुच्चा नाम दरिसणिज्जा, तत्थ वच्चेसु सुक्खिलो वच्चो पहाणो गंधेषु सुरभी पहाणो रसेसु महुरो पहाणो फासेसु मउयलहुयउण्हणिद्धा पहाणा, अहवा वच्चरसगंधफासेसु जो जस्स संमतो सो तस्स पहाणो, संमतो नाम अभिप्पेतो, पहाणसुद्धी गता, गया य दब्ब-सुद्धी । इयानि भावसुद्धी भण्णइ, तंजहा- ‘एमेव भावसुद्धी’ ॥२८८॥ गाथापुव्वद्वं, ‘एवमेव’ त्ति जहा दब्बसुद्धी ति विधा दब्बादि एवं भावसुद्धी वि ति विधा, तं-तब्बभावसुद्धी आदेसभावसुद्धी पहाणभावसुद्धी य, तत्थ तब्बभावसुद्धी आदेस-भावसुद्धी य इमेण गाथापच्छद्वेण भण्णंति, तंजहा-तब्बभावगमाएसो अण्णणीमीसा हवइ सुद्धी ॥ २८८ ॥ गाथा-पच्छद्वं, तस्य तब्बभावसुद्धी जहा तंमि गतो भावे सो अहिकंखइ, जहा बुद्धिक्खिओ अच्चं तिसिओ पाणं एवमादि । इदानि आदेस-भावसुद्धी, सा दुविधा, तंजहा-अण्णत्ते अण्णत्ते य, तत्थ अण्णत्ते जहा सुद्धभावस्स साहुस्स एस आयरिओ, अण्णत्ते जो जेण भावेण आदिस्समाणो न विरुज्जइ, जहा सुद्धसभावो साहू । इयानि पहाणभावसुद्धी भण्णइ, तंजहा- ‘दंसणनाणचरित्ते’ ॥ २८९ ॥ गाथा, पहाणभावसुद्धी जं दंसणादीण आदिस्समाणानं सा पहाणभावसुद्धी भण्णइ, तत्थ दंसणपहाणसुद्धी खाइगं दंसणं, नाणपहाणसुद्धी खाइगं णाणं, चरित्तपहाणसुद्धी य अहक्खायं चरित्तं, तवपहाणसुद्धी य अन्धितरतवस्स सम्ममाराहणाए, तेहिं दंसणाईहिं परिसुद्धेहिं जम्हा साहू विसुद्धकम्ममलो भवइ अओ अविमुद्धो सुद्धो भवइत्ति, एत्थ भावविमुद्धीय अधिकारो, सेसा उच्चारित्तसरित्तिकाऊण परुविया, सुद्धी गया । सीसो आह- वक्कसुद्धीए किं पओयणंति ?, आयरिओ भणइ- सुद्धेण वाक्य- शुध्ययने शुद्धि- निक्षेपाः ॥२४१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ॥२७८-३३४॥ दीप अनुक्रम [२९४-३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ॥२४२॥ वक्त्रेण आचारसुद्धी भवति, वक्त्रसुद्धीय इमा गिरुत्तगाथा भवद्, ‘जं वक्त्रं वदमाणस्स०’ ॥२९०॥ जं वक्त्रं वयमाणस्स साधुणो संजमे सुद्धी भवद्, ण य सच्चवेण भणिण्ण हिंसा जायद्, ण य अत्तणो कलुसभावो भवद्, जहा किं मए एतं एवंविहं भणिणं?, तेण वक्त्रसुद्धी भण्णद्, किं कारणं वक्त्रसुद्धीय एत्तिओ आयरो कीरद्?, आयरिओ आह-‘वयणाविभत्तीकुसलस्स०’ ॥ २९१ ॥ गाथा, वयणविभत्तीय कुसलया जस्स अत्थि सो वयणविभत्तीकुसलो, तस्स वयणविभत्तीकुसलस्स, न केवलं वयणविभत्तीकुसलस्सेव, किंतु ‘संजमंमि उवट्ठितमत्तिस्स’ तत्थ सम्मं नाम संजमो, तंमि संजमे उवट्ठिया मत्ती जस्स, उवट्ठिया नाम थिरी-भूता, जम्हा तस्स वयणविभत्तीकुसलस्स संजमंमि य उवट्ठितमइस्स साधुणो एकेणावि दुब्भासिण्ण विराधणा होज्जा, अओ वक्त्रसुद्धीय सव्वपयत्तेण जत्तितव्वंति, आह- जइ भासमाणस्स दोसो तो मोणं कायव्वं, आयरिओ भणद्- मोणमवि अणुवाएण कुव्वमाणस्स दोसो भवद्, कहं?, ‘वयणविभत्तीअकुसलो०’ ॥ २९२ ॥ गाथा, कोयि वयणविभत्ती अकुसलो सो वओगतं बहुविधं-अणेगप्पगारं अयाणमाणो जइ दिवसं पइ न किंचि भासइ ‘तहावि न वयिगुत्तयं पत्तो’त्ति, जो भासाणुणदोसवि-हिण्णू तस्स इमो गुणो भवद्, तंजहा- ‘वयणविभत्तीकुसलो०’ ॥ २९३ ॥ गाथा, जो कोइ वयणविभत्तीकुसलो वओगतं बहुविधं अणेगप्पगारं जाणमाणो जइ दिवसमणुवद्धं भासइ तहावि वयगुत्तयं पत्तोत्ति । इयाणि सुचाणुगमे सुत्तमुच्चोरयव्वं, अक्खलियं अभिलियं जहा अणुयोगदारे, तं च सुत्तं इमं-‘चउण्हं खलु भासाणं, परिसंखाय पन्नवं । (दो) दुण्हं तु विणयं सिक्खे, दो न भासिज्ज सच्चवसो’(२३८)सिलोगो, चतुर, प्रातिपदिकः, ‘षष्ठी शेषे’ विभक्तिर्भवति शेषे कारके, तस्या बहुवचनं आम्, षष्ठी चतुर्थीश्वेतिलुद् आगमः परगमनं चतुर्णां, भाषाणां चतुर्णां, खलुनिपातः परकीयमर्थमद्योते, (मारुयाति) खलुसदो वचन- विभक्तेः फलं ॥२४२॥
	⊗ अत्र सप्तमं अध्ययनस्य सूत्र (गाथाः) आरभ्यते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८- ३३४ दीप अनुक्रम [२९४- ३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो ॥२४६॥ विविहं अणेगप्पगारं वज्जए विवज्जएत्ति । इयाणि भोसरक्खणनिमित्तं इमं भण्णइ-‘ वितहंपि तहा मुत्तिं०’ ॥२८२॥ सिलोगो, वितहं नाम जं वत्थुं न तेण सभावेण अत्थि तं वितहं भण्णइ, मुत्ती सरीरं भण्णइ, तत्थ पुरिसं इत्थिणेवत्थियं इत्थि वा पुरिसने-वत्थियं दट्ठुण जो भासइ-इमा इत्थिया गायति णच्चइ वाएइ गच्छइ, इमा वा पुरिसो गायइ णच्चइ वाएति गच्छइत्ति, अविसदो संभावणे, किं संभावयति ?, जहा पुरिसं जो जुवाणं बुद्धिणेवत्थं बुद्धं भण्णइ, इत्थि वा जोव्वणत्थं बुद्धिणेवत्थियं बुद्धितं भण्णइ सोवि वितहा मुत्ती भण्णइ, एयं संभावयति, ‘तम्हा सो पुट्ठो पावेण’ ति, तम्हा वितहमुत्तिभासणाओ सो भासओ पुट्ठामेव पुट्ठो, गच्छा ताणि अक्खराणि उच्चारियाणित्ति, जइ ताव सो एत्तभावमवि भासमाणो पावेण पुट्ठो, किं पुण जो जीवोववाइयं मुसं वदेति?, मुसावायवज्जणहिगारे इमं भण्णइ ‘तम्हा गच्छामो० ॥ १८३ ॥ सिलोगो, जम्हा वेसविरुद्धमवि आलवंतस्स दोसो भवइ तम्हा साहुणा ण एगंतेण एवं भासियव्वं, जहा-‘गच्छामो वक्खामो’ ति, ‘ निज्झमत्तु (च्चमत्त) णो गुरुमु य बहुवयणम-विरुद्धं ’ ति, अहवा न एगस्स साहुणो निकारणे कप्पइ गंतुं तेण बहुवयणं उवात्तामिति, तत्थ गच्छामो नाम जहा अहं अण्णं अमुकं गामं अवसस्सं गमिस्सामि एवमादि, वक्खामो नाम जहा कल्ले अमुगं वयणं भणीहामि मग्गीहामो वा, एवमादि, अमुगं वा कज्जं एवं भविस्सइ, ‘ अहं वा णं करिस्सामि ’ नाम जहा कोइ किंचि तारिसं करेति सो न एवं वत्तवो, जहा-अच्छाहि तुम कल्ले मुहुत्ते वा करिस्सामि, जहा संथारगं वज्जमाणं पासित्ता कोइ भणेज्जा-किं संथारगं वावि(वज्जसि)अहमेयं कल्ले मुहुत्ते वा बंधीहं, एवं लोगं ते करिस्सामि, वेयावच्चं ते करिस्सामि, एवमादि, ‘ एसो वा णं करिस्सइ ’ गाम जहा कोयि किंचि तारिसं करेइ तं करेत्तं अण्णो भणिज्जा-मा एयं तुमं करेइ, एसो अमुगो कल्ले करिस्सतीति, एयाणि ण भाणितव्वाणि, किं कारणं ?, भाषा- धिकारः ॥२४६॥

आगम (४२)	प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८- ३३४ दीप अनुक्रम [२९४- ३५०]	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...] मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ॥२५२॥ तिथि एसु जइ ताव कारणे ण तिथि ततो अब्बावारो चेव साहूणं, (अह पओयणं) किंचि भवइ, तं पंथं वा ण जाणइ उवदि सइ जाहे वा तेसि पाणाणं इत्थीपुरिसविसेसे अजाणमाणो वा णो एवं वदेज्जा, जहा-एसा इत्थी अयं पुरिसोत्ति, पायसो य लोगो अवि- सेसियं आलवेइ, अभिहाणेण भाणियच्च जहा गोजातियाइ चरंति कागजातिया वा हरंति, एवं महिसपसुआदिवि भाणियच्चा । आह--जति एवं तो कम्हा एगिंदियविगलिंदिएसु सइ ण पुंसगभावे इत्थिणिहेसो पुरिसनिहेसो य दीसइ ?, तत्थ एगिंदिएसु पुढविकाए पासाने पुरिसणिहेसो, जा सा महिया इत्थिणिहेसो, आउकाएवि करओ पुरिसनिहेसो उस्सा इत्थीनि- हेसो, अग्गिकाएवि अग्गी पुरिसणिहेसो, जाला इत्थिणिहेसो, वाउकाएवि वाओ पुरिसनिहेसो वाउलाए इत्थिणिहेसो, वणस्सइ- काएवि पुरिसणिहेसो जहा णग्गोहो उनिरो, इत्थिनिहेसोऽवि जहा सिंसवा अंबिलिया पाडला एवमायि, वेइंदिएसु पुरिसणिहेसो जहा संखो संखाणओ, इत्थिणिहेसो जहा असुगा सिप्पा एवमादि, तेइंदिएसु पुरिसणिहेसो जहा मक्कोडा, इत्थिणिहेसो जहा उवचिका पिपीलिका एवमादि, चउरिंदिएसु पुरिसणिहेसो जहा भमरो पंतगो इत्थिणिहेसो जहा मधुकरी मच्छिया एवमादि, आयरिओ आह- सइविह नपुंसगभावे जणवयसच्चेण ववहारसच्चेण य एस दोसपरिहारओ भवइत्ति, पंचिंदिएसु पुण सतिवि एवमादि जणवयसच्चा- दीहिं तथावि जाईओ चेव वत्तच्चा, कहं ?, गोवाल्लादीणमचित्तिया भवेज्जा, जहा एते ण सुदिट्ठधम्मो जम्हा इत्थिपुरिसविसेसमजाणाणा एगयरनिहेसं कुवंति एवमादि दोसा भवंतित्तिकाऊण पंचिंदियाण एगतरनिहेसं एस पडिसेहो सच्चयत्तेण कीरइत्ति, किंच'तहेष माणुसं पक्खिं पसुं' ॥२९९॥ सिलोगो, जहेव हिट्ठा भणितानि अवयणिज्जाणि वयणिज्जाणि य तथा इमाणि न भाणि- यच्चाणि, तत्थ मनुस्सा पक्खिणो पसिद्धा, पसुगहणेण य महिसअयएलगादीणं गइणं कतं, सिरीसवगहणेण अयगरादीणं, एते भाषा- धिकारः ॥२५२॥
-------------------------------	--	--

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८- ३३४ दीप अनुक्रम [२९४- ३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ॥२५३॥ मणुस्साइ परिवूढकाये दट्टूण महप्पाणा पासित्ता णो एवं वत्तव्वं, जहा-धूलो अयं मणुस्सो धूलो महिसो धूलो पक्खी धूलो अइ- करो, तथा पमेइलो मणुस्सा, ‘पमेइलो’ नाम अतीव भेदो जस्स सो पमेइलो महिसो, एवं पक्खी अइकरो, वहणिज्जो पुरिसो वहणिज्जो महिसो, किंच-‘तहेव गाओ दुज्झाओ’ ॥३०१॥ सिलोगो, ‘तहेव’ ति जहा हेट्ठिल्लाणि अवत्तव्वाणि तहेव इमाणिवि, तत्थ गोगहणेण महिसीउट्टमादीण गहणं कत्तं. दोहणिज्जा दुज्झा, जहा गावीणं दोहणवेला वट्टइ, दमणीया दम्मा, दमणपयोग्मात्ति वुत्तं भवइ, गाओ जे (रहजोग्मा) रहमिव वा धावन्ति ते गोरहगा भण्णन्ति, अहवा गोयरगा य पसवसमण्णा भवन्ति, वाहिमा नाम जे सगडादीभरसमत्था, ते य साधू दट्टु णो एवं भणेज्जा, जहा पत्ता एते सगडादिसु वाहेउन्ति, रथजोग्मा णाम अहिणव- जोव्वणत्तणेण अप्पकाया, ण ताव बहुभारस्स समत्था, किन्तु संपयं रहजोग्मा एतेत्ति, तेसु इमे दोसा भवन्ति, तत्थ गावीसु जहा साधुणा मणियन्ति गावीओ दुहेज्जा, ततो अधिकरणपवत्तणादि दोसा भवन्ति, दम्मेसुवि साह जाणन्ति एवमादि, वाहिमावि सगडादिसु सभरेसु णिजुंजिज्जा, रहजोग्मावि रहेसु वहणिज्जो, पक्खा वहणिज्जो अइगिरो, तथा पाइगो एस मणुस्सो, पागपत्तोत्ति वुत्तं भवइ, तथा पागपायोगो आयगरो, तत्थ मणुस्सो अप्पत्तियं करेज्जा, अक्कोसेज्ज वा, लुण्णडहणाणि वा करेज्जा, एवमादि, महिसादि तिरिया तस्स वयणं सोऊण मंसादीणं अट्टाए मारेजेज्जा, न केवलमेतं धम्मविरुद्धं, किन्तु लोगविरुद्धमवि, कहं ?, तमेरिसं भासमाणं सोऊण लोगस्स चिन्तिया खवेज्जा, जहा किमेतस्स पव्वतियस्स एयारिसाए अहिट्ठोहाए वयाए निसिरियाएत्ति?, जहा य पुण कारणं भवेज्जा ताहे इमेणप्पगारेण भणेज्जा, जहा- ‘परिवूढात्ति णं बूआ’ ॥ ३०० ॥ सिलोगो, पओयणे उप्पण्णे परिवूढं वा उवचितदेहं वा संजातदेहं वा पाणितदेहं वा पीणितदेहं वा आलवेज्जा, तथा कस्सइ साधुणो किंचित् तारिसं भाषा- धिकारः ॥२५३॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८- ३३४ दीप अनुक्रम [२९४- ३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २५५ ऊहाडिज्जन्ति, जंतलट्टी पसिद्धा, णामी सगडरहार्इण भवेति, गंडिया णाम सुवण्णगारस्स भण्ह जत्थ सुवण्णगं कुट्टेइ। किंच- ‘आसणं सयणं जाणं’ ॥३०६॥ सिलोगो, आसणं आसंदग्गादी तप्पायोगं कट्ठं एतेसु रुक्खेसु होज्जा, सयणं-पल्लंकादि तप्पा- ओगं कट्ठं एतेसु रुक्खेसु होज्जा, जाणं णाम जुग्गादि, तप्पायोगं कट्ठं एतेसु रुक्खेसु होज्जा, तथा उवस्सयपायोगं वा किंचि कट्ठं एतेसु रुक्खेसु होज्जा. तत्थ उवस्सयो-पडिस्सयो, अहवा उवस्सए फलिहाइ कीरइ, सच्चवं वा आसणं उवस्सयो भण्हइ, एवमादि ‘भूओवघाइणिं भासं’ भूयाणि उवहम्मंति जाए भासाए भासियाए सा भूतोवघाइणी भण्हइ, तं भूओवघाइणीं भासं ण भासेज्जा पण्वन्ति, तत्तण्णिवासिणी वा देवया रूसेज्जा, जो वा तस्स वणस्स सामी सो वा रूसेज्जा, साहु वा (णा) एस रुक्खो पसंसिओ नियमा लक्खणविउत्तिकळाण सो चेव साहु घेप्पेज्जा, एवमादि, रुक्खे जया आलवेज्जा ताहे इमेहि उवा- हि. तं-‘तहेव गंतुमुज्जाणं’ ॥३०७॥ सिलोगो, ‘तहेव’ चि जहा हेट्ठिल्लाण पंडगाईणं मुसावायो भणिओ सेसं कण्ठ्यं, सो य उवायो इमो- ‘जाइमंता इमे रुक्खा’ ॥ ३०८ ॥ सिलोगो, जाइमंता नाम जाए जातीए उत्तमाए जाइमंता भण्वन्ति, बहूवे जत्थ रुक्खप्पगारा अत्थित्ति, इमेत्ति नाम जे पच्चक्खेण दीसंति, दीहा जहा नालिएरतालमादी, वट्ठा जहा असोगमाई, महालया नाम वडमादि, अहवा महसदो बाहुल्ले वट्ठइ, बहूणं पक्खिसिंघाण आलया महालया, ‘पयायसाला’ अतीव जाताणि सालाणि जेसि ते पयायसाला, अणेगप्पगाराणि ‘बिडिमा’ बिडिमाणि जेसि ते बिडिमा, तत्थ जे खंधओ ते साला भण्वन्ति, सालाहितो जे णिग्गया ते बिडिमा भण्वन्ति, दरिसणिज्जा वा एते रुक्खात्ति भणेज्जा, ते य निककारणे न कप्पंति भासिऊण, जाहे पुण कारणं किंचि भवेइ जहा साहवो पत्ता, कारणेण इमं भणेज्जा, जहा अम्हे एतेसि जाइमंताणं हेट्ठा विस्समामो, एतेसिं भाषा- धिकारः २५५

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८-३३४ दीप अनुक्रम [२९४-३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदशवैकालिकचूर्णम् ॥२५८॥ भणिए एवं ण विभासइ, किमेस भणइत्ति?, सो पुण सेहस्स वा तं दाएज्जा, जहा एस पावकारिणो विपाकोत्ति, अहवा एतेण पहेण पणियट्ठो णिज्जइ, जणाउले एस पहे ण एतेण गंतव्वं एवमादि, जत्थ आवगाणं तित्थाणि पुच्छिज्जंति तत्थ भाणितव्वं-जहा बहुसमाणिच्चि, काणि समाणि तित्थाणि काणि विसमाणिच्चि भाणियच्चाणि तहा स दूरओ परिवज्जति, मा एयासु णदिसु णिउज्जेज्जा, तओ परितावणादि दोसा हवेज्जत्ति काऊण न एवं भासिज्जा पण्वंति, कारण पुण एवं भासेज्जा, ‘तहा नईओ पुण्णाओ’ सिलोगो, (३१५) तहासहो पुव्वभणिओ, नदीओ पसिद्धाओ, पूरागयाओ पुच्चाओ, काएण तरिज्जंतिच्चि कायनिज्जाओ, अण्णे पुण एवं पढंति, जहा-कायपेज्जंति नो वदे, काआ तडत्था पिबंतीति कायपेज्जातो, नावाहिं तारिमाच्चि नावातारिमा, तडत्थिएहिं पाणीहिं पिज्जंति पाणिपिज्जाओ, तत्थ इमे दोसा, तं- नदीओ पुच्चाओत्ति सोऊण कारणेहिं पधाइया गिहित्था णियत्तेज्जा तओ कट्टादीणं वा उदीरणं कुज्जा कायण, एया तारिमाओत्ति सोऊण णियत्तिउकामावि न नियत्तेज्जा, तंजहा- ‘बहुवाहडा अगाहा’ ॥ ३१६ ॥ सिलोगो, ‘बहुवाहडा’ नाम पायं सोभणियातो भण्णंति, बहु अगाहाओ वा भणेज्जा, बहुसलिलाओ भणेज्जा, बहुउप्पिलोदगा वा भणेज्जा, ‘बहुउप्पिलोदगा’ नाम जासिं परनदीहिं उप्पीलियाणि उदगाणि, अहवा बहुउप्पिलोदओ जासिं अहभरियत्तणेण अण्णओ पाणियं वच्चइ, बहु वित्थिरियं जासु नदीसु उदगं ताओ बहुवित्थिडो-दगाओ भण्णंति, एवं पक्खं भासेज्जा, जइ पुण भणइ-न याणामि ताहे उड्डाहं करंति, पउसेज्ज वा जहा मुसावादी एसोत्ति, इदाणि चैव उत्तिण्णो तहवि भणइ न जाणामिच्चि एवमाइ बहवे दोसा भवंतीति, तम्हा बहुवाहडा भणेज्जा, तमवि तुरियमवक्क-मंतो भणेज्जा, जहा ण विभावेइ किमवि एस भणत्तिच्चि। किंच- ‘तहेव सावज्जं जोगं’ ॥ ३१७ ॥ सिलोगो, तहसहो भाषः- धिकारः ॥२५८॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [७], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [२७८-३३४/२९४-३५०], निर्युक्तिः [२७१-२९३/२६९-२९२], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा २७८- ३३४ दीप अनुक्रम [२९४- ३५०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ८ आचार प्रणिधौ २६५ न स्वाभिप्रायेणेति । इदानीं नया-‘णायंमि गणिह्यन्वे’गाहा, ‘सन्वेसिपि नयाणं बहुविहवत्तन्वं निसामित्ता’गाहा, पूर्ववद् ॥ ॥ वाक्यशुद्ध्याध्ययनचूर्णिः समत्ता ॥ एवं सो भासासमिओ धम्मं कहेइ, तो तस्स सोऊण जइ कोई पव्वएज्जा ताहे तस्स इमं आयारपणिधिं उवइसेज्जा, अहवा तेण धम्मं कहयंतेण अपसत्थपणिधानं वज्जयंतेण पसत्थेण आयारपणिधाणेण कहेयव्वंति, एतेणभिसंबंधेणागतस्स अज्झयणस्स चत्तारि अनुयोगदाराणि वत्तव्वाणि, जहा आवस्सए, णवरं इह णामनिप्फन्नो भण्णइ, सोय णामणिप्फणो दुविधो, तं--आयारो पणिही य, तत्थ पढमं आयारो भण्णइ—‘ सो पुट्ठि उड्डिट्ठो ’ ॥ २९५ ॥ गाथापुव्वदं, जहा जो खुड्डियायारए भणिओ एत्थ सो चेव अहीणाइरित्तो भवत्ति। इयानि पणिधी भण्णइ, सोय चउव्विहो, तंजहा--णामपणिही ठवण०दव्व०भावपणिहीत्ति, णामठवणाओ गताओ, दव्वपणिही य इमेण गाथापच्छदेण भण्णइ--‘ दुविधो य होइ पणिधी ’ सो इमो, तं--‘दव्वे निहाणमाई० ’ ॥ २९६ ॥ गाथा, पुव्वदं, दव्वपणिधी जहा णिहाणगं, पणिहि णाम निक्खिवियंति वा पणिहाणंति वा एगट्टा, आदिगहणेण अब्बाणिवि गहियाणि मायापक्खित्ताणि दव्वाणि, दव्वपणिधी जहा पुरिसो आयापच्छादणनिमित्तं इत्थिवेसं काऊण णासेज्ज वा पविसेज्ज वा, जहा मायाकारो चक्खुमोहणं काऊण सव्वमेकतरं व पक्खिवइ एवमाइ दव्वपणिधी, भावे इंदिअनोइंदिअ पच्छदं, भावपणिधी दुविधो, तंजहा--इंदियपणिधी नोइंदियपणिधी य, इंदियपणिधी दुविधो-पसत्थो अप्प-सत्थो य, तत्थ पसत्थो इंदियपणिधी इमो--‘ सहेसु अ रूवेसु अ० ’ ॥ २९७ ॥ गाथा, सोयचक्खुघाणजीहाफासाणं पंचव्हं इन्द्रियादि- प्रणिधिः २६५
	अध्ययनं -७- परिसमाप्तं अध्ययनं -८- ‘आचार प्रणिधि’ आरभ्यते

[illegible]

आगम (४२)	"दशवैकालिक"- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
	अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] "दशवैकालिक" निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५- ३९८ दीप अनुक्रम [३५१- ४१४]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ८ आचार प्राणिधौ ॥२७१॥  आचार- प्राणिधि- रूपक्रमः ॥२७१॥ नामनिष्फण्णो गओ, इदाणि सुत्ताणुग्गे सुत्तमुच्चायेस्वं अक्खलियं जहा अणुयोगहारे, तज्झा--' आयारप्पणिहि लद्धं ।' ३३५ सिलोगो, 'अभ्रवभ्रमभ्रचर' गत्यर्थाः, चरधातोः, अस्य धातोः आङपूर्वस्य 'पदरुजविशस्पृशो घञि'ति (पा. ३-३-१६) घञ् प्रत्ययः, अकारः 'अचो ञ्णिती' ति (पा. ७-२-११५) वृद्धर्थेः, घकारः 'च्चोः कुर्यान्धतो' रिति (पा. ७-३-५२) विशेषणार्थः, धातोः 'अत उपधाया' (पा. ७-२-११६) वृद्धिः, आचर्यतेऽसावित्याचारः, तत्त्व आयारो पुर्व्वभ- णिओ, डुघाब् धारणपोषणयोः, अस्य धातोः प्रपूर्व्वस्य निपूर्व्वस्य च 'उपसर्गे घोः कि' रिति (पा. ३-३-९२) उपपदे ' घुसंज्ञ- केभ्यः धातुभ्यः किप्रत्ययो भवति, ककारादिकारमपक्रुष्य ककारः 'किङ्सति चे' ति लोपः, 'आतो लोपइति किङ्सति चे' ति (पा. ६-४-६४) आकारलोपः, 'नेर्गदनदपदपतपदधुमास्यतिहन्तिवातिद्रातिप्सातिवपतिवहतिसाम्यतिचिनोतिदेगिधु चे'ति णित्वे, तस्य उपसर्गस्थानिमित्तात् नकारो भवति परगमनं च, प्राणिधीयते प्राणिधिः, प्राणिधिरभिहितः आचारे प्राणिधिः आचारप्राणिधिः तस्मिन्नाचारप्राणिधौ अध्यवसायः, 'डुलभश् प्राप्तौ' धातुः, अस्य धातोः 'समानकर्तृकेषु तुमुन् प्रत्ययः (पा. ३-३-१५८) अनुबन्ध लोपः, 'आर्द्धधातुकस्येड् बलादे (पा. ७-३-३५) रिट् प्राप्तः 'एकाचनुपदेशोऽनुदात्ता' दिति (पा. ७-२-१०) प्रतिषिद्धः, 'क्षप्तस्तथोधोऽघः' इति (पा. ८-२-४७) तकारस्य घकारः, 'झलां झसोऽन्ते' इति (पा. ८-२-३९) जस्त्वेन दकारलोपः, 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो'रिति (पा. २-४-७१) सुप् लठ् (लब्धुं) प्राप्तये, यद् 'प्रकारवचने थल्' (पा. ५-३-२३) 'प्राग् दिशो विभक्त' रिति (पा. ५-३-१) विभक्तिसंज्ञा, सत्यां विभक्तिसंज्ञायाम् ' त्यदाद्यत्वं (पा. १-२-१०२) अतो गुणः परपूरत्वं, तथा 'डुकृन् करणे' धातुः, अस्य धातोः 'तव्यचन्यानौर' इति (पा. ३-१-६६) तव्यप्रत्ययः, 'सार्व-
	*** अत्र अष्टमं अध्ययनस्य सूत्राणि आरब्धाः

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५-३९८ दीप अनुक्रम [३५१-४१४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ. ८ आचार प्राणिधौ: ॥२७४॥ कार्मपकृष्य ‘झोऽन्त’ इति (पा. ७-१-३) अन्तादेशः, अन्तशब्दादकारः उच्चारणार्थः, ‘एरु’ इति (पा. ३-४-८६) इकारस्य उकारः, ङित्शित्सार्वाधातुकसंज्ञायां ‘सार्वधातुके यकि’ति (पा. ३-१-६७) कर्त्तरि शप्ति प्राप्ते ‘स्वादिभ्यः ऋरिति’ (पा. ३-१-७३) ऋप्रत्ययः ‘श्रुवः श्रु चे’ त्ययं (पा. ३-१-७४) श्रादेशः, मुणः किति प्रातिषेधः, ‘इणो-याणि’ (पा. ६-४-८१)-त्यनुवर्त्तमानो ‘हुश्रुवोः सार्वधातुके’ इति (पा. ६-४-८१) यणादेशः, उकारस्य वकारः परगमनं शृण्वंतु, तामाचारप्राणिधिं कथ्यमानां भवन्तः मे शृण्वन्तु, तत्थ आचारप्राणिधी सुत्तेणं पूर्वं आचारो भण्णइ, तत्थ पढमं चरित्तायारो भण्णइ, चरित्तायारेण गहिण्ण दंसणणाणायारा गहिया चैव, कहं !, जम्हा ‘नादंसणस्स नाणं’ गाथा, तत्थ पाणातिवातवेरमणत्थामिदं भण्णइ, तं-‘पुढविदगं’ ॥३३६॥ सिलोगो, पुढवि आउ अगणिमारुअ वणरुक्खगहणण रुक्खस्स गुच्छादिदुवालसपगारस्स वणप्फइणो गहणं, सबीयगहणेण मूलकन्दादिबीयपज्जवसाणस्स पुच्चभणितस्स दसपगारस्स वणप्फतिणो गहणं, एते पुढविदगादि पंच काया तस्स य ईरियावहियादि पाणा जीवत्ति णायच्चा, इतिसदो परिसमत्तीए वट्ठइ, जहा ण एतेहिं छहिं काएहिं वतिरित्तो अण्णो कायो अत्थित्ति, वुत्तं नाम भणियंति वा वुत्तंति वा एगट्ठा, महरिसिगहणं सत्थगोरवानिमित्तं कयं, जहा अरहंतेहिं एते पुढविमदि छज्जीवनिकाया भणिया, णाहं अप्पणो इच्छाए भणामित्ति, एतेसु पुढविमादिएसु छज्जीवनिकाएसु इमं साहुणा ण कायव्वंति. ‘तेसिं अच्छणजोएणं’ ॥ ३३७ ॥ सिलोगो, तेसिं नाम जे एते भणित्ति, अकारो पडिसेहे वट्ठइ, छणसदो हिंसाए वट्ठइ, जोगो मणवयणकाइओ तिविधो, ण छणजोगो अच्छणजोगो तेण अच्छणजोएण निव्वग्घाएण होअव्वयं भिक्खुणा इति, ते य जीवे इमेहिं मणवयणकाइएहिं णो सयं हिंसेज्जा, ‘एगम्महणे गहणं तज्जातीयाण’ भित्तिआउं पृथ्वी- विरतिः ॥२७४॥
	*** प्राणातिपात विरते: वर्णनं मध्ये पृथ्वीकायादिनाम् विरतिः निरूप्यते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथाः [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५- ३९८ दीप अनुक्रम [३५१- ४१४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ८ आचार प्राणिधौ ॥२७५॥ परेणावि न हिंसेज्जा, हिंसतेपि अण्णं न समणुजाणेज्जा, एवं च कुच्चमाणस्स संजतत्तं भवति । इयाणिमेतेसिं छण्हं जीवनिका- याणं पचेयं वेरमणं भण्णइ, तत्थ पुढविक्कायवेरमणं पुव्वं भण्णइ, तं- ‘पुढविं भित्तिं’ ॥ ३३८ ॥ सिलोगो, तत्थ पुढविगहणे लेद्धुंगादिविकप्परहियाए पुढविए गहणं कयंति, भित्तमादि णदितडीतो जवोवडलिया सा भित्ती भन्ति, सिला नाम जो विच्छिण्णो पासाणो सा सिला भण्णइ, लेळू लेद्धुओ भण्णइ, एयाणि पुढविमादीणि गो भिंदेज्जा, णो व संलिहेज्जा, तत्थ भिंदणं दुहा वा तिहा वा अणेगहाकरणं भिंदणं भण्णइ, संलिहणं अंगुलीसलागादीहिं, तत्थ अच्चिआए तन्निसिय्या विराधिज्जेति, सच्चिआए पुढवी जीवा तण्णिस्सिया य विराहिज्जेति, तिविहेण करणजोएण संजए सुसमाहिए, अप्पणा णो भिंदणं संलिहणं वा कायव्वंति । किंच- सुद्धपुढविए ण मिसिए (सुद्धपुढवीं न निसीए) ॥ ३३९ ॥ सिलोगो, सुद्धपुढवी नाम न सत्थोवहता, असत्थोवहमावि जा णो वत्थंतसिया सा सुद्धपुढवी भण्णइ, तीए सुद्धपुढवीए न निसीएज्जा, ‘एगग्गहणे गहणं वज्जातीयानं’मिति- काउं ठाणवियज्जणादीणिभि गहियाणि, तहा ससरक्खंमि जमासणं पीढमादी, तंमि ससरक्खे ण वट्टति णिसिउं उरूं, ससरक्खं नाम जंमि सच्चित्तरतो वाउद्धुतो तमासणं ससरक्खं भण्णइ, तत्थ सचित्तपुढवीए गायउण्हाए विराधिज्जइ, अच्चिआए एक्कए पति(मायआ)सण्यायी गुंडिज्जेति, हेड्डिल्ला वा तण्णिस्सित्ता सत्ता उण्हाए विराधिज्जेति, ससरक्खाए सच्चित्तरयो विराधिज्जेति- त्तिकारुण सुद्धपुढवीमादिसु पमज्जिऊण निसीइज्जेति जाणिऊण जहा एसो अचित्तजयणा, अगणिमाई उव्वहस्स व जस्स सो परिग्गहो तस्स उग्गहं अणुजाणावेऊण निर्सीदणादीणि कुज्जा इति पुढविक्कायविरत्ती मया । इयाणि आउक्कायविरत्ती भण्णइ, तं- ‘सीओदगं न सेविज्जा’ ॥ ३४० ॥ सिलोगो, सीतोदगमहणेण सचेतणस्स उदयस्स गहणं कवं, सिला करया अप्काय- विरत्तिः ॥२७५॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथाः [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५-३९८ दीप अनुक्रम [३५१-४१४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ८ आचार प्रणिधौ ॥२७९॥ सच्चपरियाएहि छउमत्थो सक्केइ उवलभिउं, किं पुण जो जस्स विसयो ? तेण सच्चेण भावेण जाणिऊणंति, संजए साधू ‘अप्पमत्तो जए निच्चं’ति तत्थ अप्पमत्तो जए नाम निहाकसायाईहिं पमादविवज्जओ अप्पमत्तो, जए नाम मणवयणकाय- जोगेहिं तेसिं सुहुमाण रक्खणत्थं पयत्तमंतो, णिच्चं णाम सच्चं कालं, ‘सत्तिवदिअसमाहिं’ नाम सदादिसु विसएसु अपडि- वज्जमाणो। इयाणिं सुहुमाण धूलाण य जीवाणमणुपालणत्थमिदमुच्यते- ‘धुवं च पडिलेहिज्जा’ ॥ ३५१ ॥ सिलोगो, धुवं णाम जो जस्स पच्चुवेक्खणकालो तं तंमि णिच्चं पडिलेहिज्जा, जोगसा नाम सति सामत्थे, अहवा जोगसा णाम जं पमाणं भणितं ततो पमाणाओ ण हीणमहितं वा पडिलेहिज्जा, जहा जोगरत्ता साडिया पमाणरत्तात्ति बुत्तं भवइ तहा पमाणपडिलेहा जोगसा भण्णइ, पायग्गहणेण दारुअलाउयमद्वियपायाणं गहणं, कंबलगहणेण उन्नियसोत्तियाण सच्चेसिं गहणं, सेज्जाओ वसइओ भण्णइ, तमवि दुकालं तिकालं वा पडिलेहिज्जा, उच्चारभूमिमवि अणावायमसंलोयादिगुणेहिं जुत्तं गयमाणो गाम- नगरादिसु पडिलेहिज्जा पाए पविसे, जाहे उच्चारभूमी ताहे पडिलेहिय पमज्जिय वा पविसिज्जा, तहा संथारभूमिमवि पडिलेहिय पमज्जिय अत्थुरेज्जा, तहा आसणमवि पडिलेहिज्जा उवविसेज्जत्ति । किंच- ‘उच्चारं पासवणं’ ॥ ३५२ ॥ सिलोगो, उच्चार- पासवणखेलसिंघाणगा पसिद्धा, जल्लियं नाम मलो, णो कणइ उवट्टेउं, जो पुण भिम्हकाले पस्सेयो भवति, अण्णंमि गिलाणादि- कारणे मलत्थे के(ओ क)रिसो कीरइ तस्स तं गहणं कयंति, एवं वा उरादी अच्चं वा सरीरावयवं आहारोवकरणादि वा, फासुयं ठाणं ‘पडिलेहिज्जा परिट्टवेज्ज संजए’ ति, एस उवस्सए विधी भणिओ । इदाणिं भिक्खागतस्स भण्णइ, तं- ‘पविसिच्चु परागारं’ ॥ ३५३ ॥ सिलोगो, अगारं गिहं भण्णइ, परस्स अगारं परागारं, साधू पविट्ठो भायणट्ठं अच्चेसु वा कारणेसु पवि- प्रति लेखनादि भिक्षागत- विधिः ॥२७९॥
*** अत्र प्रतिलेखना आदि विधिः उपदर्शयते	

[illegible]

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५-३९८ दीप अनुक्रम [३५१-४१४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ८ आचार प्रणिधौ ॥२९३॥ केव भवंति, अमणुक्ता वा अच्चंतममणुक्ता एव भवंति, एवं रूपादिसुवि भाणियव्वं, अतो ‘पोग्गलाणं तु परिणामं’ ॥३९४॥ सिलोमो, पोग्गला पसिद्धा, परिणामो भावंतरगमणं, तेसिं पुव्वभणियाणं गहणं कयं, णच्चत्ता णाम णाऊणंति, जहा तहा णाम जहा तेसिं वण्णमंभादीणं परिणामो जिणेहिं भणिओ तहा णाऊणं, ‘विणीयतण्हो विहरेज्जा’ तेसु सदादिसु विसएसु तण्हं विणेऊण विहरेज्जा, ‘सीईभूएण अप्पणा’ इति, तत्थ सीओ विज्झाओ भण्णइ, जहा अगणी सीतो अदाहगो भवइ, विणीयतण्हो विहरेत्ति, कोहादीहिं सीतभूअप्पणा विहरियव्वंति । आह-केवइयं विहरियव्वं?, भण्णइ-‘जाए(इ)सद्धाइ निक्खंतो’ ॥ ३९५ ॥ सिलोमो, ‘जाए’ ति अणिदिट्ठाए गहणं, सद्धा परिणामो भवइ, निक्खंतो णाम निक्खंतोत्ति वा पव्वइओत्ति वा एगट्ठा, ‘परियायट्ठाणं’ णाम पव्वज्जाठाणं, उत्तमं णाम पधाणं, तमेव अणुपालिज्जत्ति, तमेव परिआयट्ठाणमणुपालेज्जा, तं च परिआयट्ठाणं मूलगुणा उत्तरगुणा य, ते गुणा अणुपालेज्जा, ‘आयरिअसंमओ’ ति आयरिया नाम तित्थकरगणधराइ तेसिं संमए नाम संमओत्ति वा अणुमओत्ति वा एगट्ठा । इयाणि आयरपणिधीए फलं भण्णइ-‘तवं चिमं संजमजोगयं च’ सिलोमो, तवंपि संजमणं, जो खुहपिवासाइ तवो भणिओ तं तवं, पुढविकायादिसंजमजोगो तं च, पंचविहसज्झायजोगं च सदा अहिट्ठए, आह-णणु तवगहणेण सज्झाओ गहिओ?, आयरिओ आह-सच्चमेयं, किन्तु तवभेदोपदरिसणत्थं सज्झायगहणं कयं, सो एवं तवसंजमस्स य जोगजुत्तप्पा ‘सूरे व सेणाइ समत्तमाउहे, अलमप्पणो होइ अलं परेसिं’ ति, जहा कोई पुरिसो चउरंगवलसमन्नागताए सेणाए अभिरुद्धो संपन्नाउहो असं (सूरो अ) सो अप्पाणं परं च ताओ संगामाओ नित्थारेउन्ति अलं नाम समत्थो, तहा सो एवंगुणजुत्तो अलं अप्पाणं परं च इंदियकषायसेणाए अभिरुद्धं नित्थारेउंति । तहा ‘सज्झायसज्झा- विषयवर्जनं ॥२९३॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [८], उद्देशक [-], मूलं [१५...] / गाथा: [३३५-३९८/३५१-४१४], निर्युक्तिः [२९५-३१०/२९३-३०८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३३५- ३९८ दीप अनुक्रम [३५१- ४१४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ८ आचार प्रणिधौ ॥२९४॥ णरतस्स० ' ॥ ३९७ ॥ सिलोगो, सज्झाओ चैव सज्झाणं तंमि रतस्स, अहवा सज्झाए य ज्ञाणे य सज्झायज्झाणे य रयस्स- त्ति, ' ताइणो ' ताथतीति ताया तस्स ताइणोत्ति, अपावो भावो जस्स सो अपावभावो तस्स अपावभावस्सत्ति, तवो बारस- विहो तंमि रतस्स गहणं, सित्ति साहुणो निहेसो, मलंति वा पार्वति वा एगट्ठा, पुव्वि कयं पुरेकयं तस्स पिहियासवस्स नवं ण उवचिज्जइ, पुरेकडं विसुज्जइ, ' समीरियं रूपमलं व जोइणा ' (जहा रूपमलं जोइणा) समीरियं भवइ, तत्थ जोती अगणी भणइ, समीरियं नाम सामं, अगणी मलावकरिसणसमत्थेण ताव तं ' से तारिसं ' (स)० ॥३९८॥ सिलोगो, सेत्ति साधुणो निहेसो, तारिसो जो इदाणि हेट्ठा तवसंजमादिजुत्तप्पा भणिओ, दुक्खं सारीरं वा सहतीति दुक्खसहे, सोतादीणि जियाणि इंदियाणि जेण सो जिइदिए, सुतं दुवालसंगं गणिपिडगं तेण जुत्तेण, तस्स ममत्तं कत्थं भवतीति अतोऽममे अकिंचणे, किंचणं चउव्विधं तं०-णाम० ठवण० दव्व० भाव० मेदात्, तत्थ दव्वकिंचणं हिरण्णादि, भावकिंचणं मिच्छत्तअविरतीमादि, तं दव्वकिंचणं भावकिंचणं च जस्स णत्थि सो अकिंचणो, एवंगुणजुत्तो साहू विमुच्चइ पुव्वकडेण कम्मणत्ति, अट्ठविधेण कम्मणा विसेसेण मुच्चइ विमुच्चइ । कहं ? जहा- ' कसिणव्वभपुडावगमे व चंदिमि ' ति कसिणाणं अब्भाणं पुडं कसिणव्वभ- पुडं कसिणव्वभपुडमुक्को जहा सरए ससी सोभति सोऽवि कम्ममेहपुडावगमे विरायत्ति, वेमि नाम तीर्थकरोवदेशात् सुधम्म- स्वामिन उपदेशाच्च ब्रवीमि, न स्वाभिप्रायेणेति । इयाणि णया- ' णायंमि गिण्हियव्वे अगिण्हियव्वंमि चैव अत्थंमि । जइतव्वमेव इइ जो उवएसो सो णयो नाम ॥१॥ सव्वेसिपि नयाणं बहुविहवत्तव्वयं निसामेत्ता । तं सव्वनयविसुद्धो, जं चरणगुणट्ठिओ साहू ॥२॥ इति दशवैकालिकचूर्णौ आचारप्रणिध्यध्यनचूर्णी सम्मत्ता ॥ आचार- प्रणिधेः फलम् ॥२९४॥
	अध्ययनं -८- परिसमाप्तं

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [९], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [३९९-४१५/४१५-४३१], निर्युक्तिः [३११-३२९/३०९-३२७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३९९- ४१५ दीप अनुक्रम [४१५- ४३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ९ विनयाध्य. ॥३०२॥ शीयसीदा ' इति (पा. ७-३-१८) स्था इत्येतस्य तिष्ठ आदेशो भवति, परगमनं तिष्ठति इति, ' आधाराधिकरण ' मिति (पा. १-४-४५) अधिकरणसंज्ञा, सत्यां अधिकरणसंज्ञायां ' सप्तम्यधिकरणे चे ' ति (पा. ३-३-३६) सप्तमी विभक्तिर्भवति, तस्या एकवचनं डि, ङकारलोपः, तिष्ठति नञ् पूर्वः, तस्मिन् गुरुमूले विनयेन न तिष्ठति, तद् प्राप्तिपदिकं, अस्य प्रातिपदिकस्यार्थे प्रथमैकवचनं सु, अकारलोपः त्यदाद्यत्वेन दकारस्याकारः, अतो गुणः पररूपत्वं 'तदोः सः सावनंतयो' रिति (पा. १-२-१०६) तकारस्य सकारः ' ससज्जुषोरुः ' (पा. ८-३-३६) ' विसर्जनीयस्य सः ' (पा. ८-३-३४) चकारः समुच्चयार्थः, सो चेव तु तस्य, अस् भुवि धातुः, अस्य धातोः स्त्रियामित्यधिकृत्य स्त्रियां क्तिन् प्रत्ययो भवति, नकारस्य लोपः, ककारः गुणवृद्धि-प्रतिषेधार्थः, ' आर्द्धधातुकस्येड्वलादे ' रिति (पा. १-२-२५) इद् प्राप्तः ' तितुत्रतथसिसुसरकसेषु चे ' ति (पा. ७-२-९) प्रतिषिद्धः, ' अस्तेर्भूः ' (पा. ४-४-५२) अस्तेर्धातोः भू इत्ययमादेशो भवति आर्द्धधातुके परतः, गुणः प्राप्तः क्तिता प्रतिषिद्धः, भूतिः, नञ् पूर्वः न भूतिः ' नञ् ' (पा. २-२-६) सुपा सह समस्वति तत्पुरुषश्च समासः, नकारादकारमपकृष्य नकारस्य न-लोपो, ' नञ् ' इति विशेषणार्थः, अभूतिः, सा चैव-विनयः आचार्योपाध्यायादीनामक्रियमाणः तस्यैव साधोः अभूतिभावो भवति, अभूतिभावो नाम अभूतिभावोक्ति वा विणासभावोक्ति वा एगट्टा, आह-कहं तस्स अभूतिभावो भवइ ? मण्णइ--'फलं व कीअस्स वहाय होइ' ' हन् हिंसागत्यो'र्धातुः, ' कदोरपि ' (पा. ३-३-५७) त्यनुवर्त्तमाने ' हन् वध ' इति (पा. ३-३-७६) हन्तेर्धातोः अप् प्रत्ययो भवति वध इत्ययं आदेशः वध, एवमवस्थिते ' क्रुधदुहेर्ष्यासुयार्थानां यं प्रति कोप ' इति (पा. १-४-३७) संप्रदानसंज्ञा, ' चतुर्थी सम्प्रदाने ' (पा. २-३-१३) संप्रदाने कारके चतुर्थी विभक्तिर्भवति, तस्याः एकवचनं उद्देशकः ॥३०२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [९], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [३९९-४१५/४१५-४३१], निर्युक्तिः [३११-३२९/३०९-३२७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३९९- ४१५ दीप अनुक्रम [४१५- ४३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी ९ विनयाध्य. ३०५ ॥ ४०३ ॥ वृत्तं, जोत्ति अणिहिट्टस्स गहणं पावगो अगणी भण्णइ, आसीविसो पसिद्धो, तं पावगं पभूतिधणं जलमाणं जो कोइ काएण अक्खम्म चिट्ठेज्जा, आसीविसं वा जो पसन्नभावं अच्छमाणं कोवएज्जा, जो वा जीविहामित्ति कामओ विसं खाएज्जा, जहा एते अग्निमादि न सुहावहा ‘एसोधमा आसातणया गुरूणं’ ति, उवमा नाम उवम्भत्ति वा सरिसत्ति वा एगड्डा, अवि य--‘सिआ हु से०’ ॥ ४०५ ॥ वृत्तं, सियासदो आसंकाए वट्टइ, जहा कयाइ मन्तपयोगसच्चतवदेवयाकारणेण पावगो णो डहेज्जा, कयाइ कुविओवि आसीविसो मंतपयोगादिकारणेण ण भक्खेज्जा, तथा कदायि हालाहलमवि विसं णो मारेज्जा, हालाहलं नाम विसजातिभेओ, आसेविताणि पावगादीणि खेमंकराणि भवंति, ण य गुरुआसायणं कुव्वमाणो मोक्खपज्जवसाणाणं गुणाणं आभागीभवइ । किंच-‘जो पव्वयं सिरसा०’ ॥ ४०६ ॥ वृत्तं, जोत्ति अणिहिट्टस्स गहणं कयं, कोइ पव्वयं सिरसा भेतुभिच्छइ वा, कोइ सीहं गुहाए सुत्तं पडिवोहेज्जा, जो वा सत्तिअग्गे-सत्तिआयुहस्स अग्गे हत्थतलाहीहिं पहारं दलएज्जा, ‘एसोवमाऽसायणया गुरूणं’ ति जहा ते पव्वयाईणि विणासकाराणाणि सिरादीहिं कुव्वमाणो विणासं पावति तहा गुरुआसात-णावि अणाइयं अणवदग्गं संसारं संपावया भवंतित्ति । अवि य--‘सिआ हु०’ ॥ ४०७ ॥ वृत्तं, सियासदो आसंकिए अत्थे वट्टइ, जहा कदाइ चक्कंडी बलदेवा वासुदेवा विज्जाहरतवोसिज्झा वा पव्वयं सिरसा भिंदेज्जा, तहा कयाइ य सुत्तोऽवि सीहो पडिवोहिओ कुविओ विज्जथंभणावि नो भक्खेज्जा, तहा सत्तिअग्गमवि कयाइ पहारे दिज्जमाणेऽवि ण तस्स किंचि पीडं उप्पाएज्जा, ण यावि आयरियहीलणेण मोक्खो भवइत्ति । किंच, जा एस पावगादिआसायणा एस एगभविआ अप्पविवागा, गुरुआसायणा य पुण अणेगभविआ बहुविवागा, तदुपदरिसणत्थमिदमुच्यते-‘आयरिय०’ ॥ ४०८ ॥ वृत्तं, आयरियपाया उद्देशकः ॥३०५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [९], उद्देशक [१], मूलं [१५...] / गाथा: [३९९-४१५/४१५-४३१], निर्युक्तिः [३११-३२९/३०९-३२७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१५...] गाथा ३९९- ४१५ दीप अनुक्रम [४१५- ४३१]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदक्ष- वैकालिक चूर्णी ९ विनयाध्य. ३०७ अणुसासयन्ति णाम जहा लज्जा ताव संजतत्तं, उवदीसति, तीए य फलं, तहा दयं दयाए फलं, एवमादीणि अणुसासिज्जमाणान्तीसा पायसो अत्तणो निस्सेसपारगा भवंतित्तिकाऊण ‘ते अह गुरु सततं पूयय्यामि’त्ति ॥ इतो य गुरु पूयणिज्जा, कहं ?, जम्हा ते भगवन्तो--‘जहा निसन्ते० ’ ॥ ४१२ ॥ वृत्तं, ‘जहा निसन्ते तवाच्चिमाली ’ ति, त थ जेणप्पगारेण जहा, णिसा णाम रची भण्हइ, तीए निसाए अंतो निसंतो दिवसोत्ति वुत्तं भवइ, तवइ नाम पगासेइ, अच्चिओ व रस्सीओ भण्णांति, तासिं रस्सिणं माला जस्स अत्थि, सो य णाइच्चो पभासई भारहं केवलं तु, पभासती णाम पभासइत्ति वा उज्जोएइत्ति वा एगट्ठा, भारहं पसिद्धं, केवलं णाम संपुण्णं, तुसदो विसेसणे वड्डइ, किं विसेसयति ?, न केवलं भारहं पगासइ, किंतु सब्वमेव जम्बूदीवदाहिणद्धं एयं विसेसयति, एवं आयरिओऽवि सुएण सीलेण बुद्धीए य उववेओ वियलीकयअण्णाणपडलो जीवाजीवादओ य पदत्था पगासति इति ॥ किंच--‘ विरायई सुरभज्जे व इंढो ’ त्ति, जहा इंढो सामाण्यादिपरिवुडो समंतओ विरायइ एवं आयरिओऽवि सीसगणसेपरिवुडो सपक्खाणं परतिस्थियाणं च पुरओ विरायइत्ति । किंच--‘ जहा ससी कोमुदिजोगजुत्तो० ’ ॥ ४१३ ॥ ‘जहा ससी कोमुदिजोगजुत्तो ’ त्ति, तत्थ जहा णाम जेण पगारेण जहा, ससी चंदो भण्हइ, ‘कोमुइजोगजुत्तो ’ नाम कत्थियपुत्तिमाए उइओ, ‘नक्खत्ततारागणपरिवुडप्पा ’ णाम नक्खत्तेहिं तारागणेण य परिवुडो अप्पा जस्स सो नक्खत्ततारागणपरिवुडप्पा, ‘खे ’ ति आगासस्स गहणं, जेण पगारेण आगासे विमले अब्भमुको ससी सोभइ एवं गणी सोभइ सीसमज्जे । किंच ‘ महागरा आयरिया० ’ ॥ ४१४ ॥ वृत्तं, महंताणं णाणार्हेण गुणाणं आगरा महागरा, महागरा चउव्विहा भवंति, तंजहा-नाममहागरा ठवण० दव्व० भावमहागरत्ति, नामठवणाओ गयाओ, दव्वमहागरा उद्देशकः ३०७

आगम (४२)	"दशवैकालिक"- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+भाष्य+चूर्णिः) अध्ययनं [९], उद्देशक [४], मूलं [१-५/४७१-४८४] / गाथा: [४५४-४६०/४७१-४८४], निर्युक्तिः [३२९.../३२७...], भाष्यं [६२...] मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] "दशवैकालिक" निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः
प्रत सूत्रांक [[१-५]] गाथा ४५४- ४६० दीप अनुक्रम [४७१- ४८४]	४ उद्देशकः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. ९ विनयाध्य- यने ३२७ परलोगहितं चेहज्जइ तं पेहयति, आयरियउवज्झायादओ य आदरेण हिओवदेसगतिकाऊण सुस्सइ, तमेव पुणो तेसिं हिओवएसं समं अहिट्टयतीति, अहिट्टेति नाम अहिट्टयति वा आयरइति वा एग्घा, 'ण य माणमएण मज्जई' न मा (ण कुणइ) जहा विणयसमाहीए पडुच्च को मए समाणो अण्णोत्ति, 'आययट्ठिए' नाम आयओ मोक्खो भण्णइ, तं आययं कंसयतीति आययट्ठए, अथवा विणयसमाधीए आययट्ठाए अव्वत्थं आदरो जस्स सो विणयसमाधीआययट्ठिआ भण्णइ, विणयसमाधी भाण्या। इदाणि सुयसमाधी भण्णइ, तंजहा--'सुअं मे भविस्सइत्ति अज्झाइअव्वं भवइ, पढमं सुतसमाधीए पदं, एग्गचित्तो भविस्सामित्ति अज्झाइअव्वयं भवइ, वितियं सुयसमाधीए पदं, अप्पाणं ठावइस्सामित्ति अज्झाइअव्वयं भवइ, तइयं सुयसमाधीए पदं, ठिओ परं ठावइस्सामित्ति अज्झाइअव्वयं भवइ, चउत्थं सुयसमाधीए पयं भवतिन्ति ॥ (सूत्रं १८) अज्झाइयव्वयं भवइ 'सुयं' नाम दुवालसंगं गच्छिपिट्ठमं, तं मे शायं भविस्सतिच्ति एयं आलंबणं काउं साहुणा अज्झाइयव्वं भवति, एग्गचित्तं अज्झार्यंतस्त भविस्सतिच्ति एयं आलंबणं काउं साधुणा अज्झाइयव्वं भवइ, तथा सुहविरामं जाणमाणो सुहं अप्पाणे धम्मे ठावेहामित्ति एयं आलंबणं साहुणा काऊण अज्झाइयव्वं भवइ, सुयं कमपरिचाडीए, चउत्थमेयं पदं भवइ । भवइ य एत्थ सुयसमाहीए सिलोगो, तंजहा--नाणभेग्गचित्तो, ठिओ अ ठावई परं । सुआणि अ अहिज्जित्ता, रओ सुअसमाहीए ॥४५६॥ अज्झाइए णाणमतो भवइ, गणणगुणेण एग्गचित्तो, एग्गचित्तो य धम्मे निच्चलो, ठिओ सो सम्मं समत्थो परमवि ठावेउंति, नाणाविहाणि य सुयाणि अहिज्जमाणो रओ सुयसमाधीएत्ति । इदाणि तवसमाधी भण्णइ-- चउत्त्वहा खलु तवसमाही भवइ, तंजहा--नो इह्लोगइत्थाए तवमहिट्ठिजा० (सूत्रं १९) ३२७

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [९], उद्देशक [४], मूलं [५...] / गाथा: [४५४-४६०/४७१-४८४], निर्युक्तिः [३२९.../३२७...], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१-५] गाथा ४५४- ४६० दीप अनुक्रम [४७१- ४८४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. १० समिक्षुवध्य ॥३३०॥ परममहिद्भिः सु भवद्, अनेसु वा वेमाणिएसु इंदसामाणियादिसु महिद्भिः भवद्, वेमि नाम तीर्थकरोपदेशात्, न स्वाभि- प्रायेणेति, इदानीं णया—‘ णायंमि गिणिह्यच्चे० ’ ॥ गाहा, ‘ सव्वेसिं पि णयाणं० ’ ॥ गाहा, पूर्ववदिति ॥ विणयसमाहीअज्झयणं सम्मत्तम् एतेसु नवसु अज्झयणत्थेसु जो वट्ठो सो भिक्खू, एतेण अभिसंवेधेणागतस्स दसमज्झयणस्स चत्तारि अनुयोगदारा जहा आवस्सए, नवरं नामनिष्फण्णो निक्खेवो समिक्खू, सगारो निक्खिवियच्चो, भिक्खू य निक्खिवियच्चो, तत्थ पुच्चं सगारो भण्णइ, सो चऽव्विहो, तंजहा—नामसकारो ठवणं० दव्वं० भावसगारो यत्ति, णामठवणाओ गयाओ, दव्वसगारो दुविहो, तंजहा—आगमओ णोआगमओ य, आगमओ जाणए अनुवउत्ते, नोआगमओ तिविहो, तंजहा—जाणयसरीरदव्वसगारो मवियसरीरदव्वसगारो जाणयसरीरमवियसरीरवहरित्तो दव्वसगारोत्ति, तत्थ जाणमसरीरदव्वसगारो जीवो सगारजाणओ तस्स जं सरीरगं जीवरहियं पुच्चभावपण्णवणं पडुच्च, जहा अयं घयकुंभे आसि, एस जाणमसरीरदव्वसगारो, इयाणीं मवियस- रीरदव्वसगारो जो जीवो सगारं जाणिहित्ति अणागयभावपण्णवणं पडुच्च, जहा अयं घयकुंभे भविस्सइ अयं महुकुंभे भविस्सइ, इदानीं जाणमसरीरमवियसरीरवहरित्तो इमेण गाथापुच्चद्वेण भण्णइ—‘ निद्देसपसंसाए० ’ ॥ ३३१ ॥ अद्दगाथा, सगारो तिसु अत्थेसु वट्ठइ—निद्देसे पसंसाए अत्थिभावे य, निद्देसे जहा से णं तओ अणंतं उच्चट्ठित्ता इहेव जंबुदीवे एवगादि, पसंसाए जहा पुरिसा सण्णुरिसेहिं समं वसंता भवन्ति पुरिसुत्तिमा वहरिंदनीलमरगयमणिणो इव जच्चकणगसहसंवद्धा एवमादि, अत्थि- भावे जह सख्यं अमुगं कज्जति एवमादि, दव्वसगारो भणिओ, भावसगारो णाम जो जीवो सगारोवउत्तो सो भावसगारो सकार- भिक्षुपदयो निक्षेपाः ॥३३०॥
	अध्ययनं -९- परिसमाप्तं अध्ययनं -१०- ‘स-भिक्षु’ आरभ्यते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१-४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५-५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो. १० समिक्ष्वध्य ॥३३२॥ जेण एससा णिच्छूढा, अथवा इमो दव्वभिक्षू भण्णइ-‘भिदओ भेअणं चेव’ ॥३३६॥ गाथा, दव्वं भिदतीति दव्वभेदओ, सो दव्वभेदो परूवेयव्वो, दव्वभेदणं परूवेयव्वं, जं दव्वं भिदियव्वं तं च, परूवणं एतेसिं तिण्हवि पत्तेयं २ वोच्छामि, सा य परूवणा इमा -- ‘जह दारुकम्मकारो’ ॥३३७॥ गाथापुव्वद्धं, जहासदो पुव्वसइअतिविहपरूवणअभिनिहेसओ, दारुकम्मकारो वडुति, सो दव्वभेदओ भण्णइ, भेदणं परसू, भेत्तव्वयं कट्ठं, सो य दारुकम्मकारो एतेहिं भिदएहिं संजुत्तो दव्वभिक्षू भवइ । किंच ‘अन्नेऽवि दव्वभिक्षू’ ॥ ३३७॥ गाथापच्छद्धं, न केवलं दारुकम्मकारो दव्वभिक्षू भवइ, किन्तु ?, अन्नेऽवि दव्वभिक्षूवो जे मूलगुणउत्तरगुणेहिं विरहिंया लोगमुवजीवंति ते दव्वभिक्षूवो भण्णंति, देवा अम्हे तिलोगानित्थारणत्थं मणुस्सलोए अवयरिया ते एवं बंभणा णाम कोधी माणी मायी मिच्छादिट्ठी उज्जुपन्ने धम्ममि अविकोविया मता याजणगा दुपदादीणि मग्गमाणा दव्वभिक्षूवो भण्णंति, तहा अन्नेऽवि जीवणियनिमित्तं तारिसा कप्पाडियादाणि दाणा किविणा सिप्पतो भिक्षुमडमाणाऽविज्जा दव्वभिक्षूवोत्ति पासंडिणोऽवि ‘मिच्छदिट्ठी’ ॥ ३३९ ॥ गाथा, रत्तपडपरिवायगमादीवि मिच्छादिट्ठी वधपरा तसाणं वेइंदियादीणं थावरण य पुढाविमाईणं णिच्चमेव वधकारणे रत्ता, अबंभचारित्तणेण संचइयदोसेण य दव्वभिक्षूवो भवंति, आह-कहं ते अबंभचारी भवंति ?, आयरिओ आह-सक्काण ताव जे तत्थ असीलमंता तेसु मग्गणा णत्थि, जे पुण सीलमंता ते मणवइओ पडुच्च पेसदासिपरिग्गहा कहं बंभचारी भविस्संति ?, संखावि पत्ताणं सहादीणं विसयाणं उवभोगो कायव्वोत्ति एवं उवइसंता कहं बंभचारी भविस्संति ?, एवं अण्णेमुवि आजीवगाइसु पासडेसु जहा संभवं भाणियव्वं, तहा इमेण संचएण संचइया, तंजहा--‘ दुपयचउप्पय’ ॥ ३४० ॥ गाथा, दुपदं दासी दासा य, चउप्पयं गोमहिसादी, धणं- हिरण्णसुवण्णादी, धणं सकार- मिश्रपदयो निक्षेपाः ॥३३२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१-४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५-५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णो. १० भिक्षु अ० ॥३३४॥ इमेण अन्नेण पज्जाएण निरुत्तं भण्णइ, तंजहा—‘जं भिक्खणमेत्तविच्ची०’ ॥३४६॥ गाहा, जम्हा भिक्खणमेत्तविधी अतो भिक्खू भण्णइ, अणं कम्मं भण्णइ, जम्हा अणं खवयइ तम्हा खवणो भण्णइ, तवसंजमेसु वट्टमाणो तवस्सी भण्णइ, गिरुत्तं गयं । इदाणि एगट्ठियाणि भिक्खुस्स तिहि गाहाहि भण्णति-‘तिस्से नाती० (ताइ वृ०) ॥३४७॥ गाथा, ‘पव्वइए अणगारे०’ ॥३४८॥ एत्तो परं तु (साहू लूहे अ तहा) गाहा ॥३४९॥ तत्थ ‘निण्णो’ नाम जम्हा संसारसमुद्दं तरिंसु तरति तरिस्सति य इति तिण्णे, जम्हा अण्णेऽवि भविए सिद्धिमहापट्टणं अविग्घेण णाणाइणा पहेण नयति तम्हा नेयां, दविए नाम रागदोसविमुक्को भवइ, वयाणि एतस्स अत्थि अतो वती, खमतीति खंतो, इदियकसाया दमतीति दंतो, पाणवहादीहि आसवदारेहि न पविरमहात्ति विरए, मुणी मुणित्ति वा नाणित्ति वा एगट्ठा, अहवा सावज्जेसु मोणमासेवतित्ति मुणी, तवे ठियो तावसो, पन्नवयतीति पन्नवओ, ‘उज्जु’ मायाविरहिओ अहवा उज्जु-संजमो तंमि अवत्थिओ उज्जु भवइ, भिक्खू पुव्वभणिओ, बुज्झइत्ति बुद्धो, जयणाजुत्तो जती, विद् नाम विदुत्ति वा नाणित्ति एगट्ठा, (पढमाए) गाहाए अत्थो भणिओ । इदाणि विद्याए भण्णइ, तत्थ पव्वइए णाम यो वा पाणवधादीओ प्रव्रजितो, अणगारो णाम अगारं घरं भण्णइ, तं जस्स नत्थि सो अणगारो, अट्ठविहाओ कम्मपासाओ डीणो पासंडी, तवं चरतीति चरओ, अट्ठारसविहं बंभं धारयतीति बंभणो, भिक्खणसीलो भिक्खू, सव्वसो पावं परिवज्जयंतो परिवायगो भण्णइ, सममणो समणो, बाहिरम्भंतरेहि गंथेहि विरओ निग्गंथो, अहिंसादीहि संमं जुओ संजतो, जे बाहिरम्भंतरेहि विप्पमुक्को सो मुत्तो । वितियाए अत्थो भणिओ । इदाणि त्थाए गाहाए अत्थो भन्ति, तत्थ णिव्वाणसाहए जोगे पहे साधयतीति साधू, अंतपत्तेहि लूहेहि जीवतित्ति लूहे, अहवा कोहादिणा हासो तस्स नत्थि सो लूहो, संसारसागरस्स तीरं अत्थयतीति तीरडी, अत्थयति नाम अत्थ- सकार- भिक्षुपदयो निक्षपाः ॥३३४॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८९/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१- ४८९॥ दीप अनुक्रम [४८५- ५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. १० भिधु अ० ॥३४१॥ लसविहस्सवि वणप्फइकाइयस्स गहणं कयं. तं हरियं न सयं छिदेज्जा न परेण छिदावेज्जा, ‘एग्गगहणे गहणं तज्जातीयाणं’ति- काउं छिन्दंतं पि अण्णं न समणुजाणेज्जा विवज्जयंतोत्ति, सचित्तग्गहणेण सव्वस्स पत्तेयसाहारणस्स सभेदस्स वणप्फइकायस्स गहणं कयं, तं सचित्तं नो आहारेज्जा, एताणि हरितछेदणादीणि जो न कुव्वइ सो भिक्खू भवइत्ति । इदाणि बीयग्गतसाण परिहारो भण्णइ—‘वहणं तसथावराण होइ०’ ॥ ४६४ ॥ वृत्तं, ‘वहणं’ णाम भारणं तं तसथावराणं पुढावितणकट्टणिसि- याण भवत्तिकिकाऊण तम्हा उहेसियं न थुंजेज्जा, तथा समयमवि ओदणादी नो पएज्जा णो वा पयावेज्जा, ‘एग्गगहणे गहणं तज्जातीयाणं’मित्तिकाउं पयंतमवि अण्णं न समणुजाणेज्जा । ‘रोइअ नायपुत्तवयणे०’ ॥ ४६५ ॥ वृत्तं, णायपुत्तस्स भगवओ वद्धमाणसामिस्स वयणं रोविऊण अत्तसमे पुढाविशादी माणेज्जा छप्पि काए, अत्तसमे णाम जहा मम अप्पियं दुक्खं तथा छण्हवि कायाणां ति णाऊण ते कहं हिंसामित्ति, एवं अत्तसमे छप्पि काए मण्णेज्जा, पंच चेह पाणवह्वेरमणादीणि महव्वयाणि फासेज्जा-आसेविज्जा ‘पंचासवसंवरे’ णाम पंचिदियसंबुडे, जहा ‘सहेसु य भइयपावएसु, सोयविसयं उवगएसु । तुड्डेण व रुड्डेण व समणेण सया न होयव्वं ॥ १ ॥’ एवं सव्वेसु भणियव्वं, सो य एवं गुणजुत्तो भवत्ति, एते ताव मूलगुणा भणिया । इदाणि उत्तरगुणा भण्णन्ति, तंजहा —‘चत्तारि वमे सया कसाए०’ ॥ ४६६ ॥ वृत्तं, चत्तारि कोहादिकसाया सया वमेज्जा, तत्थ वमणं छड्डणं भण्णइ, तथा ‘धुवजोगी हविज्ज’ धुवजोगी णाम जो खणलवमुहुत्तं पडिवुज्झमाणादिगुणजुत्तो सो धुवजोगी भवइ, अहवा जे पडिलेहणादि संजमजोगा तेसु धुवजोगी भवेज्जा, ण ते अण्णदा कुज्जा अण्णदा न कुज्जा, अहवा मणवयणकायए जोगे जुंजेमाणो आउत्तो जुंजेज्जा, अहवा बुद्धाण वयणं दुवालसंगं तंमि धुवजोगी भवेज्जा, सुओवउत्तो सव्वकालं भवेज्जत्ति, धुवगहणेण वधविरतिः कषायवमनं ॥३४१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१-४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५-५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. १० भिधु अ० ॥३४४॥ तत्थवि जं अतीव दारुणं भयं तं भेरवं भण्णइ, वेतालगादयो भयभेरवकायेण महता सहेण जत्थ ठाणे पहसंति सप्पहासे, तं ठाणं भयभेरवसप्पहासं भण्णइ, तंमि भयभेरवसदसप्पहासे. उवसग्गेसु अणुलोमपडिलोमेसु कीरमाणेसु ‘समसुहदुक्खसहे अ जे स भिक्खू०’ सो एवं समसुहदुक्खो होऊण। ‘पडिमं पडिवज्जिआ सुसाणे०’ ॥ ४७२ ॥ वृत्तं, सुसाणं पसिद्धं, तंमि सुसाणे पडिमं पडिवज्जिया चिट्ठंति, तत्थ से दिव्वाणि माणुसाणि तिरियाणि वा वेयालअद्वेयालमादियाणि भयाणि(अणेग) भयाणि उप्पज्जंति, ताई ददुण्ण ण भाएज्जा, पास सम्मचित्तयो भवेज्जा, जहा रत्तपडादीवि सुसाणेसु अच्छंति, ण य बीहिंति, तप्पाडिसेधणत्थमिदं भण्णइ, तं— ‘विविहगुणत्तवोरए अ निच्चं’ तेसिं रत्तपडादीणं भणियं, सुसाणे अच्छीयव्वं, ण पुण तेसिं विविहप्पगारं मूलगुणा उत्तरगुणा वा तवो बारसप्पगारो अत्थित्ति जंमि रया तंमि मसाणे चिट्ठंति, (एसो) पुण जहोवइहेण विहिणा वासी, विविहं-अणेगप्पगारं समूलगुणउत्तरगुणेसु तवे य बारसविहे रतो णिच्चं-सव्वकालं भवत्ति, ण य सरीरं तेहिं उवसग्गेहिं बाहिज्जमाणोऽवि अभिक्खइ, जहा जह मम एतं सरीरं न दुक्खाविज्जेज्जा, न वा विणस्सिज्जेज्जा, सो एवं गुणजुत्तो भिक्खू भवत्ति। किंच-‘असइं वोसद्वच्चत्तदेहे०’ ॥ ४७३ ॥ वृत्तं, ‘असइं’ नाम सव्वकालं, ‘वोसद्वं’ नाम वोस-द्वंति वा वोसिरियंति वा एगहा, चत्तं नाम जेण सरीरविभूषादीणिमत्तं हत्थपादपक्खालणादीहिं परिकम्मं ण वडुति तं चत्तं भण्णइ, देहगहणेण सरीरगहणं कयं, ‘अक्कुट्टे’ णाम मातिपितिवयणादीहिं हीलणादीहिं, ‘हए’ णाम डंडादीहिं तालिए ‘लूसिए’ नाम सुणगादीहिं भक्खिए, सो एवं अक्कुस्समाणो हम्ममाणो भक्खिज्जमाणो वा ‘पुढवीसमो सुणी भवेज्जा’ जहा पुढवी अक्कुस्समाणी हम्ममाणी भक्खिज्जमाणी च न य किंचि पओसं वदं, तहा भिक्खुणावि सव्वपासविसधेण होयव्वं, व्युत्सृष्ट- त्यक्तदेहः ॥३४४॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१- ४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५- ५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १० भिक्षु अ० ॥३४५॥ मुणी नाम मुणित्ति वा नाणित्ति वा एगट्ठा, जो सो माणुसरिद्धिनिमित्तं तवसंजमं न कुव्वइ, से अनियाणे, णट्टगादिसु अकोउ- हल्ले भवेज्जा, सो एवंविहगुणजुत्तो भिक्खू भवतित्ति । किंच-सक्काणं चेत्तवेतसिगा धम्मा इति तंणिसेहणत्थमिदमुच्यते— 'अभिभूअ काएण०' ॥४७४॥ वृत्तं, कायो सरीरं भण्णइ, ण केवलं मणसा, परीसहे 'अभिभूय' ति अभिमुहं जातिउण 'समुद्धरे' णाम सम्मं उद्धरे, सम्मं पात्ते करेज्जत्ति वुत्तं भवति, जातिगहणेण जम्मणस्स गहणं कयं, वधगहणेण मरणस्स गहणं कयं, ताओ जम्मणसरणाओ समुद्धरे अप्पाणत्ति, कहं पुण समुद्धरोत्ति ?, अतो भण्णइ 'विदित्तु जाती मरणं महब्भयं' तं पुव्वं भणियं, जातिमरणं महब्भयं विदित्ता नाय जाणिउण सामणिए रते भवेज्जा, समणभावो सामणियं भन्नइ, सो एवंगुण- जुत्तो भिक्खू भवतित्ति । 'समणभावो सामणियमिति' तदुपरिसणत्थमिदमुच्यते—'हत्थसंजए०' ॥ ४७५ ॥ वृत्तं, हत्थपाएहिं कुम्मो इव णिकारणे जो गुत्तो अच्छइ, कारणे पडिलेहिय पमजिय वावारं कुव्वइ, एवं कुव्वमाणो हत्थसंजओ पायसंजओ भवइ, वायाएवि संजओ, कहं ?, अकुसलवह्निरोधं कुव्वइ, कुसलवइउदीरणं च कजे कुव्वइ, 'संजइंदिए' नाम इंदियविसयणयार- णिरोधं कुव्वइ, विसयपत्तेसु इंदियत्थेसु रागदोसविगणग्गहं च कुव्वत्ति, 'अज्झप्परए' नाम सोभणज्झाणरण, 'सुसमाहि- अप्पा' नाम णाणदंसणचरित्ते सुट्ठु आहिओ अप्पा जस्स सो सुसमाहिअप्पा भण्णइ, सुत्तत्थगहणेण सुत्तस्स अत्थस्स तदु- भयस्स गहणं कयं, तत्थ सुत्तत्थं विजाणत्ति पुव्विह्माणि य जो कारणाणि कुव्वत्ति सो भिक्खू भवइत्ति । किंच—'उवहिंमि अमुच्छिए०' ॥ ४७६ ॥ वृत्तं, उवही वत्थपत्तादी, ताए उवहिए अमुच्छिए अगिद्धिए य भवेज्जा, मुच्छासहो य गिद्धिसहो य परीपहजयः हस्तादि- संयतता ॥३४५॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१- ४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५- ५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. १० भिक्षु अ- ॥३४७॥ साधुत्ति वा एगद्धा, तहा तेसु रसेसु नो गेथि गच्छेज्जा, तं च अण्णायउछं चरेज्जा, आह-णणु अण्णायउछं पुलागणिपुलाएत्ति भणियमेव ? , आयरिओ आह- उवहिं पडुच्च तं भणियं, इमं पुण आहारं पडुच्च भणियंति पुणरुत्तं न भवइ, तहा ‘ जीवियं णाभिकंखेज्जा, ’ जहाज्हुं जइ (जीवं), तहा इद्धि-विउव्वणमादि सकारपूयणं च, एताणि तिण्णिवि जहेज्ज णाम छुडेज्जत्ति, इद्धी आगासगमणादि, सकारो वत्थपत्तादि, पूयाय शुइवहुमाणादि, णाणदंसणचरित्तसु ठिओ अप्पा जस्स सो ठियप्पा, ‘ अणिहे ’ णाम अकुडिलेत्ति वा अणिहोत्ति वा एगद्धा, सो एवं गुणजुत्तो भवइत्ति । ‘ न परं वइज्जासि० ’ ॥ ४७८ ॥ वृत्तं, परो णाम गिहत्था लिंगी वा, जइवि सो अप्पणो कम्मेसु अव्ववत्थिओ तहावि न वत्तव्वो जहाज्हुं कुत्थियसीलोत्ति, किं कारणं ?, तत्थ अपत्तियमादि बहवे दोसा भवन्ति, कदापि पुण सपक्खं सिदंतं वदेज्जा, जहा कुसीलोऽसि ?, छुडेहि एवं कुसीलत्तं, अतो निमित्तं परग्रहणं कयं, साधुगुणे सेवा हि एवमादि, तहा ‘ जेणं नो कुप्पेज्जा तं वएज्जत्ति, ‘ जेण ’ त्ति जेण कम्मजातिसिप्पाइणा भणिओ परो कुप्पइ, तं नो वदेज्जा, आह- किं कारणं परो न वत्तव्वो ?, जहा जो चेव अगणि गिण्हइ सो चेव उज्झइ, एवं नाऊण पत्तेयं पत्तेयं पुण्णपावं अत्ताणं ण समुक्कसइ, जहाज्हुं सोभणो एस असोभणोत्ति एवमादि । अत्तु करिसपत्तिसेहणत्थमिदमुच्यते-‘ न जाह्मत्ते० ’ ॥ ४७९ ॥ वृत्तं, जाई पडुच्च मओ न कायव्वो, लाभेणवि मदो न कायव्वो, जहाज्हुं आहारोवहिमाईणि लभामि, न एवं अण्णो कोइ लभइत्ति, एवमादि लाभमओ न कायव्वो, जहाज्हुं सिद्धंतनीतिकुसलो को एवं अण्णोत्ति, एवमादि सुयमओ न कायव्वो, जाणि य न भणियाणि इस्सरत्तचित्तणादीणि मदहाणाणि ताणि मदाणि लोलता- दित्यागः वाक्य- शुद्धिः मदवर्जनं धर्मारुथानं ॥३४७॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) अध्ययनं [१०], उद्देशक [-], मूलं [५...] / गाथा: [४६१-४८१/४८५-५०५], निर्युक्तिः [३२९-३५८/३२८-३५८], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [५...] गाथा ॥४६१- ४८१॥ दीप अनुक्रम [४८५- ५०५]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी १रतिवाक्य चूला ॥३४९॥ वा गच्छइत्ति वा एगट्टा, भिक्खुगहणेण पुव्वभणियभिक्खुस्स गहणं कयं, अपुगागमा गती सिद्धी भण्णति, तं सो भिक्खु उवेइत्ति, सावसेसकम्मो य देवलोगेसु, पुण सुकुलपच्चायाति लद्धूण पच्चा सत्तट्ठमवगगहणम्भंतरतो सिज्झतित्ति, वेमि नाम तीर्थकरोपदेशात्, न स्वाभिप्रायेण ब्रवीमीति । इदानीं णया-णायमि गिणिहयव्वे अगिणिहयव्वमि०॥ गाहा, ‘सव्वेसिपि णयाणं बहुविह वत्तव्वयं णिसामेत्ता । तं सव्वनयविसुद्धं जं चरणगुणाद्विओ साहू ॥ १ ॥ अर्थः पूर्ववदिति सभिक्खूअज्झयणचुणी सम्मत्ता । → एवं ताव भिक्खुस्स संजमावत्थियस्स जइ कहंचि संजमे अरती भवेज्जा, तीए अरतीए निवारणनिमित्तं विविक्कचरिया-निमित्तं च इमाओ दो चूलाओ भण्णति, तत्थ चूलापदस्स ताव वक्खाणं भण्णइ, तंजहा—‘दव्वे खेत्ते काले०’ ॥ ३६१ ॥ गाहा, चूला छव्विहा, तंजहा—नामचूला ठव्वण० दव्व० भाव० खित्त० कालचूलात्ति, तं पुण चूलियदुगं उत्तरं तंतं नायव्वं, जहा आयास्स उत्तरं तंतं पंच चूलाओ, एवं दसवेयालियस्स दोण्णि चूलाओ उत्तरं तंतं भवइ, तत्थ चूलासदस्स वक्खाणं भण्णति, तंजहा—दव्वे खेत्ते काले दसवेयालियं जाहे पढियं होति ताहे उत्तरकालं पढिज्जंति, जाहे दसवेयालियं सुतं ताहे चूलाओ सुणि-ज्जंति, अतो उत्तरं तंतं भण्णइ, तंतं नाम तंतंति वा सुत्तोत्ति वा गंथोत्ति वा एगट्टा, चूलादुगं उत्तरं तंतं, सुतगाहियत्थं संग-हणी नायव्वा, तेसिं दसवेयालिओवइट्ठाणं सुतपदत्थाणं समासओ संगहितत्थमेतं चूलादुगं, ते चेव संखेवओ सुत्तत्था अच्चे य संगहिया, अतो एयं चूलादुगं तस्स दसवेयालियस्स संगहणी नायव्वा । इयाणि पत्तेयं पत्तेयं छव्विहा चूला भण्णइ, तत्थ नाम- चूर्ण निष्प ॥३४९॥
→	अध्ययनं -१०- परिसमाप्तं चूलिका -१- ‘रतिवाक्य’ आरभ्यते

आगम (४२)	"दशवैकालिक"- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः)
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ४८२- ४९९	चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३७९-३६७], भाष्यं [६२...]
दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] "दशवैकालिक" निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः:
	श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. १ रतिवाक्य चूला ॥३५०॥ रति- निक्षेपाः ॥३५०॥ ठवणाओ गयाओ, दब्बचूला इमेण गाथापुप्फवेण भण्णइ, तंजहा—'दब्बे सच्चित्तानी०' ॥३६२॥ अद्धगाथा, (सा ति वि हा) तं० सच्चित्ता अचित्ता मीसिया, तत्थ सच्चित्ता कुक्कुडस्स चूला सा मत्थए भवइ, अचित्ता चुलामणी, सा य सिरे कीर्ई, मीसिया मयूरस्स भवति, एवमादि दब्बचूला भनिया । इदाणि खेत्तचूला भण्णइ—'खेत्तन्मि लोग्निककुड०' ॥ ३६२ ॥ गाथापुप्फवं, खेत्तचूला लोग्निककुडाणि, मदरस्स पव्वयस्स चूला कूडा य एवमादि खेत्तचूला भण्णइ, अहवा अहे लग्नस्स सीमतओ अचित्तो, तिरियलग्नस्स मदरो । इयाणि भावचूला भण्णइ, सा य इमा, तंजहा—'भावो खओ वसमिए०' ॥ ३६३ ॥ गाथापुप्फवं, भावचूलाओ इमाओ चेव दोष्णि चूलाओ, कहं ? , जम्हा सुतं खओ वसमिए भावे, एयाओ दोष्वि चूलाओ खओ वसमियाओ काऊण भावचूलाओ भवन्ति, तत्थ पढमं रतिवक्कत्ति अञ्ञायणं, तस्स चत्तारि अनुयोगदारा जहा आवस्सए णवरं णामणि-प्फणे १ इवक्कं, दोष्वि पर्या रती य वक्कं च, तत्थ रतीइ चउक्कन्निकखेवो, तंजहा णामरती ठवण० दब्ब० भावरती य, नाम-ठवणाओ गयाओ, दब्बरती भावरती य तप्पसंगेण अरती इमाए गाथाए भण्णइ, तंजहा—(चूर्णी तु) 'दब्बरसग्ंध (दब्बे खुहा उ कम्म०)' ॥३६४॥ गाथा, दब्बरती दुविहा, तंजहा—कम्मदब्बरती णोकम्मदब्बरती य, तत्थ कम्मदब्बरती नाम रती वेयणिज्जं कम्मं बद्धं न ताव उदिज्जइ एस कम्मदब्बरती, नोकम्मदब्बरती—सरसरूपग्ंधकासदव्वाणि रतीकराणि णोकम्मदब्बरती भण्णइ, दब्बरती गता । इदाणि भावरती भण्णइ, सा य उदएण भवइ, कहं ?, तमेव रतिवेयणिज्जं कम्म जाहे उदिक्कं ताहे भावरती भण्णइ, एवं अरईवि चउव्विहा, तंजहा—नाम अरई ठवण० दब्ब० भाव अरईत्ति, नाम ठवणाओ ते हेव, दब्ब अरई दुविधा, तंजहा—कम्मदब्ब अरती णोकम्मदब्ब अरती, अरई वेयणिज्जं कम्मं बद्धं न ताव उदिज्जइ एस कम्मदब्ब अरती,
	*** 'रति' शब्दस्य निक्षेपाः दर्शयते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ ११रतिवाक्य चूला ॥३५१॥ णोकम्मदव्वअरती-अणिट्ठा सहादयो दव्वा णोकम्मदव्वअरई भण्णइ, जाहे अरती वेदणिज्जं कम्मं उदिण्णं ताहे भावअरई भवइ। इदंणि वल्लं भण्णइ, तं च जहा वक्कसुद्धीए भणियं तथा इहंपि भावियव्वं, वक्कंतिदारं गतं। सा य अरती जाहे परीसद्धान उदण्ण उदिज्जति ताहे सा निच्छयओ सुहविवागत्तिककाऊण सरीरपीडाकरावि सम्मं अहियासेयव्वा। एत्थं दिट्ठतो, ‘जहा नाम आउरस्सिह’ ॥३६६॥ गाथा, आउरो-गिलाणो, सो य वणेण केणइ आगतुगेण सरीरसमुत्थेण वा आउरीकओ होज्जा, जहा णाम आउरस्स-तस्स इह लोगो ‘सखिणछेज्जेसु क (की) रमाणेसु जंतणा अपत्थकुच्छा आमदोसपरिहारो विरई हियकारी भवइ’ तत्थ जंतणा पसिद्धा, ‘अपत्थकुच्छा’ णाम अपत्थपरिहारो भण्णइ, ‘आमं’ अजिण्णं भण्णइ, आमदोसमवि परिहरति, ‘विरती’ णाम विलोभीसादियाणि अलभणाणि आहारंतस्स भवति, एयाणि पच्छा सुहाणिचिकाऊण विरती भवति, हियकारीणि य से पच्छा भवति, एवं—‘अट्ठविहकम्मरोगा०’ ॥३६७॥ गाथा, अट्ठविधेण कम्मरोगेण आउरस्स जीवस्स तस्स कम्मस्स तिगिच्छाए आरद्धाए अणेगअदव्ववमणेण भूमीसेज्जाकट्ठेसज्जादी उक्तं अच्चावाहसुहकारणं ईहमाणस्स जा धम्मे रती अधम्मे य अरती सा हियकारिया भवइ। किंच—‘सज्झाय’ ॥३६८॥ गाथा, सज्झाओ वायणापुच्छणादी पंचविधो, तंमि सज्झाए सत्त-सविधे य संजमे तवे य बारसविधे वेयावच्चे दसप्पगारे, ज्ञाणजोगे दुविधे, तं-धम्मे सुक्के य, जो एतेसु सज्झायादिसु रमति हिंसाहंमि य असंजमे न रमती सो पावति सिद्धिं। आह—णणु तवग्गहणेण सज्झायवेयावच्चज्झाणा गहिया चेव १, आयरियो आह—जमेतेसिपि गहणं तं पाहण्णताउवपदारिसणत्थं कयं, सत्थमि बारसविहंमिाव तवे एते पहाणतरा, तत्थवि सज्झाओ पहाण-तरो, भणियं च—‘बारसविहंमिाव तवे सत्थितरवाहिरे जिणक्खाए। णवि अत्थि णवि य होही सज्झाणसमे तवो कम्मं ॥ १ ॥’ आतुर- इष्टान्तः हिताहित- कारिचेष्टाः ॥३५१॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२-४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६-५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ रतिवाक्ये ॥३५३॥ अवक्रमणमवहावणं, ते अवहावणं अणुप्पेहिउं सीलं जस्स सो अवहावणाणुप्पेही, अव इति एतस्स पागए ओगारो भवइ, एवं ओहाणु- प्पेही तेण ओहाणुप्पेहिणा, एवं कयसंकप्पेण पुव्वं ओहावणाओ ‘अणोहाइएण’ एवसदो अवधारणे, किमवधारयति?, नियमा अणोहाइएण अट्टारसट्ठाणाणि चित्तणीयाणि, पच्छा चित्तणं अणत्थगं, तेसिपि भावोपदरिसणत्थमिदमुच्यते-‘हयरस्सिगयं- कुसपोयपडागाभूआइं’ हयो-अस्सो तस्स रस्सी-खलिणं, सो य सुदप्पिओऽवि खलिणेण नियमिज्जइ, गयो-हत्थी तस्स- वि लोहमयं न(म)त्थयखणणमंकुसो, तेण सुमत्तोऽवि (वि) णत्तं गाहिज्जइ, जाणवत्तं-पोतो तस्स पडागा सीतपडो, पोतोऽवि सीय- पडेण तेण वीयीहिं न खोहिज्जइ, इच्छियं च देसं पाविज्जइ, हयादीणं रस्सिमादओ नियामगा अतो पत्तेयं ते सह पट्ठिज्जति— ‘हयरस्सिगयंकुसपोयपडागाभूआइं’ भूतसदो इह सारिस्सवाची, जहा कोऊहलभूयंमिवि लोए आसि पव्वयंतं, अओ तब्भू- ताणि ते हयरस्सिंसरिसाणि एवं हयरस्सिगयंकुसपोयपडागाभूताइं, इमाइं अट्टारस ट्ठाणाणित्ति, ‘इमाणि’त्ति जाणि य नियमिताणि तानि हिदए काऊण पच्चक्खाणि व भणति, अट्टारस इति संखा, णामंति वा ठाणंति वा भेदत्ति वा एगट्ठा, भणियं च—“इच्चेएहिं चउएहिं ठाणेहिं जीवा णेरतियत्ताए कम्मं पक्करोति,” अतो इमाणि अट्टारसट्ठाणाणि जहा हयादीणं रस्सिमादीणि नियामगाइं तथा जीवस्स ओहावणं कुव्वयओ अहिनिव्वत्तेऊण भिक्खुभावे नियामगाइं, तत्थ पढमं ताव दुकरजीवियत्तं दंसेइ-‘हंभो’इत्यादि, हंति भोत्ति संबोधनद्वयमादराय, दूसमाए दुप्पजीवी नाम दुक्खेण प्रजीवणं, आजीविआ, एत्थ संजमे रयाणं तु न सेति, जतो य एवं तम्हा धम्मे रई करणीया, तत्थ कामत्थी विसया भोगा सहादिविसया, अविय कुसग्गा इव इयरकाला, कदलीगब्भा वऽसारगा। जम्हा गिहत्थ- धम्मे, भोगे चइऊण कुणहरइं [धम्मे]॥१॥ बितियं ठाणं गतं। किंच ‘भुज्जो य सातिबहुला मणुस्सा’ भुज्जो-पुणो२, साति- स्थान- त्रितयं ॥३५३॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ रतिवाक्ये ॥३५४॥ कुडिला, बहुला इति पायसो, कुडिलहियओ पाएण भुज्जो य साइवहुला मणुस्सा कामभोगनिमित्तं गिद्धेसुवि पित्तुत्तप्पभि- निसु सातिसंपयोगपरा अवीसत्थहियया, तेसु किं सुहमिति धम्मे रती करणीया, अविय-लहूसगभोगनिमित्तं पराइयधणंपरा जओ मणुया । विसयसुहविप्पमुक्का य इअ भो धम्मे रतिं कुणह ॥१॥ ततियं ठाणं गयं । तहा-‘इमे अ मे दुक्खे न चिरकालोवट्ठाई भविस्सई’ तेण ओहाणुप्पेहिणा एवं चित्तियव्वं, जहा इमेति जं सारीरमाणसं परीसहोदएण दुक्खमुप्पन्नं तं पच्चक्खं काऊण, चसहो न इमं दुक्खं निदिसइ सुहेण विसेसयति, ‘मे’ इति अप्पाणं निदिसइ, दुक्खं अरइकराणिज्जं, चिरं—पधुतो काले, ण चिरं अचिरं, अचिरमुवट्ठाणं जस्स तं अचिरकालोवट्ठाती तं च, अब्भासा जोगोपचिएण धिइवलेण परीसहाणीतं जिणिऊण सान्नि- हियसामंतमंडलो इव राया सुहं संजमरज्जे पधुत्तणं करेइ, इह पुण परीसहपराजियस्स नरगादिसु दुक्खपरंपरगतो अतो धम्मे रमियव्वं, अविय-परीसहा उदिज्जंति, नवधम्माणं विसेसओ । जम्हा दुक्खमणा तमनिच्छमाणा रमह धम्मे ॥ १ ॥ चउत्थं पदं गयं । किंच—‘ओमजणपुरस्कारे’ ओमो नाम पागयजणो, ओमजणा सकार इव सकारो, ओमजणस्स ओमजणाओ पुर सकारो ओमजणपुण(र)सकारो, धम्मे द्विओ पधूणवि पुज्जो भवइ, तओ वयट्ठिओ पुणमन्ताणमवि अब्भुट्ठाणासणंजलिपग्गहादीहिं सेवाविसेसेहिं पुकारेइ, एवं ओमजणपुरकारो, अहवा अग्गओ करणं पुरकारो, धम्मचुओ रुढेहिं रायपुरिसेहिं पुरओ कलओ वेट्ठिइमादिणि काराविज्जइ, एवं ओमजणाओ परिभवकयं अपुरकारं पावइ, एस ओमजणाओऽपुरकारो ओमजणऽपुरकारो धम्माओ चुयस्स जेणं संभवइ परं परिभवधरणाय तेण धम्मे रती करणिज्जा, पंचमं पदं गयं । तहा—‘वंतस्स पडिआयणं’ अब्भव- हरिऊण सुहेण उग्गिसियं वंतं तस्स पडिपीयणं ण तहा विहियं भवति, तं अतीव रसे न बलं, न उच्छाहकारी, विलीगतया य चतुर्था- दीनित्रीणि ॥३५४॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. रतिवाक्ये ॥३५६॥ केहिं विप्पियसमग्गो । तम्हा धम्मंमि रतिं करेह विरता अधम्माओ ॥ १ ॥ णवमं पदं गतं । ‘संकप्पे से वहाय होइ’ आयंको सारीरं दुक्खं, संकप्पो माणसं, तं च पियविप्पयोगमयं संवाससोगभयविसादादिकमणेगहा संभवति, ‘इट्ठाणवि सज्जा(व्वा)णं सहफरिसरसरूवगंधाणं । कम्माणुसहंमि रती धम्मे भयवियोगविरसंमि ॥१॥ दसमं पदं गतं । एवं विसेसेण धम्मे रती करणीया, जतो ‘सोवक्केसे गिहवासे’ सह उवक्केसेहिं सोवक्केसो, सो पुण सीउण्हभयपरिस्सहकिसिपसुपालवाणिज्ज- सेवादयो णेहलवणतंदुल्लायणसमुप्पयणं बहु परिकेसेहिं इति सोवक्केसे गिहवासे, तमेवंभूतं जाणिऊण धम्मे रती करणीया, अविय ‘विच्चिविहाणममत्तं सावक्केसेण जओ य सोकसो । मोत्तूण घरावासं, तम्हा धम्मे रतिं कुज्जा ॥१॥ एकारसमं पदं गतं । किंच- ‘निरुक्केसे परिआए’ निग्गओ उवक्कोसा जओ निरुक्केसे सो पुव्वभाणिओ, उवक्केसे विहरिओऽलं सव्वओ अओ सारयाओ वा गमणं पव्वज्जापरियाओ, तत्थ उवक्केसा ण संभवतीति धम्मे रती करणीया । निरुक्केसो वासो परिआओ जे इहेव पच्चक्खं । परिआए तेण रतिं करेह विरया अधम्माओ ॥१॥ चास्सरमं पदं गतं ॥ किंच—‘बंधे गिहवासे’ बंधणं बंधो, गिहेसु वासो गिहवासो, सो पुण तदारंभणपवत्तस्स कोसिगारकीडगस्सेव कोसगेण अट्ठविहकम्ममहाकोसेण संभवइ बन्धो, तओ तेण बंधहेउभूतातो गिहवासाओ विरएण धम्मे रती सया करणीया, अविय—‘थे(घ) रचारगवद्धाओ कम्मट्ठगबंधहेतुभूताओ । विरमह रती य धम्मे करेह जिणवीरभ- णियंमि ॥१॥ तेरसमं पदं गतं । किंच ‘मोक्खे परिआए’ परिआओ पुव्वभाणिओ, तंमि परिआए सति अट्ठविहकम्मनिगल- संकलासु ज्ञाणपयोगपरिसुद्धिच्छिन्नासु जीवस्स सतो भवति मोक्खो, जेण परिआओ(अट्ठविहकम्मनिगला साहू छेएइ सुद्धज्ञाणाओ सो) मोक्खो तेण रइ धम्मे जिणदेसिए कुणह ॥१॥ चोदसमं पदं गतं । किंच—‘सावज्जे गिहवासे’ सह वज्जेण सावज्जो, एकादश दीनि षड् ॥३५६॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी- रतिवाक्ये ॥३५७॥ वज्जं गरहितं, अविय—‘पाणवंधं मुसावादे अदत्तमेहुण परिग्गहे चैव। एवं वज्जं सह तेण होति तम्हा उ सावज्जं॥१॥पण्णरसमं पदं गतं। किंच-‘अणवज्जे परिघाए’ पाणाइवायादिरहिओ अणवज्जो परिघाओ, अविय—‘सावज्जो गिहवासो अणवज्जो जेण होइ परिघाओ। तेण ण रज्जे मोक्खं ताती धम्मेऽहं रइं कुणह॥१॥ सोलसमं पदं गतं॥ ‘बहु साधारणा गिहीणं काम-भोगा’ साहारणं सामणं, बहुहिं चोरदुड्ढरायकुलादीहिं सामणं बहुसाधारणा, एवंविधा गिहीणं कामभोगा, अविय ‘ण य तित्ति कामभोगा, बहुजणसाधारणा य(इमे)कामा। तम्हा णीसामचे होउ रती ते थिरा धम्मे॥१॥सत्तरसमं पदं गतं। ‘पत्तेय पुद्गपायं पत्तेयं नाम जे परिनिमित्तं पुत्तदाराइ, संविभागेण य, एवं पुत्तमि “दारइणं अत्थे कमस्स पत्तेयमेव संबंधं। मोत्तूण दारमार्हणि तेण धम्मे रइं कुणह ॥ १ ॥ कामभोगाण आहारभूया आउधम्माणो, ते य जीवियं, अओ ‘अणिच्चं मणुयाण जीविए’ अप्पणोऽवि रोगा नियतं निच्चं, अणिच्चं मणुयायाए, ण(णु) च तेसिं जीवितमणिच्चं, खणिकया विससओ दिट्ठतेण निदरिसिज्जइ ‘कुसग्गजलबिन्दुचंचले’ दम्भजाइया तणविसेसा कुसा, तेसिं अग्गाणि कुसग्गाणि सुसहासुसहुमाणि भवंतीति, तेसिं ओसाजल-बिन्दवो अतिचंचला, मंदेणावि वाउणा पेरिता पडंति, तहा मणुयाण जीविए, अप्पणोऽवि रोगाइणा उवक्कमविसेसेणं संखोभिए विलयमुपयाति, अतो कुसग्गजलबिन्दुचंचले, एवं गते जीविए को कामभोगाभिलासं करेज्जाति धम्मे ठिती करणीया, अविय “जीवियमवि जीवाणं कुसग्गजलबिन्दुचंचलं जम्हा। का मणुयमवमि रइं ? धम्मे य तहा रइं कुणह ॥ १ ॥ कुसग्गजलबिन्दु-चंचलस्सावि अत्थे ‘बहुं च पावं कम्मं पगडं, पावाणं च खलु भो ! कडाणं कम्माणं पुट्ठिं दुच्चिन्नाणं दुप्पाडिक्का-ताणं चेइत्ता भोवखो, सत्थि अवेइत्ता, तवसा वा झोसइत्ता’ बहु-पभूतं, चतदो सगुच्चये, खलुसदो विसेसणे, किं विसेस- सप्तदशा- दिनी द्वे श्रुतिगाथाः स्थानानां ॥३५७॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. रतिवाक्ये ॥३६०॥ काऊण रायामच्चादीनामवि वंदणारिहो होऊण सीलपरिक्खलणाणंतरं पच्छा सीलगुणरहित इतिकाऊण अवंदिओ (मो) सक्कारस- म्माणरहिओ ‘देवया व चुआ ठाणा’ देवता इति पुरंदरं मोत्तूण अण्णो देवयिसेसो, सट्ठाणाओ परिवडंतो माणुसं महादुक्खम- णुभवइ, वासदो उवमाणत्थस्स इवसदस्म अत्थे, जहा सा देवता ठाणाओ चुया एवमेव सो संजमावसप्पणातो अणंतरं-पच्छा मणसा सव्वओ तप्पइ परितप्पइ ॥ किंच-‘जया अ पूइमो होइ०’ ॥४८५॥ सिलोगो, जयासदो चसदो य पुव्वभणिया, ‘पूइमो’ पूयणारिहो सीलमंतोत्तिकाऊण रायादीणं पुज्जो होऊण ओहावणाओ अणंतरं सीलसुमो(चुओ)त्तिकाऊण अपूइमो भवइ अ, तहा व अपूइमो पूयणसहलासिओ तस्समावे ‘राया व रज्जपम्भट्ठो’ राया इव राया, जहा कोई मंडलियो महामंडलियो वा सव्वभूमि- पात्थिवत्तणं पाविऊण पुणो अपुण्णोदयमणुभवमाणो केणावि कारणेण रज्जाओ अच्चत्थं पम्भट्ठो परितप्पइ तहा य सो पूयणिओ अपुज्जत्तमुवगओ समणधम्मपरिम्भट्ठो पच्छा तप्पइ ॥ ‘जया अ माणिमो होइ०’ ॥४८६॥ सिलोगो, जहा इति सदो चसदो य पुव्वं व वणिणयव्वा, ‘माणिमो’ माणजोगो माणणीओ, माणिमो जहा सीलप्पसाएण मइयामवि माणणीओ होऊण ओघाइओ अतहाभूओ पच्छा असन्माननीयभावाधिगमात्, ‘सिद्धिच्च कच्चडे छट्ठो’ रायकुललद्धसंमाणो समाविद्धचिट्ठणो वणिगममहत्तरो सेट्ठी, वाडवोपमकूडसक्खिसमुवभावियदुक्खललव्ववहारतं कव्वडं, जहा सिद्धो तंमि छट्ठो विभवहरणाइसंदूतिओ परितप्पइ, अहवा कव्वडं कुनगरं, जत्थ जलत्थलसमुवभवविचित्तमंडविणियोगो णत्थि, तंमि वसियव्वं, रायकुलनियोगेण छट्ठो कयविकयाभावे विभवोपयोगपरिहीणो, जहा सो तहा साधू धम्मीहिं वंदणदाणेहिं पुव्वि माणितो धम्मपरिम्भट्ठो माणणाभावे स पच्छा परितप्पइ, अंजलिपग्गहसिरिकंपआसणप्पदाणादिजोगं वंदणं, वत्थपत्तादीणा य पयाणमुवजोगं पूयणं, वंदणपूयणाणं अह स्थान- श्लोकाः ॥३६०॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ रतिवाक्ये ॥३६१॥ विसेसो । ‘जया य थेरओ होह०’ ॥ ४८७ ॥ सिलोगो, जदा जंम काले, चसहो पुव्वभणिओ, पच्छातावकारणसमुच्चये, पढमवयपरिणामेण थेरओ होह, दरं ‘समइकंतजुव्वणो’ निदरिसणं स ‘मच्छोव्व गलं गिलित्ता’ जहा जलयरसत्तविसेसो मच्छो से थोवोवजीवी बडिसामिसलुद्धो आमिसलोभेण गलमव्ववहरिऊण गलए तिकखलोहखीलमविद्धो थलेसु य णीओ पच्छा परितप्पइ, एवं सो विडिसामिसत्थाणीयमंदकामभोगाभिलासेण धम्मपरिच्चागी परितप्पइ । इहावि तस्स थेरभावे जाणि दुक्खाणि संभवंति तदुव्वपदरिसणत्थं मण्ह—‘पुत्तदारपरीकिन्नो०’ ॥ ४८९ ॥ सिलोगो, पुत्ता-अवच्चाणि, दारं-भज्जा दुविधादीहिं संबधेहिं परीकिण्णो-परिवेद्धिओ, तेहिं परिकिण्णो, दंसणचरित्तमोहमणेगविहं कम्मायाणं अन्नाणं-मोहो तस्स संताणो अव्विच्छित्ती तेण मोहसंताणेण समहिद्धिओ मोहसंताणसंतओ, निदरिसणं ‘पंकोसन्नो जहा णागो’ पंको चिक्खिल्लो तंमि खुत्तो पंकोसण्णो. जहा इति जेणप्पगारेण, ‘नाग’ इति हत्थी, अप्पोदकं पंक्कवहुलं पाणि हत्थी अवगाढो, अणुवल्लभ-पाणितं खुत्तो चिंतेइ-किमहमत्थऽवतिन्न इति परितप्पइ, तहा सो ओधाइय थेरभावे पुत्तदारभरेण पोसणासमत्थो धाउपरिक्खय-परिहिणकामभोगपिवासो पच्छाऽऽगतसंवेगो संजमाहिकारणट्टचेट्टो बहुविहं तप्पमाणो विसेसेण इमं ओहावणपच्छाणुताव-गयं चिंतेइ—‘अज्ज आहं गणी हुंतो०’ ॥ ४९० ॥ सिलोगो, अज्ज इति इमंमि दिवसे, तावसहो अवधारणे, इमं दिवसमइ-कमिऊण, अहमिति अप्पणो णिदेसे, अन्ने पढंति-‘अज्जचेहं’ अज्जत्ते अहं विच्छूढपइन्नजोगी गणी, ‘अज्जत्ते अहं ाज्ज हुंतो’ अहवा गणो जस्स अत्थि सो गणी-सूरीपदमणुप्पत्ते णाणदंसणचरित्तित्तावि)विधगुणतवोविहाए जोगेहिं अणिच्चयादिभावणाहि य ‘भाविअप्पा बहुस्सुओ’ चि जइ ण ओहावंतो तो दुवालसंगगणिपिडगाहिज्जणेण अज्ज बहुस्सुओ, किं पुण ‘जइ अहं रमंतो अवधावित पश्चात्तापः रत्यरति फलंच ॥३६१॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी रतिवाक्ये ॥३६२॥ परिआए' जदीति अतिक्रान्तां क्रियामाकांक्षति, अहमिति अप्पाणमेव णिहिसति, रमंतो इति रं विदंतो, परियाओ णाम पव्वज्जा, बहुत्तमितिकाउं सा विसोसिज्जति 'सामण्णे', सो य समणभावो तत्थ विसो जिणदेसिए, न बोडियनिण्हगाहसच्छं- दगहणं। ओहाणुप्पेहिस्सेव मतीथीरीकरणत्थमिदमुच्यते—'देवलोगसमाणो' (अ वृ.) ॥४९१॥ सिलोगो, देवाणं लोगो देवलोगो, देवलोगेण समाणो देवलोगसमाणो, समाणो तुळो। जहा तंमि देवलोगे देवा रतिसागरोगाढा गतंमि कालं न याणंति, विविहाणि य माणसाणि दुक्खाणि ण संभवन्ति, तहा पव्वज्जाए विधिइ अप्पमओ तेण देवलोगसमाणो, तुसहो विसेसयति, किं विसेसेति ? अरतीतो रतिं, परियागरइयाण, तव्विवरीयरताण य, तुसहो तहेव रतीओ अरं विसेसयति, निदरिसणं मणुस्सो, दुक्खाणुगमण 'महानरयसारिसो' महानिरओ जो सव्भावानिरओ तउ मणुस्सदुक्खो उवयारमेत्तं, अहवा सत्तमादिमहानिरओ, तेण सरिसो-स- माणो दुक्खो जस्स सो महानिरयसारिसो, एवं अरयस्स सामणपरियाए, सामण्णे रयाणं च सुहदुक्खसहाणोपमाणं भणियं अरयाणं, एयस्स चैव अत्थस्स उवसंहरणोवदेसो समुण्णीयते —'अमरोवमं जाणिअ' ॥४९२॥ सिलोगो, मरणं मारो न जेसिं मारो अत्थि ते अमरा, अमराणं सोक्खं अमरसोक्खं, अमरसोक्खेण उवमा जस्स तं अमरसोक्खोवमं, उत्तरपदलोपे कअे अमरोवमं, 'जाणिय' जाणिऊण, सोक्खस्स भावो सोक्खं 'उत्तमं' उक्किहुं, देवलोगसरिसं सोक्खं भवइ रताणं परियाए, एवं जाणिऊण अरतिं च विव- ज्जेऊण परियाए रमियव्वन्ति, तहा 'अरयाणं' ति उत्तरपदेण संबज्झइ, तं पुण इमं 'णिरयोवमं जाणिअ दुक्खमुत्तमं' तहेति तेणप्पगारेण जहा रयाण सुरसुक्खसरिसं, तहेव अरयाणं नरगदोसोवमं दुक्खमुत्तमं जाणिऊण रमेज्ज-सामण्णे धितिं उप्पाएज्जा, 'तम्हा' इति हउवयणं, रयारयाणं सुहदुक्खपरिण्णाणहेऊ, एतेण कारणेण परियाए रमिज्ज, एवं पंडिओ भवइ, एवं परियाय- रतारत- सुखदुःखे ॥३६२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णि रतिवाक्ये ॥३६३॥ रत्नां सुहं अस्याण दुक्खं जाणिऊण इह भवे चेव परभवपरिहारिया धम्मे रई करणीयेति । तदत्थमेवमुवदिसति-‘धम्माउ भट्टं सिरिओ०’ ॥४९३॥ वृत्तं, दसविहो साहुधम्मो पुव्ववणिओ, तं उभयधम्माओ भट्टं, सिरि रुल्ली सोमा वा, सा पुण जा समण- मावाणुसुवा सामणसिरी ताए परिभट्टं, सिरिओऽववेयं तं धम्मसिरीपरिच्चत्तं, सिरिविरहे एस दिट्ठतो—‘जल्लगिगविज्झाअभि- वडप्पतेअं’ जहा मथसहे सुसमीहासमुदये वसारुहिरमहुधयाइहिं हुयमाणो अगगी संभवदिच्चिओ अहितं दिप्पइ, इवणावसाणे परिविज्झाणेसु अंगारावत्थो अप्पतेयो भवति, एवं ओहाविओ समणधम्मपरिच्चत्तो अप्पतेओ भवइ, अओ तमेवंविधं संतं हीलयंति णं दुव्विहिअं कुसीला’ ही इति लज्जा, लज्जं वयंति हीलंति-हेपयंति, विहिओ णाम उप्पाइओ, सो सिरिऽववेयो हीलणाय उप्पाइओ, दुट्ठ विहिओ, किं तेण उप्पासितेण ? ओ एवं निन्दाभायणं, तमेवंविधं संतं हीलयंति णं, तमेवं गयं हीलंति, कुच्छियसीलं कुसीलं, जहा कोइ पयावहीणो हीलिज्जइत्ति, निदारिसणं ‘दाहुडिअं घोरविसं व नागं’ अगदंते परियस्स गतो दसणविसो दाहा, ता य अवणीया जस्स सो दाहुडिओ तं, घोरं विसं जस्स सो घोरविसो, जहा घोरविसं अहितुडिगादि समुट्ठिआ विसादाढं, वासहो उवमारुवस्स इवसइस्स अत्थे, जहा घोरविसं उत्तरकालमुट्ठियदाढं निव्विसोऽयमिति जणो परिभवइ नागं, णागो णाम सप्पो, तं दुव्विहिअं कुसीलं समणधम्मपच्चोगलितं दुव्वयणेहिं हीलंति, ओहाइयस्स इह भवे लज्जणादोसो भणिओ । इदाणि इह भवे परत्थ याणेगदोससंभावणत्थं उण्णीयते, जहा-‘इहेवऽधम्मो अयसो अकित्ती०’ ॥ ४९४ ॥ वृत्तं, इह हमंमि मणुस्सभवे, एवसहो अवधारणे, एयं अवधारयति-अच्छउ ताव परलोमो, इहेव दोसो अहम्मो अयसो अकित्ती, जं समणधम्मप- रिच्चत्तो छकायारंभेण अपुनमायइ-रयए, अधम्मो-सामणपरिच्चागो अयसो य, से जहा समणभूतपुव्वो इति दोसकिच्चणं, अवधा- वनफलं ॥३६३॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२- ४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६- ५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः धीदश- वैकालिक चूर्णी. रतिवाक्ये ॥३६४॥ अकित्ती, अकित्ती जहाणुरुवभूमिभागऽगुणवयणं, जसो अणुमुहं, परेण अ गुणसंकित्तणं कित्ती तं, जसकित्तिविसेसो, किंच— ‘दुण्णामगोत्तं च पिहुज्जणंमि’ कुच्छितं नाम दुण्णाम पुराणादिकं जोणियमारूढो तं गूयइ-अवस्स णीयजातीओ विति, दुसहो कुच्छिअत्थे पउत्तो, उभयगामी विसिद्धनाणविरहिओ सामन्नजणवओ पिहुज्जणो, एते अधम्मादयो उद्धावियस्स पिहुज्जणेण दोसा संभावज्जंति, किं पुण उत्तमज्जणे?, तस्स दोसदूसियस्स धम्माओ परिब्भट्टस्स सरीरसुहदारासएण मूढस्स विसेसेण पाणातिवाय- अधम्मसेविणो ‘संभिनचित्तस्स’ सरीरसीलं सामयभिण्णं, चसहो पुव्वानिद्धिक्कारणसमुच्चये, तस्स धम्मपरिच्चत्तस्स, अहम्म- सेविणो, समवलंबितसंभिनचारित्तस्स य रयणापभिइसु कम्मसंभारगरुययाए अहो गमणमिति हिहओगती, अयं च समणधम्मो परिच्चागे अहम्माय, अजसाकित्तीदुन्नामगोयदुग्गइगमणेहिंतो पावयरो पच्चवाओत्ति, तब्भासणत्थमुक्कीयते ‘भुंजित्तु भोगाहं’ ॥४९५॥ वृत्तं, भुंजित्तु-अभवहरणादिणा उवजीविऊण, दाराभरणभायणच्छादणादीणि मोत्तच्चाणि भोगाणि, तो दाणदायादग्गि- रायाइणं एकदव्वाभिनिविद्धाणं बलात्कारेण ‘पसज्झचेअसा’ णाम जाणंतोऽवि विवागं छिन्नालमरालो इव घायसहणं काउं वेगेण गासभवणमिव चेअसा तस्स अणुरूवं तहाविहं करेऊण कहुअपुण्णमसंजमं तेसु च जाणिऊण बहं, मरणसमए गइं च गच्छेज्जा, अणाभिज्झयं गतिं च नरगादि एतेण सीलेण गच्छेज्जा, अभिलासो-अभिज्झअं सो जत्थ समुप्पण्णो तं अभिज्झितं, अणाभिलसित- मणभिप्पेयं गइं च गच्छे, तस्स माइणो ‘बोधी य से नो सुलहा पुणो पुणो’ अरहतस्स धम्मस्स उवलद्धी बोधी, सा से णो सुलमा, चसहेण अणाभिज्झअगतिगमणादि संसयणं, पुणो पुणो इति न केवलमणंतरभवे, किन्तु?, भवसएसुवि, जाणि ओहाणुप्पे- हिमतिथिरीकरणत्थमहारस एयाणि दुस्समाए दुप्पजीविमाइणि समासओऽभिहिताणि तेसिं वित्थरणभया ‘जयाय चयइ धम्मं’ए- अवधा- वनफलं ॥३६४॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [१], उद्देशक [-], मूलं [१/५०६-५२४] / गाथा: [४८२-४९९/५०६-५२४], निर्युक्तिः [३६१-३६९/३५९-३६७], भाष्यं [६२...]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥४८२-४९९॥ दीप अनुक्रम [५०६-५२४]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी. रतिवाक्ये ॥३६६॥ आणिहिट्टस्स. एवमिति पगारोपदरिसणत्थं, भगवं अज्जो सज्जंभवो आह-एतेण पगारेण अभिरणवि संजमे अरइअहियासणं प्रति अप्पा इति चित्तमेव, तुसहो संजमं विससयति, भवेज्ज, जति एवं होज्ज णिच्छयो-एकम्मकयो धवसायो, सो एवं कयनिच्छयो ‘चइज्ज देहं न हु धम्मसासणं’ चएज्जत्ति वा जहेज्जत्ति वा एगट्ठा, देहो-शरीरं, ‘ने’ ति प्रतिषेधः, चसब्बो अवधारणे, सासिज्जत्ति जीवादि पदत्था जेण तं सासणं, धम्मस्स वा सासणं धम्मसासणं, एवं कयववसाओ जो देहसंदेहे धम्मसासणं न छइडेज्ज धम्मट्ठिइधायिणियनिच्छओ ‘तं तारिसं नो पइलेंति इंदिया’ तमिति निहेसवयणं विम्हए वा, तारिसमिति देहविणासेऽवि धम्म अपरिच्चाणिणं, इंदियत्था णो पयलेंति-णवि कंपयंति, धम्मचरणाओ न चलेंतीति, सोयाइया इंदिया, सदादयो इंदियत्था, आह-कहं किं चालयतीति?, भणइ. ‘उर्वित्त्वाया उ (व) सुदंसणं गिरिं०’ उवागच्छंता वाया प्राणादयो, वा इति उवमाअत्थे, सुदंसणसेलराया मेरू, जहा वाया उवेंता मेरुं ण य चालयंति तहा तं सुणिच्छित्तमाणसं इन्दियत्था ण पचालेंति । इदाणि सुविदि-यट्ठारसट्ठाणेण संजमे अरइ उज्झिऊण धिइसंपत्तेण जं करणीयं तदुपदेसत्थं भणइ—‘इच्चेव संपास्सिअ बुद्धिमं नरो०’ ॥४९९॥ वृत्तं, इतिसहो उपदरिणत्थे, जं अज्झयणे आदावारम्म उवदिट्ठं तमवलोकयति, एवसहो पायपूरणे, पच्चवलोकणनियममाह-संपास्सिअ-एकीभावेण अवलोकणं, बुद्धि जस्स अत्थि सो बुद्धिमान् नरो, मणुस्सोत्तरीया धम्मा इति तस्स गहणं, एवमालोकेऊण ‘आयं उवायं विविहं विद्याणिग्या’ आओ विन्नाणादीण आगमो, उवायो तस्स साहणं अणुव्वातं, आयं उवायं विविधं-अणेगप्पगारं च जाणिऊण, एवं संपास्सिऊण आयोवायकुसलेन सव्वह करणीयं ‘कायेण वाया अनु माण-सेणं’ कायो शरीरं, वाया अभिवायणं, माणसं माणसमेव, एतेहि कारणेह जहोवदेसेण पवचेण सुनिश्चामितेहि ‘निगुत्तिगुत्तो अवधा- वनफलं ॥३६६॥

[illegible]

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [२], उद्देशक [-], मूलं [१...] / गाथा: [५००-५१५/५२५-५४०], निर्युक्तिः [३७०/३६८-३६९], भाष्यं [६३]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥५००-५१५॥ दीप अनुक्रम [५२५-५४०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ. २ चूला ॥३६८॥ सकललोकालोकावभासकं केवलशब्देनाभिधीयते, केवलं, नपुंसकविवक्षायां सु, अतोऽस्मि (पा० ७-१-२४) इत्यम्भावः, केवल- मस्यास्तीति ‘अत इनिठना’ विति (पा० ५-२-११५) इति ग्रन्थयः सुपलुक् ‘यस्येति’ (पा० ६-४-१४८) अकारलोपः, परग- मनं, केवलिना ‘कर्तृकरणयो’ रिति (पा० २-३-१८) तृतीया, तस्या एकवचनं टा, अनुबन्धलोपः, परगमनं केवलिना, अतस्तेन भगवता, शास्त्रगौरवसमुत्पादनार्थं, भाषितं-अभिहितं व्याख्यातमिति, न केनइ तच्चत्तेणं पुण्णसमुत्पायणत्थमिति, ‘जं सुणित्तु’कं?, चूलियत्थवित्थरं, सोऊण ‘सपुण्णणं’ सह पुणेण सपुण्णो तं सपुण्णं, पुनाति सोधयतीति पुण्णं, सो सइ तम्मि सम्मदंसणाइ ‘धम्ममे उप्पज्जए मइ’ तम्मि चरित्तधम्ममे य उप्पज्जइ-संभवति मती-चित्तमव, तं सद्धाजणणं चूलियासुयनाणं (सुणित्तु) सपुण्णमेव विसेसेण चरित्तधम्ममे मती भवति, परिण्णा पढमसिलोणेण भाणिया, चूलियासुयं केवलिभासियं पवक्खामि, अहिणवधम्मस्स सद्धा- जणणत्थं, तत्थ चरियागुणा य नियमा णेमे भाणियच्चा, एवं तु सुहुमत्थपाडपायणमिति निदरिसणत्थं ताव इमं भण्णइ— ‘अणुसोअपट्ठि०’ ॥ ५०१ ॥ गाथा सूत्रं, तत्थ अणुसोअ पच्छाभावे, सोतमिति पाणियस्स निण्णपदेसाभिसप्पणं, सोतो पाणियस्स निण्णपदे गमणपवत्ते जं तत्थ पडियं कट्ठाइ तंनिसितं से सोयमणुगच्छतीति अणुसोतपट्ठिए, एवं अणुसोयपट्ठियत्ति सव्वलोए एत्थ दट्ठव्वो, अणुसोयपट्ठित्त इव जहा कट्ठादीणं नदिपट्ठियाणं निन्नपएसपट्ठिए तव्वेगाहयाणं, अणुस्सोए लोए अणुकूले पच्चणुसुहगमणं, एवं बहु सोऊण, सोवि बहुजणो, जेण संजएहिंतो असंजता अणंतगुणा, जहा तेसि पाणियवेगाहिया- णं महावहणं तहा बहुजणस्सवि सद्धफरिसरसरूवगंधअनुगयाणं अणादिविसयाणुकूलपवणणेणाणुसोतवेगेण संसारमहापायाल- पडणमेव अणुसोयपट्ठिओ बहुजणो, तंमि अणुसोयपट्ठिअवहुजणंमि किं करणीयमिति ? ‘पडिस्सोअलद्धलक्खेणं पडिसोय- अनुश्रोतः प्रतिश्रोतसी ॥३६८॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [२], उद्देशक [-], मूलं [१...] / गाथा: [५००-५१५/५२५-५४०], निर्युक्तिः [३७०/३६८-३६९], भाष्यं [६३]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥५००-५१५॥ दीप अनुक्रम [५२५-५४०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णी २ चूला ॥३७२॥ एवं अट्ट मंगा, तत्थ पढमो मंगो पसत्थो, सेसे निवारेऊण गहणं, गमणं वा, एवं जई जएज्जा, आइओमाणविवज्जणा, वियडस्स संगे पाङ्गणे य णियमेण कुच्छिया वमणे सदोसा इति तदुपदरिसणत्थमिदगुण्णीयते-‘अमज्जमंसासि अमच्छरीआं’ ॥५०६॥ सिलोगो, चंडवं जो जातिमयणीयं मयकारि वा मज्जं-महुसीधुपसण्णादो, प्राणिनां सरीरावयवो मांसं, तं पुण जलथलखहचराणं सत्ताणं, तमुभयं जो भुजइ सो मज्जमंसासि, अकारेण पडिसेहो कीरइ, अमज्जमंसासिणा भवित्तवं, मच्छरो-कोहो सोऽवि से मज्जपाणे संभवइ, विणावि महुमज्जेण अमच्छरी भवेज्जा वक्कसेसं, विकृतिं विगतिं वा ण विगतिं णिविगतिं, मज्जमंसा पुण विगती, तदनुसारेण सेसविगइओ नियमिज्जंति, ‘अभिक्षणं निव्विगइं गया चे’ति अप्पो कालविसेसो अभिक्षणमिति, अभिक्षणं णिव्वियं करणीयं, जहा मज्जमंसाणं अच्चंतपडिसेधो(न)तहा बीयाणं, केई पढंति—‘अभिक्षणं णिव्वितीया जोगो पडिव-ज्जियव्वो’ इति, अभिक्षणं काउस्सगकारी, काउसग्गे ठियस्स कम्मनिज्जरा भवइ, गमणागमणविहारइसु अभिक्षणं काउसग्गे ‘सज्जसियं नीससियं’ पढियव्वा वाया, तहा ‘सज्जायजोगे पयतो भवेज्ज’ वायणादि बज्झो सज्जाओ तस्स जं विहाणं आयंविहाइजोगो तंमि वा जो उज्जमे एस जोगो, तत्थ पयत्तेण भवियव्वं, भवेज्जा इति अंतदीवगं सव्वेहिं अभिसं-ज्जते, अमज्जमंसासी भवेज्जा एवमादि, आह-णणु पिंडेसणाए मणियं ‘बहुअट्ठियं पोग्गलं आणिमिसं वा बहुकंटकं ?’, आयरिओ आह-तत्थ बहुअट्ठियं णिसिद्धमितिऽत्थ सव्वं णिसिद्धं, इमं उस्सगं सुत्तं, तं तु कारणीयं, जदा कारणे गहणं तदा पडिसाडि-परिहरणत्थं सुत्तं धेत्तव्वं-न बहुपडि(अट्ठि)यामिति, मज्जं पातुकामस्स पीए य सज्जायादि परिहाणि, इमोसिं च अकारेण सेवानिसेहण-णिमित्तं भण्णइ—‘ण पडिन्नविज्जा सयणःसणाइं’ ॥ ५०७ ॥ सिलोगो, णकारो पडिसेधे वट्टइ, पडिन्नवणं पडिसेहणमिति, अमयमां- साशि- त्वादि ॥३७२॥

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) चूलिका [२], उद्देशक [-], मूलं [१...] / गाथा: [५००-५१५/५२५-५४०], निर्युक्तिः [३७०/३६८-३६९], भाष्यं [६३]
प्रत सूत्रांक [१] गाथा ॥५००- ५१५॥ दीप अनुक्रम [५२५- ५४०]	मुनि दीपरत्नसागरेण संकलिताः आगमसूत्र - [४२], मूलसूत्र - [०३] “दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं जिनदासगणि-रचिता चूर्णिः श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ चूला ॥३७९॥ जोइओ सुरबिखओ, तहा नियमिओ सब्बदुहाणं सारीरमाणसाणं मुच्चतीति, स सब्बदुक्खरहिओ णिव्वाणमणुत्तरं संतिमुवेति, इतिसहो अज्झयणपरिसमत्तीए, वेमि तित्थगरवयणाणुगरिसणे । बित्थियचूलियज्झयणमेवं सम्मत्तम् ॥ २ ॥ ॥ विवित्तचरिआ चूला समत्ता ॥ ➡ चरिया य परिविवित्ता असीयणं जो य तस्स फललाभो । एते विसेसभणिया पिंडत्था चूलियज्झयणे ॥१॥ सयलदसवेयालियस्स अत्थोवदरिसणत्थं तु । जं आदिओ उदिट्ठं ‘जेण व अं वा पडुचेइ’ ॥२॥ सुत्तकारगस्स पडिणिरस्सणणिमित्तं इमा णिज्जुत्ती गाहा भणिया—‘छहिं मासेहिं अधीतं’ गाथा, ‘छहिं’ ति परिमा- णसहे ‘मासेहिं’ ति कालपरिसंखाणं, तेहिं छहिं मासेहिं धीतं-एत्तिएण कालेण पढियं, अज्झयणसहो सब्बमि दस (वे) यालिए वट्टइ, अहवा अज्झयणमिदं तु जं इमं अपच्छिमं चूलियज्झयणं, एयंमि आणुपुन्वीए अधीते सकलं सत्थं अधीतं भवति, ‘अज्जमणगेणं’ अज्जसहो सामीपज्जायत्रयणो, मणओ पुव्वभणिओ, तेण एत्तिउवेओ छम्मासपरियाओ अह कालगओ, अहसहो अज्झयणाणंतरं, ‘कालगओ समाधीए’ जीवनकालो जस्स गतो समाधीएत्ति, जहा तेण एत्तिएण चैव आराहणा भण्णत्ति ॥ ग्रन्थाग्रं ७९७० (७५७६) ॥ उपसंहारः ॥३७९॥
➡	चूलिका -२- परिसमाप्ता अथ उपसंहारः क्रियते

आगम (४२)	“दशवैकालिक”- मूलसूत्र-३ (निर्युक्तिः+ भाष्य +चूर्णिः) उपसंहारः गाथा ॥२॥
प्रत सूत्रांक [-] गाथा ॥-॥ दीप अनुक्रम [-]	श्रीदश- वैकालिक चूर्णौ २ चूला ॥३८०॥ दसवेयालियचुण्णी संगत्ता ॥३८०॥
	मुनिश्री दीपरत्नसागरेण पुनः संपादिता (आगमसूत्र ४२) “दशवैकालिक-चूर्णिः” परिसमाप्ताः

नमो नमो निम्मलदंसणस्स
पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरुभ्यो नमः

42

पूज्य आगमोधधारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधिताः संपादिताश्च
“दशवैकालिक सूत्र” [निर्युक्तिः एवं जिनदास गणि-रचिता चूर्णिः]

(किंचित् वैशिष्ट्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुनः संकलिता
“दशवैकालिक” निर्युक्तिः एवं चूर्णिः नामेण
परिसमाप्ताः

Remember it's a Net Publications of 'jain_e_library's'